मार्च, 2020
I.S.S.N. : 2457-0478

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

Cover-II

संपादक-मंडल

डा. जी. नारायण राजू,
सचिव, विधायी विभाग

डा. रीटा वशिष्ठ, अपर सचिव,
विधायी विभाग, प्रभारी वि.सा.प्र.

श्री एस. आर. ढलेटा,
सेवानिवृत्त संयुक्त सचिव एवं
विधायी परामर्शी, विधायी विभाग

डा. सुरेन्द्र कुमार शर्मा, प्रिन्सिपल,
विधि विभाग, डी आई आर डी, गुरु
गोविंद सिंह इन्द्रप्रस्थ विश्वविद्यालय

श्री ए. के. अवस्थी,
सेवानिवृत्त प्रोफेसर एवं डीन, विधि
संकाय लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

श्री एल. आर. सिंह,
प्रोफेसर एवं डीन इलाहाबाद
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

श्री कृष्ण गोपाल अग्रवाल,
सेवानिवृत्त संपादक, वि.सा.प्र.

श्री अनुराग दीप,
एसोसिएट प्रोफेसर,
भारतीय विधि संस्थान

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय,
प्रधान संपादक

श्री कमला कान्त,
संपादक

श्री अविनाश शुक्ला,
संपादक

श्री असलम खान,
संपादक

सहायक संपादक	: श्री पुण्डरीक शर्मा
उप-संपादक	: सर्वश्री महीपाल सिंह और जसवन्त सिंह
परामर्शदाता	: सर्वश्री दयाल चन्द ग्रोवर, महमूद अली खां और विनोद कुमार आर्य

ISSN 2457-0478

कीमत : डाक-व्यय सहित

एक प्रति : ₹ 125/-

वार्षिक : ₹ 1,300/-

© 2020 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

प्रधान संपादक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा..... द्वारा मुद्रित ।

आई.एस.एस.एन. 2457-0478

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

मार्च, 2020 अंक - 3

प्रधान संपादक
डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय
संपादक
अविनाश शुक्ला

विधि साहित्य
प्रकाशन

(2020) 1 सि. नि. प.

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

Online selling of law Patrikas/Books is available on
Website ⟹ https://bharatkosh.gov.in/product/product

विक्रय कार्यालय : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 । दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in

संपादकीय

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका में प्रतिमाह आपके अवलोकनार्थ उच्च न्यायालयों द्वारा पारित सिविल के प्रतिवेद्य निर्णयों, जो अधिवक्ताओं, विधि छात्रों, न्यायाधीशों और अकादमीशियनों के लिए महत्वपूर्ण होते हैं, का प्रकाशन करता है । आप लोगों से प्राप्त सुझावों के आधार पर हमको अपनी पत्रिका की गुणवत्ता सुधारने और अपने कार्य को और अधिक निखारने की शक्ति प्राप्त होती है । कृपया अपने अमूल्य सुझावों से हमें अवगत कराते रहें और हमारा मार्गदर्शन करते रहें ।

इस अंक के माध्यम से आपके परिशीलनार्थ **जोसुआ सदागुरुसकी** बनाम **भारत संघ और अन्य** [(2020) 1 सि. नि. प. 368 = ए. आई. आर. 2020 बाम्बे 17] वाला मामला प्रकाशित कर रहे हैं, जो विदेशी विषयक अधिनियम, 1946 की धारा 3 के अधीन विदेशी को भारत में प्रवेश से इनकार किए जाने से संबंधित है । इस मामले में संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के विदेशी नागरिक जोसुआ सदागुरुसकी ने संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन बाम्बे उच्च न्यायालय के समक्ष याचिका फाइल करते हुए परमाधिकार की रिट की अनुतोष की ईप्सा की कि भारत में उसके प्रवेश में व्यवधान उत्पन्न न किया जाए और उसको कारण बताओ नोटिस जारी किया जाए और सुनवाई का अवसर प्रदान किया जाए और उसको भारत में प्रवेश करने के लिए अपना लिखित प्रतिवेदन फाइल करने के द्वारा अपना पक्ष प्रस्तुत करने का अवसर प्रदान किया जाए । साथ ही उसने कुछ लघु अनुतोषों की भी ईप्सा की कि उसको भारत से निष्कासन के विस्तृत कारणों के बारे में सूचित किया जाए और साथ ही वापसी उड़ान के लिए उसके द्वारा वहन किए गए 2,000 अमेरिकन डालर की रकम भी वापस दिलाई जाए । माननीय बाम्बे उच्च न्यायालय ने याचिका को खारिज करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि यद्यपि सदागुरुसकी के पास पांच वर्ष का बहु-उद्देशीय प्रवेश कारबार वीजा है और वह भारत में रोजगार के लिए प्रवेश करना चाहता है किंतु अभिलेखों के आधार पर यह साबित हो गया है कि वह पूर्ववर्ती अवसरों

पर भी भारत में वीजा में निर्दिष्ट अवधि से अधिक अवधि तक रुका रहा, किंतु उसने इस तथ्य का प्रकटीकरण अपनी याचिका में नहीं किया । वीजा की शर्तों के अंतर्गत वह भारत में रोजगार से प्रतिषिद्ध था, किंतु फिर भी वह वीजा की शर्तों का उल्लंघन करते हुए भारत में एक गैर-सरकारी संगठन में सेवारत हो गया । अत: मात्र इस कारणवश कि उसके कब्जे में बहु-उद्देशीय कारबार वीजा है, किंतु उसके पूर्ववर्ती आचरण और चूकों को देखते हुए यह अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता कि उसको भारत में प्रवेश करने से इनकार नहीं किया जा सकता ।

पत्रिका में समाविष्ट सामग्री और गुणवत्ता के संबंध में सभी पाठकों के विचार अपेक्षित हैं । अगली पत्रिका के संपादन के समय उनके विचारों पर ध्यान दिया जाएगा ।

अविनाश शुक्ला
संपादक

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

मार्च, 2020

निर्णय-सूची

	पृष्ठ संख्या
आल त्रिपुरा बुक सेलर्स एंड पब्लिशर्स, अगरतला, त्रिपुरा और अन्य **बनाम** त्रिपुरा राज्य और अन्य	320
कुमारी सुभांगी **बनाम** नाथूराम और अन्य	435
जोशुआ सदागुरुसकी **बनाम** भारत संघ और अन्य	368
भारत पेट्रोलियम कारपोरेशन लिमिटेड और एक अन्य **बनाम** आलोक प्रकाश सिंघाई और एक अन्य	402
यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड **बनाम** रफीका और अन्य	303
राजा राम **बनाम** लक्ष्मण	412
लेफ्टिनेंट कर्नल कुलदीप सिंह **बनाम** भारत संघ	295
शिखा रानी दास (भौमिक) (श्रीमती) **बनाम** अरुण भौमिक	352
सचिन्द्र चंद्र दास **बनाम** त्रिपुरा राज्य और अन्य	360

संसद् के अधिनियम

सीमित दायित्व भागीदारी अधिनियम, 2010 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ	1 – 36

पृष्ठ संख्या

आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 (1955 का 10)

– धारा 3 [त्रिपुरा खाद्यान्न (वितरण) नियंत्रण आदेश, 1972 का खंड 21] – उचित मूल्य की दुकान की अनुज्ञप्ति – 86 वर्ष के मूल लाइसेंसदार द्वारा उचित मूल्य की दुकान के चालन के प्रयोजनार्थ अन्य व्यक्ति के पक्ष में मुख्तारनामा निष्पादित किया जाना – मूल लाइसेंसदार के अलावा किसी अन्य व्यक्ति को उचित मूल्य की दुकान के चालन की अनुज्ञा नहीं होती – यह सरकार के नीतिगत विनिश्चय का अतिलंघन है – न्यायालय को सरकार के नीतिगत विनिश्चय में दखल देने या उसको प्रतिस्थापित करने की अधिकारिता प्राप्त नहीं है – लाइसेंस प्राधिकारियों द्वारा उचित मूल्य के दुकान के चालन की अनुज्ञप्ति का रद्दकरण उचित है ।

सचिन्द्र चंद्र दास बनाम **त्रिपुरा राज्य और अन्य** 360

भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 (1925 का 39)

– धारा 63(ग) [सपठित साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 68 और 106] – विल के अंतर्गत संपत्ति के कब्जे के लिए वाद – विल की निष्पादन साबित करने का भार – वसीयतकर्ता की मृत्यु विल के निष्पादन के एक माह के भीतर हो गई और उसके अंगूठे की छाप को वादी द्वारा विवादित किया गया – प्रतिवादियों ने भी अभिकथित किया कि वसीयतकर्ता का स्वास्थ्य ठीक नहीं था – जहां वसीयतकर्ता के हस्ताक्षर या उसके अंगूठे की छाप को साबित नहीं किया जाता तो विल को

पृष्ठ संख्या

कड़ाईपूर्वक धारा 63(ग) के उपबंधों के अनुसार साबित किया जाना चाहिए ।

राजा राम बनाम **लक्ष्मण** 412

– धारा 63(ग) [सपठित साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 106] – विल निष्पादन के मामले में साबित करने का भार – विल को न्यायालय के समक्ष प्रतिवादियों द्वारा प्रस्तुत किया जाना – चूंकि प्रतिवादी वसीयत को साबित कर पाने में विफल रहे, अत: विचारण न्यायालय ने साबित करने का भार वादी पर अंतरित करके तात्विक अवैधता कारित की और त्रुटिपूर्वक अभिनिर्धारित किया कि विल को सम्यक् रूप से साबित किया गया ।

राजा राम बनाम **लक्ष्मण** 412

– धारा 63(ग) [सपठित साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 68] – विल के निष्पादन का सबूत – विल के लेखक द्वारा यह अभिकथित नहीं किया गया कि विल का निष्पादन वसीयतकर्ता द्वारा दिए गए श्रुतलेख के आधार पर किया गया था और वसीयतकर्ता द्वारा उस पर अंगूठे की छाप अंकित किए जाने के पूर्व उसको पढ़कर सुनाया गया था – विल में नामित हिताधिकारी किसी भी अधिप्रमाणन साक्षी का परीक्षण कराने में विफल रहे – विल के लेखक के साक्ष्य की तुलना विल के अधिप्रमाणन साक्षियों के साक्ष्य से नहीं की जा सकती – इसलिए यह अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता कि विल को सम्यक् रूप से साबित किया गया ।

राजा राम बनाम **लक्ष्मण** 412

पृष्ठ संख्या

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59)

– धारा 166 – मृतक के आश्रितों द्वारा प्रतिकर के लिए आवेदन – मृतक सरकारी विभाग में स्थायी रूप से कार्यरत था, उसकी आयु 40 वर्ष से कम थी – उसकी आय की क्षति के रूप में वार्षिक वेतन पर सरला वर्मा वाले मामले को ध्यान में रखते हुए गुणांक 15 लागू होगा और प्राप्त राशि में से मृतक पर होने वाले खर्च के रूप में 1/3 राशि घटा दी जाएगी ।

कुमारी सुभांगी बनाम **नाथूराम और अन्य** 435

– धारा 166 – मृतक के आश्रितों द्वारा प्रतिकर के लिए आवेदन – मृतक सरकारी विभाग में स्थायी रूप से कार्यरत था, उसकी आयु 40 वर्ष से कम थी – मृतक के आश्रितों को दाह-संस्कार के रूप में पारम्परिक खर्चों और सह-जीवन क्षति का भी संदाय प्रणय सेठी वाले मामले को ध्यान में रखते हुए देय होगा – यदि दुर्घटना के पश्चात् अनेक वर्ष व्यतीत हो चुके हैं, तो दाह-संस्कार व्यय और सह-जीवन क्षति की राशियों में घटना की तारीख से प्रत्येक तीन वर्ष में 10 प्रतिशत की वृद्धि की जाएगी ।

कुमारी सुभांगी बनाम **नाथूराम और अन्य** 435

– धारा 166 – मृतक के आश्रितों द्वारा प्रतिकर के लिए आवेदन – मृतक सरकारी विभाग में स्थायी रूप से कार्यरत था, उसकी आयु 40 वर्ष से कम थी – चूंकि प्रणय सेठी वाले मामले में मृतक के प्रेम और स्नेह के मद को पारम्परिक व्ययों के अन्तर्गत नहीं माना गया

पृष्ठ संख्या

है, अतः इस मद में दिलाई गई राशि को पारम्परिक व्यय नहीं माना जा सकता ।

कुमारी सुभांगी बनाम **नाथूराम और अन्य** 435

– धारा 173 और 149, खंड 2(क)(i)(क) और 2(क)(i)(ग) – अपील – यान के परमिट का अतिक्रमण इंश्योरेंस कंपनी को उपलब्ध रक्षोपायों में से किसी एक रक्षोपाय के रूप में परिकल्पित किया जाना – इंश्योरेंस कंपनी इस बाबत अपनी प्रतिरक्षा कर सकती है कि दुर्घटना के समय यान का प्रयोग किसी ऐसे उद्देश्य के लिए किया जा रहा था जो परमिट द्वारा अनुज्ञप्त नहीं था – इस खंड को इस बाबत विस्तारित नहीं किया जा सकता कि यान का चालान उस मार्ग, जिस पर चालन किए जाने के लिए परमिट प्रदान किया गया था, के अलावा किसी अन्य मार्ग में किया जा रहा था और इसका परिणाम यह होगा कि यान का प्रयोग किसी ऐसे प्रयोजन के लिए किया गया जिसके लिए उसका प्रयोग परमिट द्वारा अनुज्ञप्त नहीं था – अत: नहीं कहा जा सकता कि इंश्योरेंस कंपनी यान के स्वामी की क्षतिपूर्ति के अपने दायित्व से इस आधार पर मुक्त हो गई है कि दुर्घटना के समय उल्लंघनकारी यान का चालन परमिट द्वारा अनुज्ञप्त मार्ग पर नहीं किया जा रहा था ।

यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम **रफीका और अन्य** 303

विदेशी विषयक अधिनियम, 1946 (1946 का 31)

– धारा 3 [विदेशी विषयक आदेश, 1948 का खंड 3] – विदेशी को भारत में प्रवेश से इनकार किया जाना

पृष्ठ संख्या

– विदेशी राष्ट्रिक का पांच वर्ष के बहुउद्देशीय प्रवेश कारबार वीज़ा का होना और उसके द्वारा भारत में रोजगार के लिए प्रवेश किया जाना – वह पूर्ववर्ती अवसरों पर भी भारत में वीज़ा में उपबंधित अवधि से अधिक अवधि तक रुका रहा, किन्तु उसने इस तथ्य का प्रकटीकरण अपनी याचिका में नहीं किया – वीज़ा की शर्तों के अंतर्गत वह भारत में रोजगार से प्रतिषिद्ध था – मात्र इस कारणवश कि उसके कब्जे में बहुउद्देशीय कारबार वीज़ा है, यह अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता कि उसको भारत में प्रवेश करने से इनकार नहीं किया जा सकता ।

जोशुआ सदागुरुसकी बनाम **भारत संघ और अन्य** 368

संविधान, 1950

– अनुच्छेद 14 [साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 115 और संविदा अधिनियम, 1872 की धारा 20] – विधिसम्मत प्रत्याक्षा और वचन-विबंध के सिद्धांतों की उपयोगिता – मंत्री ने मीडिया के समक्ष कथन में कक्षा 1 से कक्षा 8 के लिए राष्ट्रीय शिक्षा, अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् का पाठ्यक्रम कार्यान्वित किए जाने का उल्लेख किया – उनके इस उल्लेख का अर्थान्वयन कक्षा 9 और उससे आगे की कक्षाओं के पाठ्यक्रम में परिवर्तन न किए जाने के प्रयोजनार्थ सारगर्भित वचन के रूप में नहीं किया जा सकता ।

आल त्रिपुरा बुक सेलर्स एंड पब्लिशर्स, अगरतला, त्रिपुरा और अन्य बनाम **त्रिपुरा राज्य और अन्य** 320

– अनुच्छेद 14 [साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा

पृष्ठ संख्या

115] – विधिसम्मत प्रत्याक्षा और वचन-विबंध के सिद्धांतों की उपयोगिता – याचियों के संघ ने राज्य द्वारा बिना किसी पुष्टिकरण के स्वेच्छयापूर्वक मंत्री के कथन का अवलंब लिया और पुराने पाठ्यक्रम के आधार पर कक्षा 9 और उससे आगे की कक्षाओं की पुस्तकों का मुद्रण और प्रकाशन जारी रखा – याचियों का अभिवाक् कि बिना किसी पूर्व सूचना के कक्षा 9 और उससे आगे की कक्षाओं के पाठ्यक्रम में परिवर्तन के कारण उनको भारी हानि उठानी पड़ी – इस न्यायालय का मत है कि याचियों को शिक्षा नीति में प्रभावी किए जा रहे परिवर्तनों के बाबत सावधान होना चाहिए था ।

आल त्रिपुरा बुक सेलर्स एंड पब्लिशर्स, अगरतला, त्रिपुरा और अन्य बनाम **त्रिपुरा राज्य और अन्य** 320

– अनुच्छेद 14 [साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 115] – विधिसम्मत प्रत्याक्षा और वचन-विबंध के सिद्धांतों की उपयोगिता – राज्य और याचियों के मध्य पुराने पाठ्यक्रम के आधार पर पुस्तकों के मुद्रण और प्रकाशन के संबंध में कोई भी संविदा निष्पादित नहीं की गई थी – राज्य द्वारा वचन को पूरा किए जाने के बाबत कोई भी आश्वासन नहीं दिया गया था – अत: विधिसम्मत प्रत्याक्षा और वचन-विबंध के सिद्धांतों का अवलंब नहीं लिया जा सकता ।

आल त्रिपुरा बुक सेलर्स एंड पब्लिशर्स, अगरतला, त्रिपुरा और अन्य बनाम **त्रिपुरा राज्य और अन्य** 320

सशस्त्र बल अधिकरण अधिनियम, 2007 (2007 का 55)

– धारा 30 और 31 [सपठित संविधान, 1950 का

पृष्ठ संख्या

अनुच्छेद 226 और 136(2)] – अपील – अधिकरण के आदेश से व्यथित व्यक्ति सीधे उच्चतम न्यायालय के समक्ष अधिकारपूर्वक अपील प्रस्तुत कर सकता है – उच्च न्यायालयों से यह अपेक्षित है कि वे संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन अधिकरण के आदेश को चुनौती दिए जाने के प्रयोजनार्थ फाइल की गई याचिकाओं पर विचार करके सशस्त्र बल अधिकरण अधिनियम की धारा 30 और 31 के अधीन सृजित तंत्र का अनदेखा न करें ।

लेफ्टिनेंट कर्नल कुलदीप सिंह बनाम **भारत संघ** 295

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5)

– आदेश 22, नियम 2 और 3 – वाद का उपशमन – जहां एक या एक से अधिक वादी हैं और उनमें से किसी की मृत्यु हो जाती है और जहां वाद फाइल करने का अधिकार उत्तरजीवी वादी या वादियों को प्रतिवादी या प्रतिवादियों के विरुद्ध बचा रहता है, वहां न्यायालय अभिलेख में उस भाग की एक प्रविष्टि कराएगा और वाद उत्तरजीवी वादी या वादियों द्वारा प्रतिवादी या प्रतिवादियों के विरुद्ध आगे चलेगा ।

भारत पेट्रोलियम कारपोरेशन लिमिटेड और एक अन्य बनाम **आलोक प्रकाश सिंघाई और एक अन्य** 402

– आदेश 22, नियम 2 और 3 – वाद का उपशमन – संयुक्त संपत्ति से निष्कासन हेतु वादियों द्वारा संयुक्त रूप से वाद फाइल किया जाना – एक वादी की मृत्यु के पश्चात् उसके विधिक उत्तरजीवियों को वाद में पक्ष न बनाया जाना – निष्कासन वाद किसी भी संपत्ति स्वामी द्वारा फाइल किया जा सकता है, अत:

पृष्ठ संख्या

वाद को सुने जाने का अधिकार एक वादी की मृत्यु के कारण समाप्त नहीं होता और उसके स्थान पर उसके उत्तरजीवियों को पक्ष न बनाए जाने के कारण वाद का उपशमन नहीं होगा ।

भारत पेट्रोलियम कारपोरेशन लिमिटेड और एक अन्य बनाम **आलोक प्रकाश सिंघाई और एक अन्य** 402

– धारा 24 – वैवाहिक मामले का अंतरण – पति द्वारा विवाह-विच्छेद के लिए फाइल किए गए वाद को पत्नी के निवास वाले जिले में अंतरण के लिए आवेदन – पत्नी अपने माता-पिता के साथ दूसरे जिले में निवास कर रही है और उसकी हैसियत उस जिला न्यायालय में जाकर मामले की पैरवी करने की नहीं है जिस जिले में पति निवास करता है और जहां के जिला न्यायालय में विवाह-विच्छेद का मामला फाइल किया है – मामले को उस जिला न्यायालय को अंतरित किया जाना उचित है, जहां पत्नी अपने माता-पिता के साथ निवास कर रही है ।

शिखा रानी दास (भौमिक) (श्रीमती) बनाम **अरुण भौमिक** 352

लेफ्टिनेंट कर्नल कुलदीप सिंह

बनाम

भारत संघ

[2019 की रिट याचिका (सिविल) संख्या 1042]

तारीख 13 नवंबर, 2019

न्यायमूर्ति राजेश बिंदल और न्यायमूर्ति (सुश्री) सिंधु शर्मा

सशस्त्र बल अधिकरण अधिनियम, 2007 (2007 का 55) – धारा 30 और 31 [सपठित संविधान, 1950 का अनुच्छेद 226 और 136(2)] – अपील – अधिकरण के आदेश से व्यथित व्यक्ति सीधे उच्चतम न्यायालय के समक्ष अधिकारपूर्वक अपील प्रस्तुत कर सकता है – उच्च न्यायालयों से यह अपेक्षित है कि वे संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन अधिकरण के आदेश को चुनौती दिए जाने के प्रयोजनार्थ फाइल की गई याचिकाओं पर विचार करके सशस्त्र बल अधिकरण अधिनियम की धारा 30 और 31 के अधीन सृजित तंत्र का अनदेखा न करें ।

संक्षेप में मामले के तथ्य ये हैं कि याची तारीख 1 जनवरी, 2001 से 28 फरवरी, 2004 तक जम्मू में मिलिट्री फार्म के कमान अधिकारी के पद पर तैनात था और वह तोपखाना ब्रिगेड मुख्यालय 16 कार्प के साथ संलग्न था । उसका जम्मू स्थित मिलिट्री फार्म के कमान अधिकारी के रूप में सामान्य सेना न्यायालय द्वारा अभिकथित अपराधों के बाबत विचारण किया गया और उनके साबित पाए जाने पर दोषसिद्ध किया गया । उसको सेवा समाप्ति और तीन वर्ष का कठोर कारावास भुगतने के द्वारा दंडादिष्ट किया गया । तत्पश्चात् याची ने 2007 के सशस्त्र बल अधिकरण अधिनियम की धारा 15 के अधीन अपील फाइल की और सशस्त्र बल अधिकरण द्वारा तारीख 1 अक्तूबर, 2010 के आदेश द्वारा

उसकी जमानत मंजूर कर ली गई । तत्पश्चात् उसको प्रत्यर्थियों द्वारा तारीख 18 फरवरी, 2011 के आदेश द्वारा 1987 के सेना विनियम के पैरा 349 के निबंधनों के अनुसार निलंबन के अधीन रखा गया । याची द्वारा वर्तमान रिट याचिका जम्मू स्थित सशस्त्र बल अधिकरण की क्षेत्रीय शाखा द्वारा पारित तारीख 28 सितंबर, 2018 के आदेश को अभिखंडित किए जाने की ईप्सा करते हुए फाइल की गई है । याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – विचारण तारीख 18 अगस्त, 2010 को समाप्त हुआ था और याची ने अधिकरण के समक्ष 2010 की मूल अपील सं. 567 में निष्कर्ष और दंडादेश को चुनौती दी थी, जिसमें तारीख 1 अक्तूबर, 2010 को जमानत प्रदान की गई थी । उसको तारीख 18 फरवरी, 2011 के आदेश द्वारा निलंबन के अधीन रखा गया था और चंडीगढ़ में रहने की अनुज्ञा प्रदान कर दी गई थी । इस अनुज्ञा को तारीख 14 जून, 2018 और 30 जून, 2018 के आदेशों द्वारा रद्द कर दिया गया था । इन्हीं दोनों आदेशों को अधिकरण के समक्ष प्रकीर्ण याचिका के माध्यम से चुनौती दी गई थी जिसको अधिकरण द्वारा तारीख 28 सितंबर, 2018 को खारिज कर दिया गया था । इन आदेशों के उन निष्कर्षों और दंडादेश से स्वतंत्र रहने के कारण अधिकरण के समक्ष चुनौती दी गई थी और यह आदेश अंतर्वर्ती आदेश नहीं थे बल्कि अधिनियम की धारा 30(1) के अधीन परिकल्पित आदेश द्वारा आच्छादित थे । अत: हम यह अभिनिर्धारित करने के लिए आनत हैं कि संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन फाइल की गई यह याचिका सशस्त्र बल अधिकरण अधिनियम की धारा 30 के अधीन अधिकारिता की कमी के कारण पोषणीय नहीं है । (पैरा 8 और 9)

अवलंबित निर्णय

पैरा

[2015] (2015) 6 एस. सी. सी. 773 :
भारत संघ और अन्य बनाम **मेजर जनरल श्रीकांत शर्मा और एक अन्य** । 10

आरंभिक रिट अधिकारिता : 2019 की रिट याचिका (सिविल) संख्या 1042.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से सर्वश्री एन. के. कोहली और धीरज शर्मा

प्रत्यर्थी की ओर से श्री विशाल शर्मा

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति (सुश्री) सिंधु शर्मा ने दिया ।

न्या. (सुश्री) शर्मा – वर्तमान रिट याचिका याची द्वारा जम्मू स्थित सशस्त्र बल अधिकरण (जिसको इसमें इसके पश्चात् 'अधिकरण' कहकर निर्दिष्ट किया गया है) की क्षेत्रीय शाखा द्वारा पारित तारीख 28 सितंबर, 2018 के आदेश को अभिखंडित किए जाने की ईप्सा करते हुए फाइल की गई है ।

2. संक्षेप में मामले के तथ्य ये हैं कि याची तारीख 1 जनवरी, 2001 से 28 फरवरी, 2004 तक जम्मू में मिलिट्री फार्म के कमान अधिकारी के रूप में तैनात था और वह तोपखाना ब्रिगेड मुख्यालय 16 कार्प के साथ संलग्न था । उसका जम्मू स्थित मिलिट्री फार्म के कमान अधिकारी के रूप में सामान्य सेना न्यायालय द्वारा अभिकथित अपराधों के बाबत विचारण किया गया और उनके साबित पाए जाने के कारण दोषसिद्ध किया गया । उसको सेवा समाप्ति और तीन वर्ष का कठोर कारावास भुगतने के द्वारा दंडादिष्ट किया गया ।

3. तत्पश्चात् याची ने 2007 के सशस्त्र बल अधिकरण अधिनियम की धारा 15 के अधीन अपील फाइल की और उसकी जमानत सशस्त्र बल अधिकरण द्वारा तारीख 1 अक्तूबर, 2010 के आदेश द्वारा मंजूर कर ली गई । तत्पश्चात् उसको प्रत्यर्थियों द्वारा तारीख 18 फरवरी, 2011 के आदेश द्वारा 1987 के सेना विनियम के पैरा 349 के निबंधनों के अनुसार निलंबन के अधीन रखा गया ।

4. याची द्वारा कर्तव्य पालन का स्टेशन छोड़ने की अनुज्ञा की ईप्सा किए जाने पर सामान्य कमान अधिकारी 16 कार्प ने तारीख 18

मार्च, 2011 के आदेश द्वारा कर्तव्य पालन का स्टेशन छोड़ने की सशर्त अनुज्ञा प्रदान कर दी । चूंकि सामान्य सेना न्यायालय द्वारा निकाले गए निष्कर्ष और अधिरोपित दंडादेश की पुष्टि सक्षम प्राधिकारी द्वारा कर दी गई थी, इसलिए अधिकरण ने प्रत्यर्थियों द्वारा प्रस्तुत आवेदन पर तारीख 23 अप्रैल, 2014 के आदेश द्वारा उक्त निष्कर्षों और दंडादेश का प्रख्यापन किए जाने की अनुज्ञा प्रदान कर दी और इस प्रकार तारीख 3 दिसंबर, 2014 को दंडादेश का प्रख्यापन कर दिया गया । यह निवेदन किया गया है कि सशस्त्र बल अधिकरण, श्रीनगर की जम्मू न्यायपीठ 2016 में स्थापित की गई और अपील की सुनवाई तारीख 22 अगस्त, 2017 को की गई, किंतु निर्णय पारित नहीं किया जा सका । चूंकि निर्णय लंबित बना रहा और मामले को सुनवाई के लिए पुन: निर्धारित किया गया किंतु न्यायिक सदस्य की नियुक्ति न हो पाने के कारण सुनवाई नहीं हो सकी । प्रत्यर्थियों ने याची को कर्तव्य पालन का स्टेशन छोड़ने और चंडीगढ़ में रहने के प्रयोजनार्थ प्रदान की गई अनुज्ञा रद्द कर दी और निर्देशित किया कि वह अग्रिम आदेशों तक अखनूर स्टेशन पर रुका रहे ।

5. चंड़ीगढ़ में रहने की अनुज्ञा रद्द करने वाला आदेश, जिसके द्वारा याची को निर्देशित किया गया था कि वह 318 मध्य रेजिमेंट के समक्ष उपस्थित हो और अखनूर स्टेशन पर रुका रहे, को याची द्वारा अधिकरण के समक्ष चुनौती दी गई । सशस्त्र बल अधिकरण ने तारीख 28 सितंबर, 2018 के आदेश द्वारा याची का आवेदन खारिज कर दिया । इस आदेश को याची द्वारा इस याचिका द्वारा संविधान के अनुच्छेद 226 सपठित जम्मू और कश्मीर संविधान की धारा 103 के अधीन चुनौती दी गई है । वर्तमान में जम्मू और कश्मीर के संविधान को निरसित किया जा चुका है, जो कि अब अविद्यमान है ।

6. प्रत्यर्थियों ने इस याचिका की पोषणीयता का प्रश्न आरंभ में ही उठा दिया है और इस प्रकार चूंकि यह याचिका तारीख 28 सितंबर, 2018 के आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है, अत: संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन पोषणीय नहीं है ।

7. इसके विपरीत याची के विद्वान् काउंसेल ने निवेदन किया कि अधिनियम की धारा 30(1) के परंतुक के अधीन उच्चतम न्यायालय के किसी भी मध्यवर्ती आदेश के विरुद्ध किसी अपील के लिए उपबंधित नहीं किया गया है और चूंकि यह याचिका मध्यवर्ती आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है, इसलिए पोषणीय नहीं है । सशस्त्र बल अधिकरण अधिनियम की धारा 30, जिसका अवलंब लिया गया है, निम्नलिखि है :-

"**30. उच्चतम न्यायालय को अपील** - (1) धारा 31 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, अधिकरण के अंतिम विनश्चय या आदेश (धारा 19 के अधीन पारित आदेश से भिन्न) के विरुद्ध अपील उच्चतम न्यायालय में होगी :

परंतु ऐसी अपील उक्त विनश्चय या आदेश के नब्बे दिनों की अविध के भीतर की जाएगी :

परंतु यह और कि अधिकरण के अन्तर्वती आदेश के विरुद्ध कोई अपील नहीं होगी ।

(2) अधिकरण के, अवमान के लिए दंड देने की अपनी अधिकारिता के प्रयोग में दिए गए किसी आदेश या विनश्चय के विरुद्ध अपील उच्चतम न्यायालय में अधिकार के रूप में होगी :

परंतु इस उपधारा के अधीन अपील उस आदेश की तारीख से, जिसके विरुद्ध अपील की गई है, साठ दिन के भीतर उच्चतम न्यायालय में फाइल की जाएगी ।

(3) उपधारा (2) के अधीन किसी अपील के लंबित रहने के दौरान उच्चतम न्यालय यह आदेश कर सकेगा कि -

(क) ऐसे दंड या आदेश के, जिसके विरुद्ध अपील की गई है, निष्पादन को निलंबित रखा जाए ; या

(ख) यदि अपीलार्थी परिरोध में है तो उसे जमानत पर छोड़ दिया जाए :

परंतु जहां अपीलार्थी, अधिकरण का यह समाधान कर देता है कि उसका अपील करने का आशय है वहां अधिकरण, यथास्थित,

खंड (क) या खंड (ख) के अधीन प्रदत्त किन्हीं शक्तियों का प्रयोग भी कर सकेगा ।"

8. विचारण तारीख 18 अगस्त, 2010 को समाप्त हुआ और याची ने अधिकरण के समक्ष 2010 की मूल अपील सं. 567 के निष्कर्ष और दंडादेश को चुनौती दी, जिसमें तारीख 1 अक्तूबर, 2010 को जमानत प्रदान कर दी गई । उसको तारीख 18 फरवरी, 2011 के आदेश द्वारा निलंबन के अधीन रखा गया और चंडीगढ़ में रहने की अनुज्ञा प्रदान कर दी गई थी । इस अनुज्ञा को तारीख 14 जून, 2018 और 30 जून, 2018 के आदेशों द्वारा रद्द कर दिया गया । इन्हीं दोनों आदेशों को अधिकरण के समक्ष प्रकीर्ण याचिका के माध्यम से चुनौती दी गई जिसको अधिकरण द्वारा तारीख 28 सितंबर, 2018 को खारिज कर दिया गया । इन आदेशों के उन निष्कर्षों और दंडादेश से स्वतंत्र रहने के कारण अधिकरण के समक्ष चुनौती दी गई और यह आदेश अंतर्वर्ती आदेश नहीं थे बल्कि अधिनियम की धारा 30(1) के अधीन परिकल्पित आदेश द्वारा आच्छादित थे ।

9. अत: हम यह अभिनिर्धारित करने के लिए आनत हैं कि संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन फाइल की गई यह याचिका सशस्त्र बल अधिकरण अधिनियम की धारा 30 के अधीन अधिकारिता की कमी के कारण पोषणीय नहीं है ।

10. माननीय उच्चतम न्यायालय ने अधिनियम की धारा 30 में समाविष्ट आज्ञा पर विचार करते हुए **भारत संघ और अन्य** बनाम **मेजर जनरल श्रीकांत शर्मा और एक अन्य**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया है :-

"43. अधिनियम की धारा 30 और धारा 31 के अधीन प्रदान की गई अनुज्ञा के अध्यधीन रहते हुए, इस न्यायालय के समक्ष अपील के लिए उपबंधित करती है । संविधान के अनुच्छेद 136 के खंड (2) द्वारा इस न्यायालय की अपीली अधिकारिता को सशस्त्र बल से संबंधित किसी विधि द्वारा या अधीन गठित किसी

[1] (2015) 6 एस. सी. सी. 773.

न्यायालय या अधिकरण द्वारा पारित किसी निर्णय, विनिर्धारण, दंडादेश या आदेश के संबंध में विवर्जित कर दिया गया है । यदि अधिकरण के आदेश द्वारा व्यथित कोई व्यक्ति अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालय की शरण में जाता है और उच्च न्यायालय उसकी याचिका पर विचार करता है और कोई निर्णय या आदेश पारित कर देता है, तो वह व्यक्ति जो सशस्त्र बल अधिकरण और उच्च न्यायालय द्वारा पारित दोनों ही आदेशों के विरुद्ध व्यथित हो सकता है, दोनों ही आदेशों को एक संयुक्त अपील में चुनौती नहीं दे सकता । व्यथित व्यक्ति संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय के विरुद्ध अपील की इजाजत की ईप्सा करते हुए विशेष इजाजत याचिका फाइल कर सकता है किंतु यह न्यायालय अनुच्छेद 136 के खंड (2) द्वारा अधिकारिता का वर्जन कर दिए जाने को दृष्टि में रखते हुए सशस्त्र बल अधिकरण के आदेश के विरुद्ध अपील पर विचार नहीं कर सकता । यदि उच्च न्यायालय एक बार सशस्त्र बल अधिकरण द्वारा पारित आदेश के विरुद्ध संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन फाइल की गई याचिका पर विचार कर लेता है और मामले को निर्णीत कर देता है तो वह व्यक्ति जिसने उच्च न्यायालय की शरण ली, भी सशस्त्र बल अधिकरण के आदेश के विरुद्ध अधिनियम की धारा 30 के अधीन अपील फाइल करने की इजाजत के साथ धारा 30 के अधीन अपील फाइल करने के अधिकार से विवर्जित हो जाएगा चूंकि वह अधिनियम की धारा 30 सपठित धारा 31 के अधीन संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश को चुनौती नहीं दे सकता । इसलिए उच्च न्यायालय से यह सदैव यह अपेक्षित है कि वह इस न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि के निबंधनों के अनुसार कार्य करे, जैसाकि ऊपर निर्दिष्ट है और जो संविधान के अनुच्छेद 141 के अधीन उच्च न्यायालय पर बाध्यकारी है और जिसके अधीन व्यथित व्यक्ति को सशस्त्र बल अधिकरण अधिनियम की धारा 30 सपठित धारा 31 के अधीन अनुतोष प्राप्त करने की अनुज्ञा प्राप्त है ।

44. उच्च न्यायालय (दिल्ली उच्च न्यायालय) ने संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका पर विचार करते हुए अधिनियम की धारा 30 और 31 के अधीन सृजित तंत्र का अनदेखा किया । तथापि, हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय और इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने अनुच्छेद 226 के अधीन फाइल की गई याचिकाओं पर विचार नहीं किया और रिट याचियों को निर्देशित किया कि वे अधिनियम की धारा 30 और 31 का आश्रय लें । पुनः, इस न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि, जैसाकि ऊपर निर्दिष्ट है, हमारा विचार है कि दिल्ली उच्च न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन फाइल की गई याचिका पर विचार करने में न्यायानुमत नहीं था ।

45. हम पूर्वोक्त कारणोंवश दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश को अपास्त करते हैं और आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय और इलाहाबाद उच्च न्यायालयों द्वारा पारित निर्णयों और आदेशों को मान्य ठहराते हैं । व्यथित व्यक्तियों को अनुज्ञा प्रदान की जाती है कि वे अधिनियम की धारा 30 और 31 के अधीन अपील फाइल करने की इजाजत प्राप्त करके अनुतोष प्राप्त करें और यदि आवश्यक हो तो इस न्यायालय के समक्ष अनुतोष प्राप्त करने के प्रयोजनार्थ विलंब को क्षमा करने के लिए भी याचिका फाइल कर सकते हैं ।"

11. पूर्वोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए याचिका में कोई गुणागुण नहीं पाया जाता और तद्नुसार याचिका खारिज की जाती है ।

याचिका खारिज की गई ।

शु.

यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड

बनाम

रफीका और अन्य

(2019 की मोटर दुर्घटना दावा अपील सं. 51)

तारीख 10 दिसंबर, 2019

न्यायमूर्ति संजीव कुमार

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59) – धारा 173 और 149, खंड 2(क)(i)(क) और 2(क)(i)(ग) – अपील – यान के परमिट का अतिक्रमण इंश्योरेंस कंपनी को उपलब्ध रक्षोपायों में से किसी एक रक्षोपाय के रूप में परिकल्पित किया जाना – इंश्योरेंस कंपनी इस बाबत अपनी प्रतिरक्षा कर सकती है कि दुर्घटना के समय यान का प्रयोग किसी ऐसे उद्देश्य के लिए किया जा रहा था जो परमिट द्वारा अनुज्ञप्त नहीं था – इस खंड को इस बाबत विस्तारित नहीं किया जा सकता कि यान का चालान उस मार्ग, जिस पर चालन किए जाने के लिए परमिट प्रदान किया गया था, के अलावा किसी अन्य मार्ग में किया जा रहा था और इसका परिणाम यह होगा कि यान का प्रयोग किसी ऐसे प्रयोजन के लिए किया गया जिसके लिए उसका प्रयोग परमिट द्वारा अनुज्ञप्त नहीं था – अतः नहीं कहा जा सकता कि इंश्योरेंस कंपनी यान के स्वामी की क्षतिपूर्ति के अपने दायित्व से इस आधार पर मुक्त हो गई है कि दुर्घटना के समय उल्लंघनकारी यान का चालन परमिट द्वारा अनुज्ञप्त मार्ग पर नहीं किया जा रहा था ।

संक्षेप में मामले के तथ्य ये हैं कि यह अपील यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड द्वारा श्रीनगर के मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण द्वारा 2015 की फाइल संख्या 274, रफीका और अन्य बनाम अहमद बांगरु और अन्य वाले मामले में तारीख 23 अप्रैल, 2019 को पारित अधिनिर्णय के विरुद्ध फाइल की गई है, जिसके द्वारा विद्वान् मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण ने 38,89,600/- रुपए के और उस प्रतिकर पर

दावा याचिका के प्रस्तुतीकरण की तारीख से वसूली की तारीख तक 6.5 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से साधारण ब्याज का संदाय किए जाने के लिए अधिनिर्णय पारित किया । अपीलार्थी ने दावाकर्ताओं के पक्ष में पारित प्रतिकर के अधिनिर्णय की रकम की संगणना को विवादित करने के अतिरिक्त इस बात पर भी जोर दिया कि अभिलेख पर उपलब्ध स्पष्ट साक्ष्य को दृष्टि में रखते हुए कि उल्लंघनकारी यान का चालक यान का चालन परमिट की शर्तों के अतिक्रमण में का रहा था और अधिकरण को यान के स्वामी को अपीलार्थी को प्रतिकर प्रदान करने के दायित्व से मुक्त कर देना चाहिए था । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – यद्यपि अधिकरण ने यह निष्कर्ष निकाला कि अपीलार्थी इंश्योरेंस कंपनी और साथ ही उल्लंघनकारी यान के स्वामी और चालक इस बात को साबित करने में दयनीय रूप से विफल रहे हैं कि दुर्घटना के समय उल्लंघनकारी यान का चालन मार्ग परमिट के अतिक्रमण में किया जा रहा था, फिर भी अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य की सूक्ष्म संवीक्षा से, विशेष रूप से प्रत्यर्थी साक्षी सज्जाद हुसैन डार और रमीज अहमद नजर के कथन से यह स्पष्ट हो जाता है कि सुसंगत समय बिंदु पर उल्लंघनकारी यान के पक्ष में विधिमान्य परमिट मौजूद था यद्यपि, वह बटमालू से श्रीनगर शहर के पूर्वी क्षेत्र के मध्य ही विधिमान्य था । स्वीकृतत:, दुर्घटना तब घटित हुई जब यान डोडबाथरी से वापस आ रहा था और खान साहेब बदगाम पहुंच गया था । अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से यह स्पष्ट नहीं हो रहा है कि वह स्थान जहां दुर्घटना घटित हुई, श्रीनगर शहर के पूर्वी क्षेत्र के भीतर स्थित था । चूंकि इस क्षेत्र को कहीं पर भी परिभाषित नहीं किया गया । तथापि, इस तथ्य को न्यायिक रूप से अवेक्षित करते हुए कि डोडपाथरी और साथ ही खान साहेब, दोनों ही स्थान बदगाम जिले के अंतर्गत आते हैं और इसलिए किसी भी दृष्टिकोण से यह नहीं कहा जा सकता कि वे श्रीनगर शहर के पूर्वी क्षेत्र के भाग हैं । श्रीनगर शहर के पूर्वी क्षेत्र का समस्त प्रयोजनों के लिए अर्थ श्रीनगर शहर तक सीमित है । इस स्थितिवश अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के आधार पर यह बात स्पष्टत: साबित हो जाती है कि उल्लंघनकारी यान दुर्घटना के समय ऐसे मार्ग पर चल रहा था जिसके

लिए विधिमान्य परमिट जारी नहीं किया गया था । अत: उपरोक्तानुसार अभिनिर्धारित करते हुए, अगला प्रश्न जिसका विनिर्धारण मेरे द्वारा किया जाना है, यान के स्वामी की क्षतिपूर्ति किए जाने के प्रयोजनार्थ अपीलार्थी इंश्योरेंस कंपनी के दायित्व के संबंध में है । अपीलार्थी इंश्योरेंस कंपनी द्वारा जिन निर्णयों का अवलंब लिया गया है उनका उल्लेख ऊपर किया गया है और वे स्पष्टतया इस विधि को अधिकथित करते हैं कि बिना विधिमान्य परमिट के यान का चालन बीमा पॉलिसी की मूल शर्तों का व्यतिक्रम है और बीमाकर्ता को यान के स्वामी की क्षतिपूर्ति किए जाने के उसके दायित्वों से मुक्त कर देता है । माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णयों का सतर्कतापूर्वक परिशीलन किए जाने पर अपीलार्थी को जो अनुतोष प्रदान किया जा सकता है, उसके संबंध में यह बात स्पष्ट है कि उच्चतम न्यायालय ने पूर्वोक्त मामले में परमिट, जैसाकि मोटर यान अधिनियम (जिसको इसमें इसके पश्चात् 'अधिनियम' कहकर निर्दिष्ट किया गया है) की धारा 2(31) के अधीन परिभाषित परमिट और मार्ग परमिट के मध्य अंतर को परिभाषित किया है । बिना परमिट के यान का चालन इंश्योरेंस पॉलिसी की मूल शर्त का व्यतिक्रम हो सकता है और इसके आधार पर बीमा कंपनी को यान के स्वामी की क्षतिपूर्ति किए जाने के दायित्व से मुक्त किए जाने की ईप्सा कर सकता है, किंतु मात्र इस कारणवश कि उल्लंघनकारी यान दुर्घटना के समय उस मार्ग पर चलाए जाने के बजाय किसी अन्य मार्ग पर चलाया जा रहा था जिसके लिए उसको अनुज्ञप्ति प्राप्त थी, बीमा पॉलिसी की मूल शर्त का व्यतिक्रम नहीं होगा और इस आधार पर बीमाकर्ता द्वारा बीमाकृत को क्षतिपूर्ति प्रदान किए जाने के दायित्व से मुक्त नहीं किया जा सकता । धारा 149 (उपरोक्त) के परिशीलन से यह स्पष्टत: ज्ञात होता है कि इस धारा का खंड 2(क)(i)(क) उस यान से संबंधित है जो किराए या पारिश्रमिक के आधार पर चालन किए जाने के प्रयोजनार्थ जारी किए गए परमिट द्वारा आच्छादित नहीं है और इसका प्रयोग उसी कार्य के लिए किया जा रहा जो परमिट द्वारा आच्छादित नहीं है । इस धारा को सावधानीपूर्वक संपूर्णता में पढ़े जाने पर पूर्णतया स्पष्ट हो जाता है कि यान के परमिट का अतिक्रमण इंश्योरेंस कंपनी को उपलब्ध विभिन्न

रक्षोपायों में से किसी एक रक्षोपायों के रूप में परिकल्पित नहीं है । इस धारा के खंड 2(क)(i)(ग) में यह उपबंधित है कि इंश्योरेंस कंपनी इस बाबत अपनी प्रतिरक्षा कर सकती है कि दुर्घटना के समय यान का प्रयोग किसी ऐसे उद्देश्य के लिए किया जा रहा था जो परमिट द्वारा अनुज्ञप्त नहीं था और जिसके अंतर्गत उस यातायात यान का प्रयोग किया जाना अनुज्ञप्त है । इस खंड को इस अर्थ को आच्छादित किए जाने के प्रयोजनार्थ विस्तारित नहीं किया जा सकता कि उस मार्ग, जिस पर यान का चालन किए जाने के लिए परमिट प्रदान किया गया है, के अलावा किसी अन्य मार्ग पर यान का प्रयोग किए जाने का परिणाम यह होगा कि यान का प्रयोग किसी ऐसे प्रयोजन के लिए किया गया जिसके लिए उसका प्रयोग किया जाना परमिट द्वारा अनुज्ञप्त नहीं था । स्वीकृतत: उल्लंघनकारी यान, जो कि एक यातायात यान है, का प्रयोग ऐसे ही किसी उद्देश्य के लिए घटना के समय किया गया था । यही स्वीकृत स्थिति होने के कारण यह नहीं कहा जा सकता कि अपीलार्थी इंश्योरेंस कंपनी यान के स्वामी की क्षतिपूर्ति के अपने दायित्व से इस आधार पर मुक्त हो गई है कि दुर्घटना के समय उल्लंघनकारी यान का चालन परमिट द्वारा अनुज्ञप्त मार्ग पर नहीं किया जा रहा था । इस भिन्नता को ध्यान में रखते हुए और अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा उद्धृत विधि की प्रतिपादना को विवादित न करते हुए मेरा यह विचार है कि अपीलार्थी द्वारा जिस प्रथम आधार पर अधिनिर्णय को चुनौती दी गई है, वह गुणागुण से रहित है और अस्वीकृत किए जाने योग्य है । दावाकर्ताओं को अधिकरण द्वारा प्रदान किए गए प्रतिकर की रकम पर विचार करते हुए यह उल्लेख किया जाता है कि मृतक, जो कि एक सरकारी कर्मचारी है, की मासिक आय के बाबत विवाद नहीं है । मृतक की आयु को ध्यान में रखते हुए उसकी आय में भविष्य की संभावनाओं के रूप में 20 प्रतिशत वृद्धि की जानी चाहिए थी । अपीलार्थी द्वारा आय और व्यक्तिगत व्ययों के बाबत की गई कटौतियों को भी विवादित नहीं किया गया है । तथापि, जिस बात को अपीलार्थी इंश्योरेंस कंपनी द्वारा विवादित किया गया है, वह यह है कि अधिकरण ने इस तथ्य पर ध्यान नहीं दिया कि मृतक एक सरकारी कर्मचारी था और दावाकर्ता उसके ऊपर

लागू सेवा विनियमों के अधीन दस वर्षों की अवधि के लिए उसके वेतन के 50 प्रतिशत के हकदार थे । तथापि, अपीलार्थी द्वारा पूर्वोक्त अभिवाक् को मान्य ठहराए जाने के प्रयोजनार्थ अभिलेख पर कुछ भी प्रस्तुत नहीं किया गया है । मैं, उपरोक्त बातों को ध्यान में रखते हुए दावाकर्ताओं के पक्ष में प्रदान किए गए प्रतिकर की संगणना के संबंध में कोई शैथिल्य नहीं पाता । मैं, पूर्वोक्त कारणोंवश इस अपील में कोई गुणागुण नहीं पाता और यह अपील तद्नुसार खारिज की जाती है । यदि प्रदान की गई रकम को इस न्यायालय में जमा कर दिया जाता है, तो उस रकम को रजिस्ट्री द्वारा अधिकार प्राप्त दावाकर्ताओं को उचित सत्यापन और पहचान के पश्चात्, अधिनिर्णय में समाविष्ट नियमों और शर्तों का कड़ाईपूर्वक पालन करते हुए निर्मुक्त कर दिया जाएगा । (पैरा 7, 8, 10, 11 और 12)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2018]	(2018) 7 एस. सी. सी. 558 : **अमृत पाल सिंह और एक अन्य** बनाम **टाटा ए. आई. जी. जनरल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड और अन्य** ;	3
[2018]	(2018) 8 एस. सी. सी. 492 : **रैना और अन्य** बनाम **नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड और अन्य** ;	3
[2018]	(2018) 3 एस. सी. सी. 208 : **पप्पू और अन्य** बनाम **बिनोद कुमार लाम्बा और एक अन्य** ;	3
[2004]	(2004) 8 एस. सी. सी. 517 : **नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** बनाम **चल्लाभारथम्मा और अन्य** ।	3

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2019 की मोटर दुर्घटना दावा अपील सं. 51.

मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 173 के अधीन अपील ।

याची की ओर से सुश्री रिफत खालिदा

प्रत्यर्थी की ओर से श्री अल्ताफ लोन

निर्णय

श्रीनगर के मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण द्वारा 2015 की फाइल अपील संख्या 274, रफीका और अन्य बनाम अहमद बांगरु और अन्य वाले मामले में तारीख 23 अप्रैल, 2019 को पारित अधिनिर्णय के विरुद्ध यह अपील यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड द्वारा फाइल की गई है जिसके द्वारा विद्वान् मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण ने 38,89,600/- रुपए के प्रतिकर और उस पर दावा याचिका के प्रस्तुतीकरण की तारीख से वसूली की तारीख तक 6.5 प्रतिशत प्रतिवर्ष साधारण ब्याज का संदाय किए जाने के लिए अधिनिर्णय पारित किया है ।

2. इस याचिका में जिन आधारों पर आक्षेपित अधिनिर्णय को चुनौती दी गई है, का उल्लेख करने के पूर्व यह लाभकर होगा कि मामले के संदर्भात्मक तथ्यों का संक्षेप में उल्लेख किया जाए :-

> "(I) तारीख 22 अगस्त, 2015 को उल्लंघनकारी यान (टाटा एल. पी. 407 जिसकी रजिस्ट्रेशन सं. जे. के. 01एन.5927 है) के चालक ने, जब वाहन खान साहेब बदगाम नामक स्थान पर पहुंचा, तो चालन करते समय वाहन पर से नियंत्रण खो दिया । यान इधर-उधर लहराने लगा, जिसके परिणामस्वरूप बशीर अहमद मीर नामक व्यक्ति, जो इस यान में सवार था, ने प्राणांतक क्षतियां बर्दाश्त कीं । दुर्घटना अभिकथित रूप से उल्लंघनकारी यान अर्थात् इस अपील के प्रत्यर्थी सं. 7 के चालक द्वारा अंधाधुंध और उपेक्षापूर्वक चालन के कारण घटित हुई थी । इस दुर्घटना के संबंध में 2015 की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 81 पुलिस थाना खान साहेब बदगाम में रणबीर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 279, 304क और 427 के अधीन रजिस्ट्रीकृत की गई थी ।
>
> (II) प्रत्यर्थी सं. 1, जो मृतक की पत्नी है और प्रत्यर्थी सं. 2

से 5, जो मृतक के बच्चे हैं, ने मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण के समक्ष दावा याचिका फाइल की । अपीलार्थी इंश्योरेंस कंपनी और साथ ही उल्लंघनकारी यान के स्वामी और चालक अर्थात् प्रत्यर्थी सं. 6 और 7 द्वारा दावा याचिका के विरुद्ध प्रतिरक्षा की गई ।

(III) अधिकरण ने पक्षों द्वारा फाइल किए गए उनके अभिवचनों के आधार पर विवाद के विनिर्धारण के लिए निम्नलिखित विवाद्यक विरचित किए –

(1) क्या तारीख 22 अगस्त, 2015 को खान साहेब बदगाम नामक स्थान पर रजिस्ट्रेशन सं. जे.के.01एन.5927 धारण करने वाले यान के चालक, जो प्रत्यर्थी सं. 2 है, ने यान पर नियंत्रण खो दिया था और यान आड़ा तिरछा भागने लगा जिसके परिणामस्वरूप मृतक, जो उक्त यान में सवार था, समेत अनेक व्यक्तियों को गंभीर क्षतियां कारित हुईं और मृतक को अस्पताल ले जाया गया जहां उसको मृत अवस्था में लाया गया घोषित कर दिया गया ?

(2) क्या प्रत्यर्थी सं. 2 दुर्घटना के समय विधिमान्य और प्रभावी चालन अनुज्ञप्ति और यान से संबंधित अन्य दस्तावेजों का धारक नहीं था यदि ऐसा नहीं था तो दावा याचिका पर इसके प्रभाव ?

(3) यदि विवाद्यक सं. 1 और 2 का निर्णय याचियों के पक्ष में होता है, तो वे किस सीमा तक और किससे प्रतिकर प्राप्त करने के हकदार हैं ?

(4) अन्य कोई अनुतोष ।

(IV) पक्षों ने अपने दायित्वों का निर्वहन करने के प्रयोजनार्थ साक्ष्य प्रस्तुत किए । प्रत्यर्थी सं. 1 से 5 (जिनको इसमें इसके पश्चात 'दावाकर्ता' कहकर निर्दिष्ट किया गया है) में अब्दुल रशीद चोपान, मोहम्मद युसुफ डार और नजीर अहमद डार का परीक्षण कराया । मृतक की दावाकर्ता पत्नी भी साक्षी कठघरे में उपस्थित हुई । उल्लंघनकारी यान का चालक, जो प्रत्यर्थी सं. 7 है, भी साक्षी

के रूप में उपस्थित हुआ । उसने अपने पक्षकथन के समर्थन में फयाज अहमद वागय को भी पेश किया । अपीलार्थी इंश्योरेंस कंपनी ने अपने पक्षकथन के समर्थन में सज्जाद हुसैन डार, अभिलेखपाल, कश्मीर के परिवहन यातायात अधिकारी और सहायक विधिक अधिकारी रमीज अहमद नजर का परीक्षण कराया ।

(V) अभिकरण ने अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य की समीक्षा करने और पक्षों की ओर से उपस्थित विद्वान् काउंसेलों द्वारा दी गई परस्पर विरोधी दलीलों को सुनने के पश्चात् विवाद्यक सं. 1 दावाकर्ता के पक्ष में निर्णीत कर दिया और अभिनिर्धारित किया कि वह दुर्घटना, जिसमें मृतक को अपना जीवन गवाना पड़ा, उल्लंघनकारी यान के चालक द्वारा अंधाधुंध और उपेक्षापूर्ण चालन के कारण घटित हुई थी । अधिकरण ने अभिलेख पर उपलब्ध मौखिक साक्ष्य के अतिरिक्त अन्वेषण अधिकारी, जिसने उल्लंघनकारी यान के चालक के विरुद्ध दावाकर्ताओं के मामले को साबित किया, की रिपोर्ट का भी अवलंब लिया । विवाद्यक सं. 2, जिसको साबित करने का भार उल्लंघनकारी यान के चालक और स्वामी पर था, को साबित नहीं किया गया ।

(VI) अधिकरण ने विवाद्यक सं. 1 और 2 का निष्कर्ष अभिलिखित करने के पश्चात् उल्लंघनकारी यान के स्वामी और चालक और अपीलार्थी इंश्योरेंस कंपनी को मोटर यान दुर्घटना में मृतक की मृत्यु के कारण दावाकर्ताओं को कारित हानि के लिए प्रतिकर के संदाय का प्रतिनिधिक रूप से दायी ठहराया । अधिकरण ने सरला वर्मा **बनाम** दिल्ली ट्रांसपोर्ट कारपोरेशन [ए. सी. जे. 2009, 1298] और नेशनल इंश्योरेंस कंपनी **बनाम** प्रणय सेठी [एस. एल. पी. (सिविल) 25590 सन् 2014] वाले मामलों में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णयों का अवलंब लेते हुए 6.5 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से साधारण ब्याज सहित 38,89,600/- रुपए के प्रतिकर का अधिनिर्णय पारित कर दिया, जैसाकि ऊपर उल्लेख किया गया है । अधिकरण के इसी अधिनिर्णय के विरुद्ध अपीलार्थी इंश्योरेंस कंपनी ने यह अपील फाइल की है ।"

3. अपीलार्थी ने दावाकर्ताओं के पक्ष में पारित प्रतिकर के अधिनिर्णय की रकम की संगणना को विवादित करने के अतिरिक्त इस पर भी जोर दिया है कि अभिलेख पर उपलब्ध स्पष्ट साक्ष्य के आधार उल्लंघनकारी यान का चालक यान को परमिट की शर्तों के अतिक्रमण में चला रहा था और इसलिए अधिकरण को अपीलार्थी को यान के स्वामी को क्षतिपूर्ति प्रदान करने के दायित्व से मुक्त कर देना चाहिए था । अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने अपने निवेदन पर बल देने के लिए उच्चतम न्यायालय के निम्नलिखित निर्णयों का अवलंब लिया :-

(1) **नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** बनाम **चल्लाभारथम्मा और अन्य**[1] ।

(2) **अमृत पाल सिंह और एक अन्य** बनाम **टाटा ए. आई. जी. जनरल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड और अन्य**[2] ।

(3) **रैना और अन्य** बनाम **नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड और अन्य**[3] ।

(4) **पप्पू और अन्य** बनाम **बिनोद कुमार लाम्बा और एक अन्य**[4] ।

4. इसके विपरीत दावाकर्ताओं की ओर से उपस्थित विद्वान् काउंसेल ने निवेदन किया कि अपीलार्थी इंश्योरेंस कंपनी द्वारा फाइल किए गए आक्षेपों में लिया गया यह अभिवाक् कि उनको बीमाकृत को क्षतिपूर्ति दिलाने के उनके दायित्वों से इस आधार पर मुक्त कर दिया गया था कि उल्लंघनकारी यान का चालन परमिट के अतिक्रमण में किया जा रहा था, किंतु इंश्योरेंस कंपनी द्वारा इस अभिवाक् का अवलंब विनिर्दिष्ट रूप से नहीं लिया गया । उन्होंने दलील दी कि अभिलेख पर उपलब्ध मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य, के यथोचित अधिमूल्यन के पश्चात् अधिकरण इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि अपीलार्थी इंश्योरेंस कंपनी

---

[1] (2004) 8 एस. सी. सी. 517.

[2] (2018) 7 एस. सी. सी. 558.

[3] (2018) 8 एस. सी. सी. 492.

[4] (2018) 3 एस. सी. सी. 208.

दयनीय रूप से बीमा संविदा के किन्हीं भी नियमों और शर्तों के अतिक्रमण को साबित करने में विफल रही, उल्लंघनकारी यान के चालक की चालन अनुज्ञप्ति और उल्लंघनकारी यान के मार्ग परमिट, दोनों के बारे में । अत: दावाकर्ताओं के विद्वान् काउंसेल ने निवेदन किया कि अपीलार्थी इंश्योरेंस कंपनी द्वारा जिन निर्णयों का अवलंब लिया गया वे हमारे समक्ष उपस्थित मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होते ।

5. प्रत्यर्थी सं. 6 और 7, जिन्होंने तामीली के बावजूद इस अपील में अपनी प्रतिरक्षा न करने के विकल्प को चुना की ओर से कोई प्रतिनिधित्व नहीं हुआ ।

6. मेरे विचार से इस अपील में पक्षों के विद्वान् काउंसेलों को सुनने और अभिलेख के परिशीलन के पश्चात् दो प्रश्न विनिर्धारण के लिए उद्भूत हुए :–

(1) क्या अपीलार्थी इंश्योरेंस कंपनी ने बीमा पॉलिसी के नियमों और शर्तों के अतिक्रमण को साबित करने के दायित्व का विधिमान्य रूप से निर्वहन किया है, विशेष रूप से उल्लंघनकारी यान के मार्ग परमिट के संबंध में और यदि ऐसा है, तो क्या उनको यान के स्वामी को क्षतिपूर्ति प्रदान करने और दावाकर्ताओं को प्रतिकर का संदाय करने के उनके दायित्व से पूर्णतया मुक्त किया जा सकता है ?

(2) क्या अधिकरण द्वारा पारित अधिनिर्णय में उल्लिखित रकम उचित और निष्पक्ष रूप से प्रदान किया गया प्रतिकर है ?

7. यद्यपि अधिकरण ने यह निष्कर्ष निकाला कि अपीलार्थी इंश्योरेंस कंपनी और साथ ही उल्लंघनकारी यान के स्वामी और चालक इस बात को साबित करने में दयनीय रूप से विफल रहे कि दुर्घटना के समय उल्लंघनकारी यान का चालन मार्ग परमिट के अतिक्रमण में किया जा रहा था, फिर भी अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य की सूक्ष्म संवीक्षा से, विशेष रूप से प्रत्यर्थी साक्षी सज्जाद हुसैन डार और रमीज अहमद नजर के कथन से, यह स्पष्ट हो जाता है कि सुसंगत समय बिंदु पर उल्लंघनकारी यान के पक्ष में विधिमान्य परमिट मौजूद था यद्यपि, वह

बटमालू से श्रीनगर शहर के पूर्वी क्षेत्र के मध्य विधिमान्य था । स्वीकृततः, दुर्घटना तब घटित हुई जब यान डोडबाथरी से वापस आ रहा था और खान साहेब बदगाम पहुंच गया था । अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से यह स्पष्ट नहीं हो रहा है कि वह स्थान जहां दुर्घटना घटित हुई, श्रीनगर शहर के पूर्वी क्षेत्र के भीतर स्थित था, चूंकि इस क्षेत्र को कहीं पर भी परिभाषित नहीं किया गया । तथापि, इस तथ्य को न्यायिक रूप से अवेक्षित करते हुए कि डोडपाथरी और साथ ही खान साहेब, दोनों ही स्थान बदगाम जिले के अंतर्गत आते हैं और इसलिए किसी भी दृष्टिकोण से यह नहीं कहा जा सकता कि वे श्रीनगर शहर के पूर्वी क्षेत्र के भाग हैं । श्रीनगर शहर के पूर्वी क्षेत्र का समस्त प्रयोजनों के लिए अर्थ श्रीनगर शहर तक सीमित है । इस स्थितिवश अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के आधार पर यह बात स्पष्टतः साबित हो जाती है कि उल्लंघनकारी यान दुर्घटना के समय ऐसे मार्ग पर चल रहा था जिसके लिए विधिमान्य परमिट जारी नहीं किया गया था ।

8. अतः उपरोक्तानुसार अभिनिर्धारित करते हुए, अलग प्रश्न जिसका विनिर्धारण मेरे द्वारा किया जाना है, यान के स्वामी की क्षतिपूर्ति किए जाने के प्रयोजनार्थ अपीलार्थी इंश्योरेंस कंपनी के दायित्व के संबंध में है । अपीलार्थी इंश्योरेंस कंपनी द्वारा जिन निर्णयों का अवलंब लिया गया है उनका उल्लेख ऊपर किया गया है और वे स्पष्टतया इस विधि को अधिकथित करते हैं कि बिना विधिमान्य परमिट के यान का चालन बीमा पॉलिसी की मूल शर्तों का व्यतिक्रम है और बीमाकर्ता को यान के स्वामी की क्षतिपूर्ति किए जाने के उसके दायित्वों से मुक्त कर देता है । माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णयों का सतर्कतापूर्वक परिशीलन किए जाने पर अपीलार्थी को जो अनुतोष प्रदान किया जा सकता है, उसके संबंध में यह बात स्पष्ट है कि उच्चतम न्यायालय ने पूर्वोक्त मामले में परमिट, जैसाकि मोटर यान अधिनियम (जिसको इसमें इसके पश्चात् 'अधिनियम' कहकर निर्दिष्ट किया गया है) की धारा 2(31) के अधीन परिभाषित परमिट और मार्ग परमिट के मध्य अंतर को परिभाषित किया है । बिना परमिट के यान का चालन इंश्योरेंस पॉलिसी की मूल शर्त का व्यतिक्रम हो सकता है और इसके आधार पर बीमा कंपनी को यान के स्वामी की क्षतिपूर्ति किए जाने

के दायित्व से मुक्त किए जाने की ईप्सा कर सकता है, किंतु मात्र इस कारणवश कि उल्लंघनकारी यान दुर्घटना के समय उस मार्ग पर चलाए जाने के बजाय किसी अन्य मार्ग पर चलाया जा रहा था जिसके लिए उसको अनुज्ञप्ति प्राप्त थी, बीमा पॉलिसी की मूल शर्त का व्यतिक्रम नहीं होगा और इस आधार पर बीमाकर्ता द्वारा बीमाकृत को क्षतिपूर्ति प्रदान किए जाने के दायित्व से मुक्त नहीं किया जा सकता ।

9. अधिनियम की धारा 149 इंश्योरेंस कंपनी को कतिपय रक्षोपायों के लिए उपबंधित करती है । निर्देश की सुविधा के लिए अधिनियम की धारा 149 को नीचे प्रत्युत्पादित किया गया है :-

> "**149. पर-व्यक्ति जोखिमों की बाबत बीमाकृत व्यक्तियों के विरुद्ध हुए निर्णयों और अधिनिर्णयों की तुष्टि करने का बीमाकर्ताओं का कर्तव्य** - (1) यदि किसी व्यक्ति के पक्ष में, जिसने पालिसी कराई है, धारा 147 की उपधारा (3) के अधीन बीमा-प्रमाणपत्र दे दिए जाने के पश्चात् धारा 147 की उपधारा (1) के खंड (ख) के अधीन (या धारा 163क के उपबंधों के अधीन) पालिसी द्वारा पूरा करने के लिए अपेक्षित दायित्व के संबंध में (जो दायित्व पालिसी के निबंधनों के अंतर्गत है) ऐसे किसी व्यक्ति के विरुद्ध निर्णय या अधिनिर्णय अभिप्राप्त कर लिया जाता है जिसका पालिसी द्वारा बीमा किया गया है, तो इस बात के होते हुए भी कि बीमाकर्ता पालिसी को शून्य करने या रद्द करने का हकदार है अथवा उसने पालिसी शून्य या रद्द कर दी है, बीमाकर्ता इस धारा के उपबंधों के अधीन रहते हुए डिक्री का फायदा उठाने के हकदार व्यक्ति को, उस दायित्व के संबंध में उसके अधीन देय राशि जो बीमाकृत राशि से अधिक न होगी, खर्चों की बाबत देय किसी रकम तथा निर्णयों पर ब्याज संबंधी किसी अधिनियमिति के आधार पर उस राशि पर ब्याज की बाबत देय किसी धनराशि सहित इस प्रकार देगा मानो वह निर्णीतऋणी हो ।
>
> (2) उपधारा (1) के अधीन किसी बीमाकर्ता द्वारा कोई राशि, किसी निर्णय या अधिनिर्णय के संबंध में तभी देय होगी जब उन कार्यवाहियों के प्रारंभ के पूर्व जिनमें निर्णय या अधिनिर्णय दिया

गया है, बीमाकर्ता को उन कार्यवाहियों के लाए जाने की अथवा किसी निर्णय या अधिनिर्णय के संबंध में जब तक उसका निष्पादन अपील के लंबित रहने पर रोक दिया गया है सूचना, यथास्थिति, न्यायालय या दावा अधिकरण के माध्यम से मिल चुकी थी अन्यथा नहीं है, और कोई बीमाकर्ता जिसे ऐसी किन्हीं कार्यवाहियों के लाए जाने की सूचना इस प्रकार दी गई है, उसका पक्षकार बनाए जाने और निम्नलिखित आधारों में से किसी आधार पर प्रतिवाद करने का हकदार होगा, अर्थात् –

(क) पालिसी की किसी विनिर्दिष्ट शर्त का भंग किया गया है, जो निम्नलिखित शर्तों में से एक है, अर्थात् –

(i) ऐसी शर्त, जो यान का निम्नलिखित दशाओं में उपयोग किया जाना अपवर्जित करती है, अर्थात् –

(क) भाड़े या पारिश्रमिक के लिए, जब वह यान बीमा संविदा की तारीख को ऐसा यान है जो भाड़े या पारिश्रमिक पर चलाने के परमिट के अंतर्गत नहीं है; या

(ख) आयोजित दौड़ और गति परीक्षा के लिए; या

(ग) जिस परमिट के अधीन यान का उपयोग किया जाता है उसके द्वारा अनुज्ञात न किए गए प्रयोजन के लिए, जब वह यान परिवहन यान है; या

(घ) साइड कार संलग्न किए बिना, जब यान मोटरसाइकिल है; या

(ii) ऐसी शर्त जो नामित व्यक्ति या व्यक्तियों द्वारा या ऐसे किसी व्यक्ति द्वारा जो सम्यक् रूप से अनुज्ञप्त नहीं है या ऐसे किसी व्यक्ति द्वारा, जिसे चालन अनुज्ञप्ति धारण या अभिप्राप्त करने से निरर्हित कर दिया गया है, निरर्हता की अवधि के दौरान, यान या चलाया जाना अपवर्जित करती है ; या

(iii) ऐसी शर्त जो युद्ध, गृहयुद्ध, बल्वे या सिविल अशांति की स्थिति के कारण उसके योगदान से हुई क्षति के लिए दायित्व अपवर्जित करती है; या

(ख) वह पालिसी इस आधार पर शून्य है कि वह किसी तात्विक तथ्य के प्रकट न किए जाने से, अथवा ऐसे तथ्य के व्यपदेशन से, जिसकी कोई तात्विक विशिष्टि मिथ्या है, अभिप्राप्त की गई थी ।

(3) जहां कोई ऐसा निर्णय, जैसा उपधारा (1) में निर्दिष्ट है, किसी व्यतिकारी देश के न्यायालय से अभिप्राप्त किया गया है तथा विदेशी निर्णय की दशा में वह उस विषय की बाबत, जिसका न्यायनिर्णयन उसके द्वारा किया गया है, सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) की धारा 13 के उपबंधों के आधार पर निश्चायक है वहां बीमाकर्ता [जो बीमा अधिनियम, 1938 (1938 का 4) के अधीन रजिस्ट्रीकृत बीमाकर्ता है, भले ही वह व्यतिकारी देश की तत्समान विधि के अधीन रजिस्ट्रीकृत हो या न हो] डिक्री का फायदा उठाने के हकदार व्यक्ति के प्रति उस रीति से और उस विस्तार तक जो उपधारा (1) में विनिर्दिष्ट है, ऐसे दायी होगा मानो वह निर्णय भारत के किसी न्यायालय द्वारा दिया गया हो :

परंतु बीमाकर्ता द्वारा कोई राशि किसी ऐसे निर्णय के संबंध में तभी संदेय होगी जब उन कार्यवाहियों के, जिनमें निर्णय दिया गया है, प्रारंभ में पूर्व बीमाकर्ता को उन कार्यवाहियों के लाए जाने की सूचना संबंधित न्यायालय के माध्यम से मिल चुकी थी, बनाए जाने और उपधारा (2) में विनिर्दिष्ट आधारों के समान आधारों पर प्रतिवाद करने का हकदार है ।

(4) जहां उस व्यक्ति को, जिसने पालिसी कराई है, धारा 147 की उपधारा (3) के अधीन बीमा-प्रमाणपत्र दे दिया गया है वहां पालिसी का उतना भाग, जितना उस पालिसी द्वारा बीमाकृत व्यक्तियों का बीमा उपधारा (2) के खंड (ख) में दी गई शर्तों से भिन्न किन्हीं शर्तों के निर्देश से निर्बंधित करने के लिए तात्पर्यित है,

धारा 147 की उपधारा (1) के खंड (ख) के अधीन पालिसी के द्वारा पूरा करने के लिए अपेक्षित दायित्वों के संबंध में प्रभावहीन होगा :

परंतु बीमाकर्ता द्वारा किसी व्यक्ति से किसी दायित्व के निर्वहन में या मद्दे दी गई कोई धनराशि, जो केवल उस उपधारा के आधार पर पालिसी के अंतर्गत है, बीमाकर्ता द्वारा उस व्यक्ति से वसूलनीय होगी ।

(5) यदि वह रकम, जिसे बीमाकर्ता पालिसी द्वारा बीमाकृत व्यक्ति द्वारा उपगत दायित्व की बाबत देने के लिए इस धारा के अधीन जिम्मेदार हो जाता है, उस रकम से अधिक है जिसके लिए बीमाकर्ता, इस धारा के उपबंधों के अलावा, उस दायित्व की बाबत पालिसी के अधीन दायी होगा, तो बीमाकर्ता उस अधिक रकम को उस व्यक्ति से वसूल करने का हकदार होगा ।

(6) इस धारा में "तात्विक तथ्य" और "तात्विक विशिष्टि" पदों से क्रमश: इस प्रकार का तथ्य या इस प्रकार की विशिष्टि अभिप्रेत है जिससे किसी भी व्यवहारकुशल बीमाकर्ता के विवेक पर वह अवधारित करने में प्रभाव पड़े कि क्या वह जोखिम उठाए और यदि वह ऐसा करे तो कितने प्रीमियम पर तथा किन शर्तों पर करे और "जो दायित्व पालिसी के निबंधनों के अंतर्गत है" पद से ऐसा दायित्व अभिप्रेत है जो पालिसी के अंतर्गत है या जो इस तथ्य के न होने पर पालिसी के अंतर्गत होता कि बीमाकर्ता, पालिसी को शून्य या रद्द करने का हकदार है या उसे शून्य या रद्द कर चुका है ।

(7) कोई भी बीमाकर्ता, जिसे उपधारा (2) या उपधारा (3) में निर्दिष्ट सूचना दे दी गई है, उपधारा (1) में निर्दिष्ट किसी ऐसे निर्णय या अधिनिर्णय का या उपधारा (3) में निर्दिष्ट निर्णय में फायदा उठाने के हकदार किसी व्यक्ति के प्रति अपने दायित्व को उस रीति से भिन्न रीति से शून्य करने का हकदार होगा, जो, यथास्थिति, उपधारा (2) में या व्यतिकारी देश की तत्समान विधि में उपबंधित है, अन्यथा नहीं ।

स्पष्टीकरण – इस धारा के प्रयोजनों के लिए "दावा अधिकरण" से धारा 165 के अधीन गठित दावा अधिकरण और "अधिनिर्णय" से धारा 168 के अधीन उस अधिकरण द्वारा किया गया अधिनिर्णय अभिप्रेत है ।"

10. धारा 149 (उपरोक्त) के परिशीलन से यह स्पष्टत: ज्ञात होता है कि इस धारा का खंड 2(क)(i)(क) उस यान से संबंधित है जो किराए या पारिश्रमिक के आधार पर चालन किए जाने के प्रयोजनार्थ जारी किए गए परमिट द्वारा आच्छादित नहीं होता और इसका प्रयोग उस कार्य के लिए किया जा रहा है जो परमिट द्वारा आच्छादित नहीं है । इस धारा को सावधानीपूर्वक संपूर्णता में पढ़े जाने पर पूर्णतया स्पष्ट हो जाता है कि यान के परमिट का अतिक्रमण इंश्योरेंस कंपनी को उपलब्ध विभिन्न रक्षोपायों में से किसी एक रक्षोपायों के रूप में परिकल्पित नहीं है । इस धारा के खंड 2(क)(i)(ग) में यह उपबंधित है कि इंश्योरेंस कंपनी इस बाबत अपनी प्रतिरक्षा कर सकती है कि दुर्घटना के समय यान का प्रयोग किसी ऐसे उद्देश्य के लिए किया जा रहा था जो परमिट द्वारा अनुज्ञप्त नहीं था और जिसके अंतर्गत उस यातायात यान का प्रयोग किया जाना अनुज्ञप्त है । इस खंड को इस अर्थ को आच्छादित किए जाने के प्रयोजनार्थ विस्तारित नहीं किया जा सकता कि वह मार्ग, जिस पर यान का चालन किए जाने के लिए परमिट प्रदान किया गया है, के अलावा किसी अन्य मार्ग पर यान का प्रयोग किए जाने का परिणाम यह होगा कि यान का प्रयोग किसी ऐसे प्रयोजन के लिए किया गया जिसके लिए उसका प्रयोग किया जाना परमिट द्वारा अनुज्ञप्त नहीं था । स्वीकृतत: उल्लंघनकारी यान, जो कि एक यातायात यान है, का प्रयोग ऐसे ही किसी उद्देश्य के लिए घटना के समय किया गया था । यही स्वीकृत स्थिति होने के कारण यह नहीं कहा जा सकता कि अपीलार्थी इंश्योरेंस कंपनी यान के स्वामी की क्षतिपूर्ति के अपने दायित्व से इस आधार पर मुक्त हो गई है कि दुर्घटना के समय उल्लंघनकारी यान का चालन परमिट द्वारा अनुज्ञप्त मार्ग पर नहीं किया जा रहा था । इस भिन्नता को ध्यान में रखते हुए और अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा उद्धृत विधि की प्रतिपादना को विवादित न करते हुए मेरा यह विचार है कि

अपीलार्थी द्वारा जिस प्रथम आधार पर अधिनिर्णय को चुनौती दी गई है, वह गुणागुण से रहित है और अस्वीकृत किए जाने योग्य है ।

11. दावाकर्ताओं को अधिकरण द्वारा प्रदान किए गए प्रतिकर की रकम पर विचार करते हुए यह उल्लेख किया जाता है कि मृतक, जो कि सरकारी कर्मचारी है, की मासिक आय के बाबत विवाद नहीं है । मृतक की आयु को ध्यान में रखते हुए उसकी आय में भविष्य की संभावनाओं के रूप में 20 प्रतिशत वृद्धि की जानी चाहिए थी । अपीलार्थी द्वारा आय और व्यक्तिगत व्ययों के बाबत की गई कटौतियों को भी विवादित नहीं किया गया है । तथापि, जिस बात को अपीलार्थी इंश्योरेंस कंपनी द्वारा विवादित किया गया है, वह यह है कि अधिकरण ने इस तथ्य पर ध्यान नहीं दिया कि मृतक एक सरकारी कर्मचारी था और दावाकर्ता उसके ऊपर लागू सेवा विनियमों के अधीन दस वर्षों की अवधि के लिए उसके वेतन के 50 प्रतिशत के हकदार थे । तथापि, अपीलार्थी द्वारा पूर्वोक्त अभिवाक् को मान्य ठहराए जाने के प्रयोजनार्थ अभिलेख पर कुछ भी प्रस्तुत नहीं किया गया है । मैं, उपरोक्त बातों को ध्यान में रखते हुए दावाकर्ताओं के पक्ष में प्रदान किए गए प्रतिकर की संगणना के संबंध में कोई शैथिल्य नहीं पाता ।

12. मैं, पूर्वोक्त कारणोंवश इस अपील में कोई गुणागुण नहीं पाता और यह अपील तद्नुसार खारिज की जाती है । यदि प्रदान की गई रकम को इस न्यायालय में जमा कर दिया जाता है, तो उस रकम को रजिस्ट्री द्वारा अधिकार पूर्ण दावाकर्ताओं को उचित सत्यापन और पहचान के पश्चात्, अधिनिर्णय में समाविष्ट नियमों और शर्तों का कड़ाईपूर्वक पालन करते हुए निर्मुक्त कर दिया जाएगा ।

अपील खारिज की गई ।

शु.

आल त्रिपुरा बुक सेलर्स एंड पब्लिशर्स, अगरतला, त्रिपुरा और अन्य

बनाम

त्रिपुरा राज्य और अन्य

[2018 की रिट याचिका (सिविल) संख्या 1112]

तारीख 18 अप्रैल, 2019

मुख्य न्यायमूर्ति संजय करोल और न्यायमूर्ति अरिंदम लोध

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 14 [साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 115 और संविदा अधिनियम, 1872 की धारा 20] – विधिसम्मत प्रत्याक्षा और वचन-विबंध के सिद्धांतों की उपयोगिता – मंत्री ने मीडिया के समक्ष कथन में कक्षा 1 से कक्षा 8 के लिए राष्ट्रीय शिक्षा, अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् का पाठ्यक्रम कार्यान्वित किए जाने का उल्लेख किया – उनके इस उल्लेख का अर्थान्वयन कक्षा 9 और उससे आगे की कक्षाओं के पाठ्यक्रम में परिवर्तन न किए जाने के प्रयोजनार्थ सारगर्भित वचन के रूप में नहीं किया जा सकता ।

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 14 [साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 115] – विधिसम्मत प्रत्याक्षा और वचन-विबंध के सिद्धांतों की उपयोगिता – याचियों के संघ ने राज्य द्वारा बिना किसी पुष्टिकरण के स्वेच्छयापूर्वक मंत्री के कथन का अवलंब लिया और पुराने पाठ्यक्रम के आधार पर कक्षा 9 और उससे आगे की कक्षाओं की पुस्तकों का मुद्रण और प्रकाशन जारी रखा – याचियों का अभिवाक् कि बिना किसी पूर्व सूचना के कक्षा 9 और उससे आगे की कक्षाओं के पाठ्यक्रम में परिवर्तन के कारण उनको भारी हानि उठानी पड़ी – इस न्यायालय का मत है कि याचियों को शिक्षा नीति में प्रभावी किए जा रहे परिवर्तनों के बाबत सावधान होना चाहिए था ।

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 14 [साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 115] – विधिसम्मत प्रत्याक्षा और वचन-विबंध के सिद्धांतों की

उपयोगिता – राज्य और याचियों के मध्य पुराने पाठ्यक्रम के आधार पर पुस्तकों के मुद्रण और प्रकाशन के संबंध में कोई भी संविदा निष्पादित नहीं की गई थी – राज्य द्वारा वचन को पूरा किए जाने के बाबत कोई भी आश्वासन नहीं दिया गया था – अतः विधिसम्मत प्रत्याक्षा और वचन-विबंध के सिद्धांतों का अवलंब नहीं लिया जा सकता ।

संक्षेप में मामले के तथ्य ये हैं कि तारीख 14 जून, 2018 को दैनिक समाचारपत्र 'त्रिपुरा आब्ज़र्वर' में त्रिपुरा सरकार के शिक्षा मंत्री श्री रतन लाल नाथ द्वारा किए गए कथन को उद्धृत करते हुए यह समाचार प्रकाशित किया गया, "त्रिपुरा के समस्त सरकारी विद्यालयों में कक्षा 1 से कक्षा 8 के लिए राष्ट्रीय शिक्षा अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् (संक्षेप में "परिषद्") के संपूर्ण पाठ्यक्रम को क्रियान्वित किए जाने के उद्देश्य से आज शिक्षा मंत्री पुस्तकों के अनुवाद कार्य की प्रगति की समीक्षा करने के लिए अगरतला के राज्य शिक्षा, अनुसंधान और प्रशिक्षण काउंसिल के कार्यालय का दौरा किया । बुधवार को अपराह्न राज्य शिक्षा, अनुसंधान और प्रशिक्षण काउंसिल के कार्यालय के समक्ष पत्रकारों से वार्ता करते हुए शिक्षा मंत्री ने कहा कि 'हम नई सरकार के गठन के पश्चात् नए उपायों के बारे में विचार कर रहे हैं, क्योंकि हमारे छात्र अखिल भारतीय प्रतियोगी परीक्षाओं में पिछड़ रहे हैं, विशेष रूप से शिक्षा के क्षेत्र में ।' मंत्री ने आगे कहा कि राज्य सरकार ने कक्षा 1 से कक्षा 8 तक परिषद् के पाठ्यक्रम को संपूर्णता में लागू करने का निर्णय लिया है और अन्य पाठ्यक्रम क्रियाकलापों के साथ-साथ बड़े पैमाने पर पाठ्य पुस्तकों के अनुवाद का कार्य किया जा रहा है । उन्होंने आगे बताया कि मेरे दौरे का उद्देश्य मात्र अनुवाद कार्य की प्रगति की समीक्षा करने का है । मंत्री ने आगे कहा कि राज्य सरकार द्वारा चलाए जा रहे विद्यालयों में पढ़ने और उत्तीर्ण होने वाले छात्र बहुधा पाठ्यक्रम में भिन्नताओं के कारण बाधाओं का सामना करते हैं और इसलिए नए पाठ्यक्रम को लागू किए जाने की यह पहल की जा रही है । मंत्री ने आगे बताया कि पूर्ववर्ती सरकारों ने परिषद् के पाठ्यक्रम की मात्र पद्धति को क्रियान्वित किया था, किंतु वर्तमान सरकार किसी पद्धति के पक्ष में नहीं है और इसके बजाय परिषद् का संपूर्ण पाठ्यक्रम लागू कर रही है । याचियों ने मंत्री के

उपरोक्त कथन का अवलंब लेते हुए व्यक्तिगत रूप से और त्रिपुरा राज्य के पुस्तक विक्रेताओं और मुद्रकों के संघ के रूप में वचन-विबंध और विधिसम्मत प्रत्याक्षा के सिद्धांतों का अवलंब लेते हुए राज्य के शिक्षा सत्र 2019 के लिए कक्षा 9 के लिए बंगाली माध्यम में परिषद् की पाठ्य पुस्तकों के अनुवाद और पुस्तकों के प्रकाशन के लिए तारीख 18 नवंबर, 2018 की निविदा आमंत्रित किए जाने की राज्य सरकार की कार्यवाई को चुनौती दी । यह कार्रवाई मंत्री द्वारा दिए गए उपरोक्त आश्वासन के परिणामस्वरूप है । वर्तमान याचिका में इस न्यायालय द्वारा विचारार्थ जो प्रश्न उद्भूत हुआ है, वह यह है कि क्या अकेले मंत्री द्वारा किया गया कथन, जैसाकि समाचारपत्र में संप्रकाशित किया गया, वचन-विबंध (Promissory Estoppel) और विधिसम्मत प्रत्याक्षा (Legitimate Expectation) के सिद्धांत का अवलंब लिए जाने का आधार बनाया जा सकता है । याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – मंत्री ने कभी नहीं कहा कि कक्षा 9 और उसके आगे की कक्षाओं के लिए पाठ्यक्रम में कोई परिवर्तन होने जा रहा है । वे अनुवाद के कार्य का निरीक्षण करने गए थे, जिसे समिति की सिफारिशों के अनुसरण में किया गया । हां, उन्होंने निश्चयात्मक रूप से यह अभिकथित किया कि राष्ट्रीय शैक्षणिक अनुसंधान तथा प्रशिक्षण परिषद् का पाठ्यक्रम कक्षा 1 से कक्षा 8 के लिए है किंतु तत्पश्चात् इस कथन का यह अर्थ नहीं निकाला जा सकता कि इस कथन के माध्यम से कोई सारगर्भित वचन दिया गया था कि कक्षा 9 और उसके ऊपर के कक्षाओं के पाठ्यक्रम में कोई परिवर्तन नहीं किया जा रहा है । क्या मंत्री ने कभी ऐसा कोई कथन किया था, यह एक भिन्न मामला है । किंतु काल्पनिक रूप से यह उपधारणा करते हुए, क्योंकि समाचारपत्रों द्वारा इस मामले को शुद्धत: संसूचित किया गया है, काफी पहले जून, 2018 में यह हुआ था और उसके पश्चात् उन घटनाओं के संबंध में, जिनका हमने इस मामले में पहले उल्लेख किया है, पुल के नीचे से अत्यधिक जल बह चुका है । यह महत्वपूर्ण है कि मंत्री का याचियों को लुभाने वाला कथन, जो सारगर्भित प्रकृति का है और जिसके द्वारा पूर्व की प्रथाओं के जारी रहने के लिए कहा गया था, किन्हीं न्यायिक संबंधों में

फलित नहीं होते । याची पूरा प्रयास कर रहे थे । वे उन घटनाओं के बारे में जानते थे, जो घटित हुई थी । उन्होंने अपनी स्वेच्छया के आधार पर पुस्तकों को मुद्रित और प्रकाशित किया था । उनको ऐसा करते समय सावधान रहना चाहिए था । उन पर किताबें प्रकाशित करने की कोई विधिक बाध्यता नहीं थी । उन्होंने बोर्ड या प्राधिकारियों से कोई सहमति नहीं मांगी थी । उन्होंने न्यायालय की शरण में जाने से पहले प्रक्रिया के अंतिम होने और निविदा आमंत्रित किए जाने की सूचना के प्रकाशन होने तक जून, 2018 से तारीख 30 नवंबर, 2018 तक प्रतीक्षा की, और तारीख 30 नवंबर, 2018 वह तारीख है जिसको उन्होंने याचिका फाइल की, उन्होंने बच्चों के हितों की रक्षा के बजाय अपने धन को बचाने का प्रयास करते हुए मात्र व्यग्रता का प्रदर्शन किया । पुन: दोहराते हुए यह स्पष्ट किया जाता है कि याची विद्यालयों की पुस्तकों के प्रकाशकों और मुद्रकों का एक संघ है । उनसे यह प्रत्याक्षा की जाती है कि वे सावधान रहें और सामान्यतया इस बाबत जागरुक रहें कि बाजार/व्यापार में क्या घटित हो रहा है । ऐसा नहीं है कि सरकार ने जल्दबाजी में अनुचित रूप से व्यग्रता दिखाते हुए गुप्त रूप से कोई निर्णय ले लिया हो । सरकार का यह निर्णय लोक अधिक्षेत्र में था । नीति में परिवर्तन हो रहा था, जिसके बाबत सभी लोगों की जानकारी थी । सरकार अप्रैल, 2018 से केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड का पाठ्यक्रम प्रस्तावित किए जाने के लिए प्रयास कर रही थी । इस प्रयोजन के लिए एक चयन समिति का गठन किया गया था । सैद्धांतिक रूप से इस कमेटी की रिपोर्ट मंजूर कर ली गई थी । इस रिपोर्ट के मतावलंबन में पाठ्यक्रम का अनुवाद बंगाली में आरंभ किया गया था जिसकी निरंतर निरीक्षण किया जा रहा था । याची अपने व्यापार में नौसिखिए नहीं हैं, और न ही वे राज्य के लिए नए पक्ष हैं । उनको अपने कारबार के क्षेत्र में होने वाली नई गतिविधियों के बारे में जागरुक होना चाहिए था । इसलिए, उनके द्वारा यह दलील दिया जाना गलत है कि प्राधिकारियों द्वारा उनको उनके द्वारा किए गए पत्र व्यवहार का कोई उत्तर नहीं दिया गया था, उनको प्राधिकारियों की गतिविधियों के बारे में जानकारी नहीं थी । वास्तव में मत्वपूर्ण रूप से उन्होंने इसी प्रकार के एक पत्र

व्यवहार में इस प्रकार के तथ्य के बारे में जानकारी होना स्वीकार किया है और प्रार्थना की है कि प्रकाशकों और मुद्रकों के हितों की रक्षा हेतु इस विनिश्चय को स्थगित कर दिया जाए । यहां पर यह महत्वपूर्ण है कि सिवाए तीन करोड़ रुपए (लगभग) के मूल्य वाली पुस्तकें प्रकाशित किए जाने के स्पष्ट प्रकथनों के पुस्तकों के प्रकाशन का कोई भी सबूत प्रस्तुत नहीं किया गया है । तारीखें भी लापता हैं । क्या स्थिति में परिवर्तन ऐसे किसी प्रत्यावेदन पर आधारित हो सकता है या नहीं, यह सुसंगत तथ्य है । इस पहलू पर सभी विवरण स्पष्ट रूप से मौन हैं । अत:, हम विधि के सिद्धांत पर चर्चा किए जाने और वर्तमान मामले के तथ्यों को लागू किए जाने के पश्चात् इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि याचियों के पक्ष में ऐसा कोई भी मामला नहीं बनता है जो उन्हें किसी भी अनुतोष के लिए हकदार बनाता हो । जैसीकि पहले ही चर्चा की जा चुकी है, याचियों के संघ के सदस्य व्यापार करते हैं । उनको इस बात की पूर्ण जानकारी थी कि राज्य द्वारा शिक्षा नीति में परिवर्तन किया जा रहा है । किसी भी समय बिंदु पर यह नहीं देखा गया है कि राज्य ने याचियों से पुस्तकों के मुद्रण और प्रकाशन के लिए कभी कोई संविदा की हो । याचियों पर ऐसा करने के लिए कोई कानूनी या संविदात्मक बाध्यता अधिरोपित नहीं हुई है । उन्होंने स्वतंत्रतापूर्वक और स्वेच्छयापूर्वक पुस्तकें प्रकाशित कीं । उन्हें वर्ष 2009 में ही नीति में किसी भी परिवर्तन की संभावना के बारे में सूचित कर दिया गया था । उन्होंने अपनी स्वतंत्र इच्छा से राज्य द्वारा बिना किसी कानूनी या अन्यथा रूप से पुष्टि, बाध्यता के पुस्तकों का प्रकाशन जारी रखा । पुन: दोहराते हुए, हम यह स्पष्ट करते हैं कि राज्य ने किसी को, यहां तक कि याची संघ को भी कभी कोई आश्वासन नहीं दिया । उनको विधित: प्रवर्तनीय अधिकार के अतिरिक्त अन्य कोई अधिकार नहीं है । काल्पनिक रूप से परिकल्पित करते हुए कि इस प्रकार का कोई आश्वासन विद्यमान था, फिर भी प्रशासनिक विधि के न्यायशास्त्र के सिद्धांतों के आधार पर भी यह नितांत रूप से अप्रवर्तनीय होगा क्योंकि हम वृहत्त लोक हित और समस्त अभिभावी और विधिसम्मत प्रत्याक्षा और वचन विबंध के समस्त अभिभावी सिद्धांतों, जैसाकि माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा मोनेट

इस्पात वाले मामले में अधिकथित किया गया, को विद्यमान्यता में पाते हैं और वर्तमान मामले में इसकी कमी पाते हैं । इस बाबत कि क्या मंत्रीमंडल के समक्ष मामले को प्रस्तुत किए बिना निविदा आमंत्रित किए जाने की सूचना जारी की जा सकती है या नहीं, स्वयमेव ही महत्वपूर्ण विषय है क्योंकि सुसंगत विभाग ने पहले ही इस संबंध में विनिश्चय ले लिया है और किसी भी पक्ष का यह पक्ष कथन नहीं है कि विभाग अन्यथा रूप से ऐसा करने के लिए प्राधिकृत, सशक्त या हकदार नहीं था । हमको ऐसा प्रतीत होता है कि केवल सावधानी को दृष्टि में रखते हुए इस मामले को मंत्रीमंडल के समक्ष प्रस्तुत कर दिया गया था और इस प्रकार का दृष्टिकोण अपनाए जाने में यह न्यायालय कोई त्रुटि नहीं पाता । (पैरा 39, 40, 41, 42, 43, 47, 52, 53 और 54)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2019] ए. आई. आर. 2019 त्रिपुरा 16 :
स्वपना प्रिंटिंग वर्क्स प्राइवेट लिमिटेड और एक अन्य बनाम **त्रिपुरा राज्य** ; 17

[2017] (2017) 4 एस. सी. सी. 269 = ए. आई. आर. 2017 एस. सी. 337 :
रिलायंस टेलीकॉम लिमिटेड बनाम **भारत संघ और एक अन्य** ; 31

[2016] (2016) 11 एस. सी. सी. 31 = 2015 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 6849 :
लालाराम और अन्य बनाम **जयपुर विकास प्राधिकरण और एक अन्य** ; 4

[2015] (2015) 9 एस. सी. सी. 132 = ए. आई. आर. 2015 एस. सी. 2348 :
देवी मल्टीप्लेक्स और एक अन्य बनाम **गुजरात राज्य और अन्य** ; 4

[2015] (2015) 8 एस. सी. सी. 139 = ए. आई. आर. 2015 एस. सी. 1976 :
पी. सुशीला और अन्य बनाम **विश्वविद्यालय अनुदान आयोग और अन्य** ; 32

[2012] (2012) 11 एस. सी. सी. 1 :
मोनेट इस्पात एंड एनर्जी लिमिटेड बनाम **भारत संघ** ; 27

[2011] (2011) 9 एस. सी. सी. 286 = ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 3298 :
आंध्र प्रदेश डेयरी डेवलपमेंट कारपोरेशन फेडरेशन बनाम **बी. नरसिम्हा रेड्डी और अन्य** ; 5

[2008] (2008) 7 एस. सी. सी. 353 = ए. आई. आर. 2008 एस. सी. 2838 :
तमिलनाडु इलेक्ट्रिसिटी बोर्ड बनाम **स्टेटस स्पिनिंग मिल्स लिमिटेड और एक अन्य** ; 4

[2008] (2008) 5 एस. सी. सी. 609 = ए. आई. आर. 2008 एस. सी. 2045 :
अरुणाचल प्रदेश राज्य बनाम **नेजोन लॉ हाऊस, असम** ; 25

[2007] (2007) 5 एस. सी. सी. 447 = ए. आई. आर. 2007 एस. सी. 1984 :
सदर्न प्रेट्रोकेमिकल्स इंडस्ट्रीज कंपनी लिमिटेड बनाम **इलेक्ट्रिसिटी इंस्पेक्टर एंड ईटिओ और अन्य** ; 4

[2006] (2006) 8 एस. सी. सी. 381 = 2006 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 5312 :
राम प्रवेश सिंह और अन्य बनाम **बिहार राज्य और अन्य** ; 35

[2006] (2006) 13 एस. सी. सी. 542 = ए. आई. आर. 2007 एस. सी. 750 : **भारत संघ और अन्य** बनाम **एशियन फूड इंडस्ट्रीज** ; 4

[2006] (2006) 2 एस. सी. सी. 545 : **बिहार राज्य और अन्य** बनाम **प्रोजेक्ट उच्च विद्या शिक्षक संघ और अन्य** ; 5

[2005] 2005 लिगल ईग्ल - 172 = 2005 (80) डी. आर. जे. 699 : **दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा प्रदीप कुमार महाजन** बनाम **दिल्ली विकास प्राधिकरण** ; 5

[2004] (2004) 6 एस. सी. सी. 465 = ए. आई. आर. 2004 एस. सी. 4559 : **पंजाब राज्य** बनाम **नेस्ले इंडिया लिमिटेड** ; 4

[2003] (2003) 5 एस. सी. सी. 437 = ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 3983 : **भारत संघ और एक अन्य** बनाम **इंटरनेशनल ट्रेडिंग कंपनी और एक अन्य** ; 34

[1993] (1993) 3 एस. सी. सी. 499 = ए. आई. आर. 1994 एस. सी. 988 : **भारत संघ और अन्य** बनाम **हिंदुस्तान डेवलपमेंट कारपोरेशन और अन्य** ; 5

[1991] (1991) 1 एस. सी. सी. 761 = ए. आई. आर. 1991 एस. सी. 14 : **बसंत कुमार राधाकृष्ण बोरा** बनाम **बोर्ड आफ ट्रस्टिज ऑफ द बोर्ड ऑफ बम्बे और एक अन्य** ; 4

[1985] (1985) 1 ऑल इंग्लैंड रिपोर्टर 40 : **आर.** बनाम **सेक्रेटरी ऑफ स्टेट फॉर द होम डिपार्टमेंट, एक्स पार्टी खान** ; 4

[1979] (1979) 2 एस. सी. सी. 409 = ए. आई. आर. 1979 एस. सी. 621 : **मोती लाल पदमपत सुगर मिल्स कंपनी लिमिटेड** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ; 27

[1968] ए. आई. आर. 1968 एस. सी. 718 : **भारत संघ** बनाम **एंग्लो अफगान एजेंसीज** । 27

आरंभिक रिट अधिकारिता : 2018 की रिट याचिका (सिविल) संख्या 1112.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 32 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से श्री सोमिक देब

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री ए. के. भौमिक (महाधिवक्ता) और (सुश्री) मनीषा चक्रबोर्ती

न्यायालय का निर्णय मुख्य न्यायमूर्ति संजय करोल ने दिया ।

न्या. करोल – वर्तमान याचिका में हमारे द्वारा विचारार्थ जो प्रश्न उद्भूत हुआ है, वह यह है कि क्या अकेले मंत्री द्वारा किया गया कथन, जैसाकि समाचार-पत्र में संप्रकाशित किया गया, वचन-विबंध (Promissory Estoppel) और विधिसम्मत प्रत्याक्षा (Legitimate Expectation) के सिद्धांत का अवलंब लिए जाने का आधार बनाया जा सकता है ।

2. तारीख 14 जून, 2018 को दैनिक समाचार-पत्र 'त्रिपुरा औब्ज़र्वर' में अन्य बातों के साथ-साथ त्रिपुरा सरकार के शिक्षा मंत्री द्वारा किए गए कथन को उद्धृत करते हुए निम्नलिखित समाचार प्रकाशित किए गए :–

> "त्रिपुरा के समस्त सरकारी विद्यालयों में कक्षा 1 से कक्षा 8 के लिए राष्ट्रीय शिक्षा अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् के संपूर्ण पाठ्यक्रम को क्रियान्वित किए जाने के उद्देश्य से आज शिक्षा मंत्री श्री रतन लाल नाथ ने राष्ट्रीय शिक्षा अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् की पुस्तकों के अनुवाद कार्य की प्रवृत्ति की समीक्षा करने

के लिए अगरतला के राज्य शिक्षा अनुसंधान और प्रशिक्षण काउंसिल के कार्यालय का दौरा किया ।

बुधवार को अपराह्न राष्ट्रीय शिक्षा अनुसंधान और प्रशिक्षण काउंसिल के कार्यालय के समक्ष पत्रकारों से वार्ता करते हुए शिक्षा मंत्री श्रीनाथ ने कहा कि 'हम नई सरकार के गठन के पश्चात् अब हम नए उपायों के बारे में विचार कर रहे हैं, क्योंकि हमारे छात्र अखिल भारतीय प्रतियोगी परीक्षाओं में पिछड़ रहे हैं, विशेष रूप से शिक्षा के क्षेत्र में ।' श्रीनाथ ने कहा कि राज्य सरकार ने कक्षा 1 से कक्षा 8 तक राष्ट्रीय शिक्षा अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् के पाठ्यक्रम को संपूर्णता में लागू करने का निर्णय लिया है और अन्य पाठ्यक्रम क्रियाकलापों के साथ-साथ बड़े पैमाने पर पाठ्य पुस्तकों के अनुवाद का कार्य किया जा रहा है । उन्होंने आगे बताया कि मेरे दौरे का उद्देश्य मात्र अनुवाद कार्य की प्रगति की समीक्षा करने का है । मंत्री ने आगे कहा कि राज्य सरकार द्वारा चलाए जा रहे विद्यालयों में पढ़ने वाले और उत्तीर्ण होने वाले छात्र बहुधा पाठ्यक्रम में भिन्नताओं के कारण बाधाओं का सामना करते हैं और इसलिए नए पाठ्यक्रम को लागू किए जाने की यह पहल की जा रही है । नाथ ने आगे बताया कि पूर्ववर्ती सरकारों ने राष्ट्रीय शिक्षा अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् के पाठ्यक्रम की मात्र पद्धति को क्रियान्वित किया था, किंतु वर्तमान सरकार किसी पद्धति के पक्ष में नहीं है और इसके बजाय यह सरकार राष्ट्रीय शिक्षा अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् की संपूर्ण पाठ्यक्रम सामग्री को लागू कर रहा है ।"

(अधोरेखांकन पर बल दिया गया)

3. याचियों ने मंत्री महोदय के उपरोक्त कथन का अवलंब लेते हुए व्यक्तिगत रूप से और त्रिपुरा राज्य के पुस्तक विक्रेताओं और मुद्रकों के संघ के रूप में वचन-विबंध और विधि संबंधी प्रत्याक्षा के सिद्धांतों का अवलंब लेते हुए राज्य की शिक्षा सत्र 2019 के बाबत कक्षा 9 के लिए बंगाली माध्यम में राष्ट्रीय शिक्षा अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् की पाठ्य पुस्तकों के अनुवाद के लिए पुस्तकों के प्रकाशन के लिए तारीख 18 नवंबर, 2018 की निविदा आमंत्रित किए जाने की राज्य सरकार की

कार्रवाई याचिका को चुनौती दी । यह कार्रवाई (याचिका) मंत्री द्वारा दिए गए उपरोक्त आश्वासन के परिणामस्वरूप फाइल की गई है ।

4. रिट याचियों के विद्वान् काउंसेल श्री सोमिक देब ने इस न्यायालय का ध्यान हाल्सबरी के लॉ आफ इंग्लैंड के चौथे संस्करण के खंड 1(1) में समाविष्ट विधिसम्मत प्रत्याक्षा के लेखांश की ओर आकर्षित किया और दलील दी कि किसी प्राधिकारी द्वारा किए गए कथन या दिए गए वचन, जिसमें सारगर्भित कथन और साथ ही निरंतर चली आ रही पुरानी प्रथाएं सम्मिलित हैं, से प्रत्याक्षा उद्भूत होती है । विद्वान् काउंसेल के अनुसार इस प्रकार की विधिसम्मत प्रत्याक्षा के कारण याचियों के विधिक रूप से प्रवर्तनीय अधिकार सृजित हो गए हैं । याचियों द्वारा विधिक-विबंध के सिद्धांत का अवलंब लिए जाने के लिए याचिओं को यह अधिकार होगा कि वे सारगर्मित वचन के अभिवाक् का आश्य लें । याचियों के प्रत्यावेदन का उत्तर देने में प्रत्यर्थियों की विफलता के कारण ऐसे अधिकारों को बल मिला है । इसके अतिरिक्त संविदा (निविदा) प्रदान किए जाने में पक्षपात भी हुआ है और सबसे अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि बच्चों के हितों के साथ समझौता हुआ है । विद्वान् काउंसेल ने अपनी दलीलों के संबंध में **बसंत कुमार राधाकृष्ण बोरा** बनाम **बोर्ड ऑफ ट्रस्टिज ऑफ द बोर्ड ऑफ बम्बे और एक अन्य**[1], **पंजाब राज्य** बनाम **नेस्ले इंडिया लिमिटेड**[2], **सदर्न प्रेट्रोकेमिकल्स इंडस्ट्रीज कंपनी लिमिटेड** बनाम **इलेक्ट्रिसिटी इंस्पेक्टर एंड ईटिओ और अन्य**[3], **देवी मल्टीप्लेक्स और एक अन्य** बनाम **गुजरात राज्य और अन्य**[4], **तमिलनाडु इलेक्ट्रिसिटी बोर्ड** बनाम **स्टेटस स्पिनिंग मिल्स लिमिटेड और एक अन्य**[5], **भारत संघ और अन्य** बनाम **एशियन फूड इंडस्ट्रीज**[6], **लालाराम और अन्य** बनाम **जयपुर विकास प्राधिकरण**

---

[1] (1991) 1 एस. सी. सी. 761 = ए. आई. आर. 1991 एस. सी. 14.

[2] (2004) 6 एस. सी. सी. 465 = ए. आई. आर. 2004 एस. सी. 4559.

[3] (2007) 5 एस. सी. सी. 447 = ए. आई. आर. 2007 एस. सी. 1984.

[4] (2015) 9 एस. सी. सी. 132 = ए. आई. आर. 2015 एस. सी. 2348.

[5] (2008) 7 एस. सी. सी. 353 = ए. आई. आर. 2008 एस. सी. 2838.

[6] (2006) 13 एस. सी. सी. 542 = ए. आई. आर. 2007 एस. सी. 750.

और एक अन्य[1], **आर.** बनाम **सेक्रेटरी ऑफ स्टेट फॉर द होम डिपार्टमेंट, एक्स पार्टी खान**[2], हाल्सबरी के लॉ आफ इंग्लैंड के चौथे संस्करण के खंड 16, पृष्ठ 1017 और कार्पस ज्यूरिसप्रूडेंस के खंड 31, पृष्ठ 367 का अवलंब लिया ।

5. इसके विपरीत विद्वान् महाधिवक्ता श्री अरुण कांति भौमिक ने निवेदन किया कि (क) वर्तमान याचिका निष्फल हो चुकी है और अब इस मामले में चर्चा मात्र शैक्षणिक प्रकृति की रह गई है, (ख) याचिका के अन्तर्गत दी गई चुनौती अन्य वर्गों के बजाय मात्र वर्ग-9 तक सीमित होने के कारण चयनात्मक है, अत:, दुर्भावनापूर्ण है, (ग) मंत्री ने पाठ्यक्रम, जो वास्तव में शिक्षा प्रणाली को 2009 के नि:शुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम (संक्षेप में 'अधिनियम') के उपबंधों के सामांजस्य में लाए जाने के प्रयोजनार्थ परिवर्तित हो चुका है, को चुनौती न दिए जाने के बाबत कभी कोई वायदा नहीं किया और (घ) और इसके संबंध में किसी विनिर्दिष्ट वायदे या अभिवचन के अभाव में विधिसम्मत प्रत्याक्षा और वचन-विबंध के सिद्धांत लागू नहीं होते । अपनी दलीलों के समर्थन में उन्होंने उच्चतम न्यायालय द्वारा **बिहार राज्य और अन्य** बनाम **प्रोजेक्ट उच्च विद्या शिक्षक संघ और अन्य**[3], **भारत संघ और अन्य** बनाम **हिंदुस्तान डेवलपमेंट कारपोरेशन और अन्य**[4], **आंध्र प्रदेश डेयरी डेवलपमेंट कारपोरेशन फेडरेशन** बनाम **बी. नरसिम्हा रेड्डी और अन्य**[5] और **दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा प्रदीप कुमार महाजन** बनाम **दिल्ली विकास प्राधिकरण**[6] वाले मामलों को निर्दिष्ट किया ।

6. हम पक्षों के विद्वान् काउंसेलों को सुनने और अभिलेख का परिशीलन करने के पश्चात् आरंभिकत: यह अभिकथित करते हैं कि

---

[1] (2016) 11 एस. सी. सी. 31 = 2015 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 6849.

[2] (1985) 1 ऑल इंग्लैंड रिपोर्टर 40.

[3] (2006) 2 एस. सी. सी. 545.

[4] (1993) 3 एस. सी. सी. 499 = ए. आई. आर. 1994 एस. सी. 988.

[5] (2011) 9 एस. सी. सी. 286 = ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 3298.

[6] 2005 लिगल ईग्ल - 172 = 2005 (80) डी. आर. जे. 699.

पक्षपात के अभिकथन अभिलेख से साबित नहीं होते और उनको इसी प्रक्रम पर अस्वीकृत किए जाने की आवश्यकता है । निविदा तारीख 18 नवंबर, 2018 की अधिसूचना के द्वारा आमंत्रित की गई थी । बोलियों के परीक्षण के लिए एक समिति गठित की गई थी जिसने बोलियों को अंतिम रूप दिया और न्यूनतम बोली लगाने वाले के पक्ष में तारीख 12 दिसंबर, 2018 को निविदा प्रदान कर दी गई । इस बात का उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि त्रिपुरा की ऑल त्रिपुरा बुक सेलर्स एंड पब्लिशर्स एसोसिएशन ने भी इस निविदा में भाग लिया था । निर्विवाद रूप से कार्य-आदेश जारी किया जा चुका है और आपूर्तियां भी प्रभावी की जा चुकी है । तथापि, हम इस आधार पर याचिका की कार्यवाही बंद करने का आशय नहीं रखते कि यह याचिका निष्फल हो चुकी है ।

7. यह दलील दिया जाना कि राज्य ने पाठ्यक्रम में परिवर्तन करके बच्चों के हितों के साथ समझौता किया है, पूर्णतया त्रुटिपूर्ण है, चूंकि इस दलील का कोई आधार नहीं है । वास्तव में राज्य सरकार की इस कार्यवाही के अन्य मायने भी हैं । राज्य सरकार ने इस प्रयोजन के लिए गठित समिति की सिफारिशों के आधार पर सम्यक् रूप से विचार-विमर्श, जो पर्याप्त अवधि तक जारी रहा, के उपरांत राज्य के भीतर राष्ट्रीय शिक्षा अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्/केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड पाठ्यक्रम और पाठ्य पुस्तकों को सरकार के प्रबंधन के अधीन और सरकार से सहायता प्राप्त समस्त विद्यालयों में अंगीकृत किए जाने का विनिश्चय लिया था ताकि छात्रों को राष्ट्रीय स्तरमान के अनुकूल होने के समर्थ बनाया जा सके और व्यवसायिक और प्रतियोगी पाठ्यक्रमों के लिए आयोजित होने वाली राष्ट्रीय संयुक्त परीक्षा का सामना करने के योग्य बनाया जा सके । राज्य इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि उसके छात्र व्यवसायिक और अन्य महाविद्यालयों/ स्नातक पाठ्यक्रमों में प्रत्याक्षित प्रवीणता अभिप्राप्त करने में पिछड़ रहे हैं । इसलिए राज्य सरकार का यह कार्य इस प्रयोजनार्थ था कि राज्य ने त्रिपुरा के समस्त विद्यालयों में नए पाठ्यक्रम और साथ ही नवीन पाठ्यक्रमों को लागू करने का निर्णय लिया ।

8. 2009 का अधिनियम 2009 में ही अधिसूचित कर दिया गया

था । इस अधिनियम का उद्देश्य सभी को समान अवसर प्रदान किए जाने के प्रयोजनार्थ उपबंधित किए जाने के माध्यम से लोकतंत्र के सामाजिक तानेबाने को सुदृढ़ करना था । यह कर्तव्य राज्यों पर अधिरोपित किया गया था कि वे बच्चों को मुफ्त और अनिवार्य रूप से शिक्षा उपलब्ध कराएं और साथ ही अभिभावकों पर भी इस बात को सुनिश्चित करने के लिए कर्तव्य अधिरोपित करें । देश में प्राथमिक विद्यालयों के महत्वपूर्ण रूप से भारी संख्या में विस्तार के बावजूद सभी को प्राथमिक शिक्षा प्रदान किए जाने का लक्ष्य विलुप्तप्राय ही बना रहा था । बच्चे, विशेष रूप से उन समूहों के बच्चे जिनको लाभ नहीं मिल पा रहा और कमजोर वर्गों के बच्चे गुणवतापूर्ण शिक्षा से वंचित बने रहे । छंट जाने वाले बच्चों की दर अत्यधिक थी । पढ़ाई के लक्ष्य को अभिप्राप्त किए जाने की गुणवत्ता असंतोषप्रद थी । यह अधिनियम अनुच्छेद 21-क के अधीन समाविष्ट संवैधानिक आज्ञा को पूर्ण किए जाने के प्रयोजनार्थ अधिनियमित किया गया था ।

9. इस अधिनियम के अधीन प्राथमिक शिक्षा के लिए पाठ्यक्रम और मूल्यांकन प्रक्रिया को शैक्षणिक प्राधिकारी द्वारा अधिकथित किया जाना था जिसको समुचित सरकार द्वारा अधिसूचना द्वारा विनिर्दिष्ट किया जाना था । राज्य को अधिनियम के उपबंधों के क्रियान्वयन के प्रयोजनार्थ सलाहकार परिषद् का गठन करना था । राज्य ने इसी पृष्ठभूमि में सभी विद्यालयों में पाठ्यक्रम के पुनर्मूल्यांकन के पश्चात् कानून की परिधि के भीतर रहते हुए सभी छात्रों को गुणवत्ता से परिपूर्ण शिक्षा प्रदान किए जाने के प्रयोजनार्थ एक नीतिगत निर्णय लिया । सरकार ने उच्चतर कक्षाओं, जो अधिनियम के उपबंधों की परिधि के अंतर्गत नहीं आती थीं, के संबंध में, राष्ट्रीय निकाय अर्थात् राष्ट्रीय शिक्षा अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् द्वारा अंतर्वलित पाठ्यक्रम को समान रूप से लागू करने के निर्णय को उचित समझा । सरकार की इच्छा थी कि बच्चे ऐसी रीति में शिक्षित हों जिससे कि वे जीवन के प्रत्येक पहलू में राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिस्पर्धा कर सकें । यह न्यायालय इसी पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि सरकार ने वृहत्तर लोक हित में कार्य किया है ।

10. त्रिपुरा सरकार ने मामले की तथ्यात्मक स्थिति पर विस्तारपूर्वक विचार करते हुए मार्च, 2018 में राज्य के भीतर सरकार के प्रबंध के अधीन समस्त विद्यालयों और सहायता प्राप्त विद्यालयों के संबंध में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान तथा प्रशिक्षण परिषद्/केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के पाठ्यक्रम के अंगीकरण की संभाव्यताओं के परीक्षण के प्रयोजनार्थ एक समिति के गठन का निर्णय लिया ।

11. तारीख 5 अप्रैल, 2018 को विद्यालय शिक्षा के प्रमुख सचिव द्वारा एक बैठक आहूत की गई जिसमें कक्षा 1 से कक्षा 8 के लिए राष्ट्रीय शिक्षा अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् की पाठ्यपुस्तकों का बंगाली माध्यम में अनुवाद किए जाने के प्रयोजनार्थ एक समिति का गठन किए जाने का भी निर्णय लिया गया, प्रयास यह था कि 2019 के शैक्षणिक सत्र से सटीक केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड पाठ्यक्रम पुर:स्थापित किया जाए ।

12. तारीख 25/26 जून, 2018 को समिति, जिसको राज्य स्तरीय उच्च शक्ति प्राप्त समिति (जिसको इसमें इसके पश्चात् 'समिति' कहकर निर्दिष्ट किया गया है) कहा गया, ने विस्तृत विचार-विमर्श के पश्चात् एकमत से त्रिपुरा के विद्यालयों में कक्षा 1 से 10 में अध्यनरत छात्रों के लिए राष्ट्रीय शिक्षा अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्/केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड पाठ्यक्रम और पाठ्य पुस्तकों को अंगीकृत किए जाने की सिफारिश कर दी । ऐसा प्रतीत होता है कि उसके पूर्व राज्य के मुख्यमंत्री के तत्वाधान में अनेक पुनर्विलोकन बैठकें होती रहीं । यह सब कुछ 2018 के अगस्त/नवंबर माह में हुआ, जिस समय तक प्राधिकारियों ने निश्चायक रूप से एक विचार बना लिया था और समिति की सिफारिशों को स्वीकार करने का निर्णय ले लिया था, ताकि राज्य के भीतर की शिक्षा प्रणाली को संपूर्ण देश में लागू शिक्षा प्रणाली के सामंजस्य में लाया जा सके । पुस्तकों के अनुवाद के कार्य की त्रिपुरा सरकार के शिक्षा मंत्री द्वारा उत्साहपूर्वक देखरेख की गई, जिन्होंने आवधिक रूप से समुचित प्राधिकारी द्वारा किए जा रहे इस कार्य के अनेक निरीक्षण किए ।

13. मंत्री ने तारीख 13 जून, 2018 को प्रेस के समक्ष एक कथन

किया कि सरकार ने कक्षा 1 से कक्षा 8 तक के लिए राष्ट्रीय शिक्षा अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् के पाठ्यक्रम को क्रियान्वित करने का निर्णय ले लिया है ।

14. त्रिपुरा राज्य ने तारीख 23 नवंबर, 2018 को शिक्षा अनुसंधान और प्रशिक्षण की राज्य परिषद् के निदेशक के पक्ष में 4.98 करोड़ रुपए (लगभग) की रकम की निधियां अंतरित कर दीं ।

15. इसके अतिरिक्त तारीख 30 नवंबर, 2018 को 2.22 करोड़ रुपए (लगभग) से अधिक की रकम शिक्षा अनुसंधान और प्रशिक्षण राज्य परिषद् द्वारा राष्ट्रीय शिक्षा अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् के प्रकाशन खंड के पक्ष में अंतरित कर दी गई थी । यह पाठ्य पुस्तकों को उपाप्त किए जाने के प्रयोजनार्थ किया गया था ।

16. तारीख 18 नवंबर, 2018 को अगरतला स्थित शिक्षा अनुसंधान और प्रशिक्षण राज्य परिषद् के निदेशक ने कक्षा 9 के लिए बंगाली, गणित, विज्ञान, इतिहास, राजनीति विज्ञान, अर्थशास्त्र और भूगोल की पाठ्य पुस्तकों के मुद्रण, जिल्दबंदी और आपूर्ति के लिए ई-निविदाएं आमंत्रित कीं । यह अभिलेख का मामला है कि कार्य बोलियों के अधिमूल्यन के साथ ही न्यूनतम बोलीदाता को आबंटित हो जाता है ।

17. वास्तव में निदेशक ने इसके पहले 2019 के शैक्षणिक सत्र के लिए कक्षा 1 से 9 की पाठ्य पुस्तकों के मुख्य पृष्ठों और आंतरिक पृष्ठों के बहुरंग और एकरंग मुद्रण के लिए ई-निविदाएं आमंत्रित की थीं । उक्त निविदा प्रक्रिया के लिए तारीख 24 जुलाई, 2018 का कार्य-आदेश न्याय-निर्णयन की विषय-वस्तु था और इस न्यायालय ने **स्वपना प्रिंटिंग वर्क्स प्राइवेट लिमिटेड और एक अन्य** बनाम **त्रिपुरा राज्य**[1] वाले मामले में तारीख 24 सितंबर, 2018 को पारित निर्णय द्वारा सभी पक्षों द्वारा प्रस्तुत की गई बोलियों पर विचार करने के लिए प्राधिकारी को निर्देशित करते हुए मध्यक्षेप किया ।

18. ऐसा प्रतीत होता है कि तारीख 18 नवंबर, 2018 की निविदा

---

[1] ए. आई. आर. 2019 त्रिपुरा 16.

आमंत्रित किए जाने के प्रयोजनार्थ सूचना जारी किए जाने के पश्चात् इस मामले को मंत्रीमंडल के समक्ष प्रस्तुत किया गया और तारीख 27 दिसंबर, 2018 को यह प्रस्ताव पारित किया गया कि राष्ट्रीय शिक्षा अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् पाठ्यक्रम/कक्षा 1 से 8 के लिए 2019 के शिक्षा सत्र से आरंभ होने वाले पाठ्यक्रम को अंगीकृत किया जाए और इसके अनुसरण में अगरतला स्थित त्रिपुरा सरकार के शिक्षा (विद्यालय) विभाग द्वारा तारीख 31 दिसंबर, 2018 की अधिसूचना जारी की गई ।

19. याची संख्या 1 त्रिपुरा राज्य में पुस्तक विक्रेताओं और प्रकाशकों का संघ है । उनको तारीख 23 सितंबर, 2009 की संसूचना द्वारा त्रिपुरा राज्य माध्यमिक शिक्षा बोर्ड द्वारा आश्वासन दिया गया था कि 2010 के शैक्षणिक सत्र के लिए कक्षा 1 से 12 के पाठ्यक्रम में कोई परिवर्तन नहीं किया जाएगा, किंतु बाद में सूचित किया गया कि पाठ्यक्रम में परिवर्तन किया जा रहा है और नए पाठ्यक्रम के बारे में सम्यक् प्रक्रिया का पालन करते हुए सूचित किया जाएगा । ऐसा प्रतीत होता है कि स्थिति ज्योंकि त्यों बनी रही और याचियों ने किसी भी परिवर्तन की अनुपस्थिति में अभिभावी पाठ्यक्रम के अनुसार पुस्तकों का मुद्रण और प्रकाशन जारी रखा ।

20. तथापि, याचियों ने तारीख 12 सितंबर, 2018 को शैक्षणिक सत्र - 2019 से और उसके आगे के लिए समस्त कक्षाओं के संबंध में पाठ्यक्रम में परिवर्तन के बाबत लिखते हुए तारीख 12 सितंबर, 2018 का एक पत्र अगरतला स्थित त्रिपुरा माध्यमिक शिक्षा बोर्ड से स्पष्टीकरण की ईप्सा करते हुए भेजा, जिसका कोई उत्तर नहीं दिया गया । इसके परिणामस्वरूप याचियों ने राज्य के मुख्यमंत्री को सीधे ही तारीख 15 नवंबर, 2018 का एक प्रत्यावेदन भेजा जिसका भी कोई उत्तर नहीं दिया गया । तत्पश्चात् त्रिपुरा राज्य के माननीय राज्यपाल को एक अन्य पत्र भेजा गया ।

21. याचियों ने अभिलेख पर एक सारणी के स्वरूप में कक्षा 9 से कक्षा 12 के संबंध में उनके द्वारा मुद्रित पुस्तकों के मूल्य के बारे में सूचित किया है, जो लगभग तीन करोड़ रुपए के मूल्य की हैं । अत: याचियों की शिकायत यह है कि राज्य ने एकपक्षीय रूप से बिना किसी

पूर्व सूचना के कक्षा 9 और उसके आगे की कक्षाओं का पाठ्यक्रम परिवर्तित कर दिया, जिस कारणवश उनको पहले प्रकाशित, मुद्रित और वितरित पुस्तकों के संबंध में अत्यधिक हानि का सामना करना पड़ा ।

22. याचियों के अनुसार तारीख 14 जून, 2018 को दैनिक समाचारपत्र, 'त्रिपुरा आब्जर्वर' में मंत्री द्वारा दिए गए प्रकाशित कथन के अनुसार मंत्री ने सरकार के केवल कक्षा 8 तक की कक्षाओं के लिए राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् के पाठ्यक्रम को कार्यान्वित किए जाने के सरकार के विनिश्चय को दोहराया था । मंत्री के इस कथन के कारण याचियों के मस्तिष्क में विधिसम्मत प्रत्याक्षाएं उत्पन्न हो गई थीं और इसी प्रलोभनवश उन्होंने पुराने पाठ्यक्रम के अनुसार पुस्तकों का प्रकाशन जारी रखा और इसी प्रलोभनवश याचियों ने अत्यधिक बड़ी रकम इस उपधारणा के साथ खर्च कर दी कि पाठ्यक्रम में कोई परिवर्तन नहीं होगा ।

23. इसलिए, जो मुख्य विवाद्यक हमारे विचारार्थ उद्भूत होता है, वह यह है कि क्या मंत्री ने किसी भी समय बिंदु पर यह वायदा किया था या यह प्रत्यावेदन किया था कि कक्षा 9 और उसके ऊपर के कक्षाओं के संबंध में पाठ्यक्रम में कोई परिवर्तन नहीं होगा ।

24. अब हम सर्वप्रथम इस विवाद्यक को ध्यान में रखते हुए विधि का परीक्षण करेंगे ।

25. क्या मंत्री द्वारा व्यक्त किए गए मौखिक विचार वचन-विबंध के माध्यम से किसी अधिकार को प्रदत्त किए जाने के द्वारा राज्य को बाध्य करते हैं या नहीं, यह विवाद्यक **अरुणाचल प्रदेश राज्य** बनाम **नेजोन लॉ हाऊस, असम**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के समक्ष विचारार्थ उद्भूत हुआ, जिसमें माननीय उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि ऐसे मामलों में वचन-विबंध और विधिसम्मत प्रत्याक्षा के सिद्धांत लागू नहीं होते ।

26. **नेस्ले इंडिया लिमिटेड** (उपरोक्त) वाले मामले में माननीय

---

[1] (2008) 5 एस. सी. सी. 609 = ए. आई. आर. 2008 एस. सी. 2045.

उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट रूप से अभिनिर्धारित किया है कि राज्य स्तरीय कार्यक्रम में दुग्ध उत्पादक किसानों को संबोधित करते हुए तत्कालीन मुख्यमंत्री द्वारा की गई घोषणा, जिसको समस्त समाचार-पत्रों में व्यापक रूप से प्रकाशित किया गया और उनके द्वारा की गई उद्घोषणा को सुसंगत वर्ष के लिए प्रस्तुत बजट के भाषण का भाग बनाया गया, और जिसके आधार पर कानूनी प्राधिकारियों ने उसके संबंध में विनिर्दिष्ट संसूचना जारी की, सरकार पर बाध्यकारी होंगे । यहां पर हम केवल इस बात को स्पष्ट करते हैं कि अभिकथित तथ्यात्मक स्थिति और विनिश्चयानुपात को दृष्टि में रखते हुए उक्त विनिश्चय लागू नहीं होता ।

27. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **लालाराम** (उपरोक्त) वाले मामले में अपने ही पूर्ववर्ती विनिश्चयों **भारत संघ** बनाम **एंग्लो अफगान एजेंसीज**[1], **मोती लाल पदमपत सुगर मिल्स कंपनी लिमिटेड** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[2], **नेस्ले इंडिया लिमिटेड** (उपरोक्त) और **मोनेट इस्पात एंड एनर्जी लिमिटेड** बनाम **भारत संघ**[3] वाले मामलों पर विचार करने के पश्चात् वचन-विबंध और विधिसम्मत प्रत्याक्षा के सिद्धांतों का अनुसरण किया, जो **सेंट्रल लंदन प्रोपर्टी ट्रस्ट लिमिटेड** बनाम **हाई ट्रीज़ हाऊस लिमिटेड**[4] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय से उद्भूत होते हैं ।

28. आवश्यकतः, **मोनेट इस्पात** (उपरोक्त) वाले मामले में प्रतिपादित सिद्धांत दोहराए गए हैं, जो इस प्रकार हैं :–

"वचन-विबंध :

.....

182.1. जहां किसी एक पक्ष ने जानबूझकर या आशयपूर्वक अपने शब्दों या आचरण द्वारा किसी अन्य पक्ष को स्पष्ट और असंदिग्ध वचन दिया है, जो इस बाबत विधिक संबंध सृजित किए

---

[1] ए. आई. आर. 1968 एस. सी. 718.

[2] (1979) 2 एस. सी. सी. 409 = ए. आई. आर. 1979 एस. सी. 621.

[3] (2012) 11 एस. सी. सी. 1.

[4] (1956) 1 ऑल इंग्लैंड रिपोर्टर 256.

जाने या भविष्य में कोई विधिक संबंध उद्भूत किए जाने के लिए आशयित हैं कि उस पर उस अन्य पक्ष द्वारा कार्यवाही की जाएगी जिसको वचन दिया गया है और अन्य पक्ष द्वारा वास्तव में उस पर कार्यवाही की जाती है, तो वह वचन उस पक्ष पर बाध्यकारी होगा जिसने वचन किया था और वह पक्ष उस वचन से मुकर जाने का हकदार नहीं होगा, उन संव्यवहारों को ध्यान में रखते हुए, जो पक्षों के मध्य सम्पन्न हो चुके हैं उसको ऐसा करने की अनुज्ञा प्रदान किया जाना साम्यापूर्ण होगा और ऐसा इस बात के बावजूद होगा कि क्या पक्षों के मध्य कोई पूर्व विद्यमान सम्बन्ध हैं या नहीं ।

182.2. वचन-विबंध का सिद्धांत सरकार के विरुद्ध लागू होगा, जहां न्यायहित, नैतिकता और सामान्य निष्पक्षता ऐसे किसी अनुक्रम के लिए अनुज्ञा प्रदान करते हों । यह सिद्धांत राज्य के विरुद्ध लागू होता है, यहां तक कि उसकी सरकारी, लोक या प्रभूसत्तासंपन्न हैसियत में भी, जहां कपट या प्रकट अन्याय को रोके जाने के लिए ऐसा किया जाना आवश्यक है । तथापि, सरकार या किसी निजी पक्ष से भी वचन-विबंध के सिद्धांत के अंतर्गत यह अपेक्षा नहीं की जा सकती कि वे विधि द्वारा प्रतिक्षिद्ध कार्य करें । उस कार्य की प्रकृति, जिसका निर्वहन सरकार करती है, अधिक सुसंगत नहीं होता । सरकार वचन-विबंध के नियम के अध्यधीन होती है और यदि इस सिद्धांत के अनिवार्य संघटको का समाधान हो जाता है तो सरकार को उसके द्वारा दिए गए वचन को पूरा करने के लिए विवश किया जा सकता है ।

182.3. वचन-विबंध का सिद्धांत का उपयोग केवल प्रतिरक्षा के प्रयोजन तक सीमित नहीं हैं किंतु यह वाद कारण भी प्रस्तुत कर सकता है अन्य शब्दों में वचन-विबंध का सिद्धांत स्वमेव ही कार्रवाई का आधार नहीं हो सकता ।

182.4. वचन विबंध के सिद्धांत का अवलंब लिए जाने के प्रयोजनार्थ वचनदाता के लिए यह आवश्यक है कि वह यह दर्शित करे कि उसने अन्य पक्ष द्वारा दिए गए वचन पर कार्य करते हुए

अपनी स्थिति को सुदृढ़ कर लिया है । वचनदाता द्वारा अपनी स्थिति को सुदृढ़ किया जाना इस सिद्धांत के उपयोग के लिए अनिवार्य है । तथापि, उसके लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह ऐसे किसी वचन में परिवर्तन के कारण किसी नुकसान, विपरीत प्रभाव या प्रतिकूल स्थिति को साबित करे ।

182.5. किसी भी मामले में वचन-विबंध के सिद्धांत की सहायता सरकार या किसी लोक प्राधिकारी को किसी प्रत्यावेदन या वचन जो विधि के विपरीत है या जो सरकार के अधिकारी या लोक प्राधिकारी के प्राधिकार या शक्ति के बाहर है, पर कार्रवाई किए जाने के प्रयोजनार्थ विवश करने के लिए नहीं ली जा सकती । ऐसे किसी भी वचन को प्रवर्तित नहीं किया जा सकता, जो कानूनी रूप से प्रतिषिद्ध है या लोक नीति के विरुद्ध है ।

182.6. यह वचन-विबंध के सिद्धांत का अवलंब लिए जाने के प्रयोजनार्थ यह आवश्यक है कि इसके लिए याचिका में एक स्पष्ट, दृढ़ और निश्चायक आधार स्थापित किया जाए । बिना किसी समर्थनकारी सामग्री के कोरे प्रकथन, अभिकथन या आरोप वचन-विबंध के सिद्धांत की सहायता लिए जाने के प्रयोजनार्थ पर्याप्त नहीं होते ।

182.7 वचन-विबंध का सिद्धांत का अवलंब सामान्य रूप से नहीं लिया जा सकता । जब इस सिद्धांत का अवलंब लिए जाने की ईप्सा की जाती है, तो न्यायालय को उस परिणाम को सम्मिलित करते हुए, जिसको अभिप्राप्त किए जाने की ईप्सा की गई है और वृहत्तर लोक हित को ध्यान में रखते हुए सभी पहलुओं पर विचार करना चाहिए । साम्या के मूल सिद्धांत को न्यायालय के विवेक में सदैव ही उपस्थित रहना चाहिए । इसकी अनुपस्थिति में सरकार या उसके लोक प्राधिकारी को अपने किसी वचन, आश्वासन या प्रत्यावेदन पर कार्रवाई किए जाने के लिए दायित्व अधिरोपित नहीं किया जा सकता ।

विधिसम्मत प्रत्याक्षा का सिद्धांत :

188.1 विधिसम्मत प्रत्याक्षा के सिद्धांत का अवलंब किसी सारभूत और प्रवर्तनीय अधिकार के रूप में लिया जा सकता है ।

188.2 विधिसम्मत प्रत्याक्षा का सिद्धांत युक्तिसंगतता और ऋजुता पर आधारित होता है । यह सिद्धांत नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों से उद्भूत होता है और विधिसम्मत प्रत्याक्षा और वचन-विबंध के सिद्धांतों के मध्य सामानांतर संबंद्ध होता है ।

188.3 जहां किसी प्राधिकारी का विनिश्चय लोक हित में विधि या कार्यकारी नीति पर आधारित होता है, तो न्यायालय ऐसे किसी विनिश्चय में विधिसम्मत प्रत्याक्षा के सिद्धांत का अवलंब लिए जाने के द्वारा मध्यक्षेप करने के अनिच्छुक होगा । विधिसम्मत प्रत्याक्षा के सिद्धांत का अवलंब प्रशासनिक नीति में परिवर्तन किए जाने के प्रयोजनार्थ नहीं लिया जा सकता, यदि वह ऐसा किया जाना लोक हित में हो ।

188.4 विधिसम्मत प्रत्याक्षा पूर्वानुमान से भिन्न होती है और किसी पूर्वानुमान के परिणाम स्वरूप प्राख्यान किए जाने योग्य प्रत्याक्षा नहीं हो सकती । इसी प्रत्याक्षा न्यायसंगत, विधिसम्मत और संरक्षणात्मक होनी चाहिए ।

188.5 विधिसम्मत प्रत्याक्षा का संरक्षण किसी ऐसी प्रत्याक्षा को पूर्ण किए जाने की अपेक्षा नहीं रखता जहां कोई अध्यारोही प्रभाव रखने वाला लोक हित अन्यथा अपेक्षा रखता हो । अन्य शब्दों में लोक हित को व्यक्तिगत लाभ के ऊपर रखा जाना चाहिए और ऐसी किसी विधिसम्मत प्रत्याक्षा का अवलंब नहीं लिया जाना चाहिए जो निजी लाभ के लिए लोक हित का मार्ग अवरुद्ध कर दे ।"

29. पुन:, **लालाराम** (उपरोक्त) वाले मामले में यह स्पष्ट कर दिया गया है कि किसी नागरिक की मात्र युक्तिसंगत या विधिसम्मत प्रत्याक्षा स्वमेव ही समस्त परिस्थितियों में सुभिन्न प्रवर्तनीय अधिकार नहीं हो सकती, किंतु इस पर सम्यक् रूप से विचार न किया जाना या महत्व न दिया जाना विनिश्चय को मनमानापूर्ण बना देगा । अत: यह अधिकथित किया गया कि विधिसम्मत प्रत्याक्षा पर सम्यक् रूप से विचार किए

जाने की अपेक्षा के कारण गैर मनमानेपन के सिद्धांत का भाग सृजित हो जाएगा, जो आवश्यक रूप से विधि के नियम का उल्लंघन होगा । उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि उत्तम प्रशासन के भाग के रूप में इस बाध्यता का पालन राज्य की कार्यवाही में गैर मनमानेपन की अपेक्षा द्वारा बाध्य है, जो परिणामस्वरूप राज्य पर इस बात को लागू कर देता है कि वह उन व्यक्तियों की युक्तिसंगत और विधिसम्मत प्रत्याक्षाओं को महत्व दें, जिनके विनिश्चय द्वारा प्रभावित होने की संभाव्यता हैं, ताकि ऐसा करने में कोई भी विफलता शक्ति के प्रयोग में भेदभाव की उदघोषण कर दे और साथ ही विनिश्चय को दुरुपयोग या सद्भाव की कमी के कारण दूषित कर दे । न्यायालय ने दोहराया कि विधिसम्मत प्रत्याक्षा का सिद्धांत युक्तिसंगतता और ऋजुता के सिद्धांतों पर आधारित है और नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत से उद्भूत होता है और इसका अवलंब सारभूत और प्रवर्तनीय अधिकार के रूप में लिया जा सकता है ।

30. आगे, न्यायालय इस प्रश्न का परीक्षण करने के लिए अग्रसर हुआ कि क्या प्रशासनिक विवेकाधिकार अनियमित हो सकता है या नहीं और मताभिव्यक्ति की, जो निम्नलिखित है :-

> "141. ..... प्रशासनिक शासन का केंद्रीय और मुख्य सिद्धांत कर्तव्य के साथ बंधे हुए विवेकाधिकार के नियंत्रित प्रयोग के ढ़ांचे को लागू करना है, जो प्रशासनिक विधि के उपयुक्त निबंधनों में अंकित है, जैसाकि एच. डब्ल्यू. आर. वेड और सी. एफ. फोरसिथ द्वारा लिखित एडमिनिस्ट्रेटिव लॉ के दसवें संस्करण के पृष्ठ 286 पर उल्लिखित है और जिसे यहां पर उद्धृत किया जा रहा है -
>
> > 'प्रथम अपेक्षा इस बात की स्वीकृति है कि सभी शक्तियों की विधिक सीमाएं होती हैं । अगली अपेक्षा भी कम महत्वपूर्ण नहीं है, जो यह है कि न्यायालयों को उन सीमाओं का सीमांकन ऐसी रीति में करना चाहिए जो कार्यकारी कार्यकुशलता और नागरिकों के विधिक संरक्षण के मध्य अत्यधिक उपयुक्त संतुलन कायम करती हो । ....."
> >
> > (अधोरेखांकन पर बल दिया गया ।)

31. **रिलायंस टेलीकॉम लिमिटेड** बनाम **भारत संघ और एक अन्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने दोहराया कि विधिसम्मत प्रत्याक्षा का सिद्धांत लोक हित पर अध्यारोही प्रभाव कभी भी नहीं रख सकता और जब वृहत्तर लोक हित अंतर्वलित होता है, तो विधिसम्मत प्रत्याक्षा का प्रश्न उत्पन्न नहीं होगा ।

32. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **पी. सुशीला और अन्य** बनाम **विश्वविद्यालय अनुदान आयोग और अन्य**[2] वाले मामले में अभिनिर्धारित किया कि विधिसम्मत प्रत्याक्षा अधिक से अधिक उन आधारों में से एक आधार हो सकती है जो न्यायिक पुनर्विलोकन को उत्पन्न करता हो किंतु अनुतोष प्रदान करना अत्यधिक सीमित कार्य होता है ।

33. इस विवाद्यक पर माननीय उच्चतम न्यायालय ने अत्यधिक पहले **हिंदुस्तान डेवलपमेंट कारपोरेशन और अन्य** (उपरोक्त) वाले मामले में जो मताभिव्यक्ति की, वह निम्नलिखित है :-

> "35. ..... यदि किसी मामले में विधिसम्मत प्रत्याक्षा से इनकार किसी प्रत्याभूत अधिकार को प्रदान करने से इनकार किए जाने के समान है या प्रदान किया जाना मनमानापूर्ण, पक्षपातपूर्ण, अनुचित है, शक्ति का घोर दुरुपयोग है, नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का अतिक्रमण है, तो ऐसे इनकार को अनुच्छेद 14 को आकर्षित करने वाले विख्यात आधारों पर चुनौती दी जा सकती है किंतु बिना किसी अन्य बात के मात्र विधिसम्मत प्रत्याक्षा पर आधारित दावा इन सिद्धांतों का अवलंब लिए जाने का अधिकार स्वमेव ही प्रदान नहीं करता । यह विचार किए जाने योग्य एक आधार हो सकता है किंतु न्यायालय को आवरण को ऊपर उठाना चाहिए और देखना चाहिए कि क्या विनिश्चय इन सिद्धांतों का उल्लंघनकारी है और मध्यक्षेप अपेक्षित है । .....
>
> इसका अर्थ यह है कि <u>विधिसम्मत प्रत्याक्षा की संकल्पना 'ऐसी पूंजी नहीं है जो नैसर्गिक न्याय के खजाने के ताले को खोल</u>

---

[1] (2017) 4 एस. सी. सी. 269 = ए. आई. आर. 2017 एस. सी. 337.

[2] (2015) 8 एस. सी. सी. 139 = ए. आई. आर. 2015 एस. सी. 1976.

देती हो और इस चाबी के द्वारा उस द्वार पर लगे हुए ताले को नहीं खोला जाना चाहिए जो न्यायालय को गुणागुण पर पुनर्विलाकन करने से रोक देता हो ।' विशेष रूप से जब अनुमान और अनिश्चितता का तत्व उस संकल्पना में अंतर्निहित हो । जैसाकि **अटार्नी जनरल फार न्यू साऊथ वेल्स** वाले मामले में चेतावनी दी गई है न्यायालयों को स्वयं को विरत रखना चाहिए और इस प्रकार के दावों के निपटारे का कर्तव्य विधिक परिसीमाओं के अंतर्गत करना चाहिए । यह एक भलीभांति आशयित सावधानी है । अन्यथा कोई साधनसंपन्न मुकदमेबाज, जिसका संविदाओं, अनुज्ञप्तियों इत्यादि में निहित हित हो, नीति निर्देश सिद्धांतों द्वारा आज्ञापक कल्याणकारी क्रियाकलापों के किए जाने में सफलतापूर्वक अंतर्वलित हो सकता है ।"

(अधोरेखांकन पर बल दिया गया ।)

34. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **भारत संघ और एक अन्य** बनाम **इंटरनेशनल ट्रेडिंग कंपनी और एक अन्य**[1] वाले मामले में अभिनिर्धारित किया कि यदि राज्य युक्तिसंगतता की सीमाओं के भीतर कार्य करता है, तो यह विधिसम्मत होगा कि राष्ट्रीय प्राथमिकताओं पर विचार किया जाए और व्यापार नीतियों को अंगीकृत किया जाए ।

35. पुनः, माननीय उच्चतम न्यायालय ने **राम प्रवेश सिंह और अन्य** बनाम **बिहार राज्य और अन्य**[2] वाले मामले में विधिसम्मत प्रत्याक्षा के अर्थ को विधिक अधिकार के रूप में परिभाषित नहीं किया है, बल्कि लाभ, अनुतोष या उपचार की प्रत्याक्षा, जो साधारणतया किसी वचन या स्थापित प्रथा से उद्भूत होती है, के रूप में परिभाषित किया है । शब्द 'स्थपित प्रथा' को नियमित, संगत, स्थापनीय और विनिश्चय करने वाले प्राधिकारी के कतिपय आचरण, प्रक्रिया या क्रियाकलाप के रूप में अभिनिर्धारित किया गया है । प्रत्याक्षा विधिसम्मत होगी, अर्थात् युक्तिसंगत, तर्कसंगत और वैध । कदाचनिक (sporadic) या कारण

---

[1] (2003) 5 एस. सी. सी. 437 = ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 3983.

[2] (2006) 8 एस. सी. सी. 381 = 2006 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 5312.

संबंधी (Causal) या यादृच्छिक (Random) कार्यों या जो अयुक्तियुक्त, तर्कहीन या अविधिमान्य है, पर आधारित कोई भी प्रत्याक्षा विधिसम्मत प्रत्याक्षा नहीं हो सकता । न्यायालय समुचित मामलों में वचनाधीन प्रक्रिया या स्थापित प्रथा का अनुसरण किए जाने के प्राधिकार की अपेक्षा वाले निर्देश प्रदान कर सकता है । यहां तक कि जब कोई विधिसम्मत प्रत्याक्षा की जाती है, तो वह सदैव ही अपेक्षाकर्ता को किसी अनुतोष के लिए हकदार नहीं बनाती । लोक हित, नीति में परिवर्तन, अपेक्षाकर्ता का आचरण या विनिश्चयकर्ता द्वारा दिया गया कोई अन्य विधिमान्य या सद्भावी कारण विधिसम्मत प्रत्याक्षा को नकारे जाने के लिए पर्याप्त हो सकता है । स्थापित प्रथा (वचन पर आधारित विधिसम्मत प्रत्याक्षा के विपरीत) पर आधारित विधिसम्मत प्रत्याक्षा के सिद्धांत का अवलंब केवल किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा लिया जा सकता है, जो किसी प्राधिकारी के साथ कारबार या संव्यवहार या विचार-विमर्श करता है, और जिस पर इस प्रकार की स्थापित प्रथा अभिभावी है या इसका अवलंब किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा लिया जा सकता है, जो प्राधिकारी के साथ मान्यता प्राप्त विधिक संबंध रखता है ।

36. उच्चतम न्यायालय ने **बी. नरसिम्हा रेड्डी** (उपरोक्त) वाले मामले में जो मताभिव्यक्ति की, वह निम्नलिखित है :-

> "45. इसलिए, यह स्पष्ट है कि न्यायालय ऐसा कोई आदेश पारित नहीं करेगा जो सरकार पर उसके द्वारा दिए गए वचन के आधार पर बाध्यकारी हो, जब तक कि प्रकट अन्याय या कपट, विशेष रूप से जब सरकार अपने शासकीय, लोक या प्रभूसत्ता संपन्न हैसियत में कार्य करती है, को रोके जाने के प्रयोजनार्थ ऐसा किया जाना अत्यंत आवश्यक न हो । विबंध सरकार या उसके समनुदेशिती, जब वह सरकार की हैसियत में कार्य कर रहा हो, के विरुद्ध क्रियान्वित नहीं होता ।"

37. अब, क्या हम कह सकते हैं कि मंत्री के कथन या राज्य के आचरण के आधार पर कोई असंदिग्ध वचन गठित होता है, जो याचियों में से किसी के प्रति विधिक संबंध या अधिकार सृजित किए जाने के

प्रयोजनार्थ आशयित हो ? क्या यह कहा जा सकता है कि इन सभी पक्षों में से किसी पक्ष ने उस वचन के आधार पर यह जानते हुए कार्य किया कि उसके द्वारा किया जाने वाला कार्य वचन की सीमा तक विस्तारित हो गया हैं ? क्या यह कहा जा सकता है कि किसी भी पक्ष ने उस पर (मंत्री के कथन या राज्य के आचरण) पर इस बात को जानते हुए कार्रवाई की कि (मंत्री का कथन या राज्य का आचरण) वचन का रूप ले चुका है ? क्या यह कहा जा सकता है कि इस समयबिंदु पर राज्य को कार्य के लिए अग्रसर होने की अनुज्ञा प्रदान किया जाना साम्यापूर्ण है और या किसी पूर्व विद्यमान संबंध की अनुपस्थिति में याचियों का हित अप्रतिसंहरणीय या असुधार्य रूप से प्रभावित हो जाएगा जिसके संबंध में इस न्यायालय द्वारा साम्यापूर्ण विचारणाओं को ध्यान में रखते हुए मध्यक्षेप किया जाना अपेक्षित है ?

38. इस न्यायालय की सुविचारित राय में इस प्रश्न का उत्तर नकारात्मक में है । मंत्री ने किसी को भी, यहां तक की याची को भी ऐसा कोई आश्वासन कभी नहीं दिया । **निज़ोन लॉ हाऊस** (उपरोक्त) वाले मामले में दी गई इतिरोक्ति को ध्यान में रखते हुए ऐसा नहीं हो सकता । साम्या के मूल सिद्धांत वृहत्तर लोक हित का अनदेखा नहीं करते, यहां तक कि किसी वचन की विद्यमान्यता की अवधारणा के द्वारा भी । साम्या राज्य में शिक्षा के स्तरमान और साथ ही याचियों के प्रबोधक अधिकार में अभिवृद्धि किए जाने के उद्देश्य में निहित होती है । बच्चों का हित सर्वोपरि होता है । अब वर्तमान मामले में इस बाबत स्पष्ट प्रकथन किया गया है – कोई सुस्पष्ट वचन, जो याचियों को कोई विधिक अधिकार या संबंध सुनिश्चित करता है । निश्चित रूप से नहीं । विधिसम्मत प्रत्याक्षा एक ऐसा सिद्धांत है जो अदृश्य नहीं हो सकता । यह पूर्वानुमान से भिन्न होता है जो किसी भी स्थिति में समर्थनीय प्रत्याक्षा नहीं हो सकता, चूंकि विधिसम्मत प्रत्याक्षा को न्यायसंगत, विधिसम्मत और संरक्षण योग्य होना चाहिए । हम केवल यह उल्लिखित कर सकते हैं कि प्रेस द्वारा संसूचित रहस्यमय तात्पर्यित कथन के अतिरिक्त ऐसी कोई भी सामग्री उपलब्ध नहीं है जिसके आधार पर साम्या के किसी सिद्धांत पर आधारित किसी अधिकार को स्थापित किया जा सके ।

39. मंत्री ने कभी नहीं कहा कि कक्षा 9 और उसके आगे की कक्षाओं के पाठ्यक्रम में कोई परिवर्तन होने जा रहा है । वे अनुवाद के कार्य का निरीक्षण करने गए थे, जिसे समिति की सिफारिशों के अनुसरण में किया गया । हां, उन्होंने निश्चयात्मक रूप से यह अभिकथित किया कि राष्ट्रीय शैक्षणिक अनुसंधान तथा प्रशिक्षण परिषद् का पाठ्यक्रम कक्षा 1 से कक्षा 8 के लिए है किंतु तत्पश्चात् इस कथन का यह अर्थ नहीं निकाला जा सकता कि इस कथन के माध्यम से कोई सारगर्भित वचन दिया गया कि कक्षा 9 और उसके ऊपर के कक्षाओं के पाठ्यक्रम में कोई परिवर्तन नहीं किया जा रहा है । क्या मंत्री ने कभी ऐसा कोई कथन किया यह भिन्न मामला है । किंतु काल्पनिक रूप से यह उपधारणा करते हुए, क्योंकि समाचार-पत्रों द्वारा इस मामले को शुद्धत: संसूचित किया गया है, काफी पहले जून, 2018 में यह हुआ था और उसके पश्चात् उन घटनाओं के संबंध में, जिनका हमने इस मामले में पहले उल्लेख किया है, पुल के नीचे से अत्यधिक जल बह चुका है ।

40. यह महत्वपूर्ण है कि मंत्री का याचियों को लुभाने वाले कथन, जो सारगर्भित प्रकृति के हैं और जिसके द्वारा पूर्व की प्रथाओं के जारी रहने के लिए कहा गया था, किन्हीं न्यायिक संबंधों में फलित नहीं होते । याची पूरा प्रयास कर रहे थे । वे उन घटनाओं के बारे में जानते थे, जो घटित हुईं । उन्होंने अपनी स्वेच्छया के आधार पर पुस्तकों को मुद्रित और प्रकाशित किया । उनको ऐसा करते समय सावधान रहना चाहिए था । उन पर किताबें प्रकाशित करने की कोई विधिक बाध्यता नहीं थी । उन्होंने बोर्ड या प्राधिकारियों से कोई सहमति नहीं मांगी थी । उन्होंने न्यायालय की शरण में जाने से पहले प्रक्रिया के अंतिम होने और निविदा आमंत्रित किए जाने की सूचना के प्रकाशन होने तक जून, 2018 से तारीख 30 नवंबर, 2018 तक प्रतीक्षा की, और तारीख 30 नवंबर, 2018 वह तारीख है जिसको उन्होंने याचिका फाइल की, उन्होंने बच्चों के हितों की रक्षा के बजाय अपने धन को बचाने का प्रयास करते हुए मात्र व्यग्रता का प्रदर्शन किया ।

41. पुन: दोहराते हुए यह स्पष्ट किया जाता है कि याची विद्यालयों की पुस्तकों के प्रकाशकों और मुद्रकों का एक संघ है । उनसे

यह प्रत्याक्षा की जाती है कि वे सावधान रहें और सामान्यतया इस बाबत जागरुक रहें कि बाजार/व्यापार में क्या घटित हो रहा है । ऐसा नहीं है कि सरकार ने जल्दबाजी में अनुचित रूप से व्यग्रता दिखाते हुए गुप्त रूप से कोई निर्णय ले लिया हो । सरकार का यह निर्णय लोक अधिक्षेत्र में था । नीति में परिवर्तन हो रहा था, जिसके बाबत सभी लोगों की जानकारी थी ।

42. सरकार अप्रैल, 2018 से केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड का पाठ्यक्रम प्रस्तावित किए जाने का प्रयास कर रही थी । इस प्रयोजन के लिए एक चयन समिति का गठन किया गया था । सैद्धांतिक रूप से इस कमेटी की रिपोर्ट मंजूर कर ली गई थी । इस रिपोर्ट के मतावलंबन में पाठ्यक्रम का अनुवाद बंगाली में आरंभ किया गया था, जिसका निरंतर निरीक्षण किया जा रहा था ।

43. याची अपने व्यापार में नौसिखिए नहीं हैं, और न ही वे राज्य के लिए नए पक्ष हैं । उनको अपने कारबार के क्षेत्र में होने वाली नई गतिविधियों के बारे में जागरुक होना चाहिए था । इसलिए, उनके द्वारा यह दलील दिया जाना गलत है कि प्राधिकारियों द्वारा उनको उनके द्वारा किए गए पत्र व्यवहार का कोई उत्तर नहीं दिया गया । उनको प्राधिकारियों की गतिविधियों के बारे में जानकारी नहीं थी । वास्तव में महत्वपूर्ण रूप से उन्होंने इसी प्रकार के एक पत्र व्यवहार में इस प्रकार के तथ्य के बारे में जानकारी होना स्वीकार किया है और प्रार्थना की है कि प्रकाशकों और मुद्रकों के हितों की रक्षा हेतु इस विनश्चय को स्थगित कर दिया जाए ।

44. **आर.** बनाम **सेक्रेटरी ऑफ स्टेट** (उपरोक्त) वाले मामले का अवलंब लिए जाने पर भी याचियों के पक्षकथन में किसी भी प्रकार से सहायता नहीं मिलती, क्योंकि उक्त विनिश्चय में न्यायालय ने पत्र व्यवहार के माध्यम से दिए गए प्रत्यावेदन को सुस्पष्ट और विनिर्दिष्ट पाया, जिसके द्वारा (नीतियों के) अंगीकरण के प्रयोजनार्थ राज्य की राज्यक्षेत्रीय या सीमाओं के भीतर प्रवेश के प्रयोजनार्थ मामलों पर विचारण के लिए विधिसम्मत रूप से मत स्थिरीकृत किए जाने हेतु जनसामान्य को विधिक दृष्टि से हकदार पाया गया था । इस संबंध में

एक परिपत्र जारी किया गया था जिसका व्यापक रूप से प्रचार-प्रसार किया गया था और जिस पर प्राधिकारियों द्वारा कार्रवाई की गई थी, किंतु हमारे समक्ष उपस्थित मामला इस प्रकार का मामला नहीं है ।

45. **वसंथ कुमार** (उपरोक्त) वाले मामले में दिए गए निर्णय में केवल यह सिद्धांत अभिकथित किया गया है कि वचन विबंध का सिद्धांत एक साम्यापूर्ण सिद्धांत होने के कारण केवल साम्या पर विचार करता है, यदि वृहत्त लोक हित इसकी अपेक्षा करता है, यदि सरकार या लोक प्राधिकारी द्वारा यह दर्शित कर दिया जाता है कि सरकार या लोक प्राधिकारी को उसके द्वारा किए गए वचन या प्रत्यावेदन के प्रति जिम्मेदार ठहराया जाना साम्यापूर्ण होगा । न्यायालय अपने समाधान के लिए उस व्यक्ति के पक्ष में साम्या के प्रश्न पर विचार नहीं करेगा जिसको वचन दिया गया है या जिसने प्रत्यावेदन किया है ।

46. **एशियन फूड इंडस्ट्रीज** (उपरोक्त) वाले मामले में दिया गया विनिश्चय किसी भी प्रकार से याचियों की सहायता नहीं करता । **सदर्न पेट्रोकेमिकल्स इंडस्ट्रीज कंपनी लिमिटेड** बनाम **बिजली निरीक्षक और अन्य** (उपरोक्त) वाले मामले में केवल यह अभिकथित किया गया कि किसी अधिकार को वचन-विबंध के सिद्धांत का अवलंब लिए जाने के कारणवश अनुरक्षित किया जा सकता है और यह सिद्धांत वहां पर भी लागू होगा जहां कोई उद्यमी राज्य द्वारा दिए गए वचन के मतावलंबन में या उसके अग्रसरण में अपनी स्थिति में परिवर्तन करता है, जिसे न केवल कानून के अंतर्गत जारी की गई अधिसूचना द्वारा व्यक्त किया जा सकता है बल्कि कार्यकारी अनुदेषों के अंतर्गत भी व्यक्त किया जा सकता है ।

47. यहां पर यह महत्वपूर्ण है कि सिवाय तीन करोड़ रुपए (लगभग) के मूल्य वाली पुस्तकें प्रकाशित किए जाने के स्पष्ट प्रकथनों के पुस्तकों के प्रकाशन का कोई भी सबूत प्रस्तुत नहीं किया गया । तारीखें भी लापता हैं । क्या ऐसी स्थिति में परिवर्तन किसी ऐसे प्रत्यावेदन पर आधारित हो सकता है या नहीं, यह सुसंगत तथ्य है । इस पहलू पर सभी विवरण स्पष्ट रूप से मौन हैं ।

48. **तमिलनाडु इलेक्ट्रिसीटी बोर्ड** बनाम **स्टेट्स स्पिनिंग मिल्स**

लिमिटेड (उपरोक्त) वाले मामले में दिए गए विनिश्चय में भी पूर्ववर्ती विचार को दोहराया गया है ।

49. **देवी मल्टीप्लेक्स** (उपरोक्त) वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने **नेस्ले इंडिया लिमिटेड** (उपरोक्त) वाले मामले में व्यक्त किए गए विचार को केवल दोहराया है ।

50. कार्पस अधिकारिता का संदर्भ वचन विबंध के सिद्धांत की सामान्य प्रकृति और आवश्यकताओं के संबंध में लिया गया है जो आचरण द्वारा भी हो सकता है और जिसे हम वर्तमान मामले में अविद्यमान पाते हैं ।

51. **इंग्लैंड की हाल्सबरी विधि, चौथा संस्करण** (उपरोक्त) का संदर्भ वचन-विबंध का सिद्धांत गठित करने वाले संघटकों को उजागर किए जाने के प्रयोजनार्थ लिया गया है । जिसे परिभाषित कर दिया गया है ।

52. अत:, हम विधि के सिद्धांत पर चर्चा किए जाने और वर्तमान मामले के तथ्यों को लागू किए जाने के पश्चात् इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि याचियों के पक्ष में ऐसा कोई भी मामला नहीं बनता जो उन्हें किसी भी अनुतोष के लिए हकदार बनाता हो । जैसीकि पहले ही चर्चा की जा चुकी है, याचियों के संघ के सदस्य व्यापार करते हैं । उनको इस बात की पूर्ण जानकारी थी कि राज्य द्वारा शिक्षा नीति में परिवर्तन किया जा रहा है । किसी भी समयबिंदु पर यह नहीं देखा गया है कि राज्य ने याचियों से पुस्तकों के मुद्रण और प्रकाशन के लिए कभी कोई संविदा की हो । याचियों पर ऐसा करने के लिए कोई कानूनी या संविदात्मक बाध्यता अधिरोपित नहीं हुई है । उन्होंने स्वतंत्रतापूर्वक और स्वैच्छयापूर्वक पुस्तकें प्रकाशित कीं । उन्हें वर्ष 2009 में ही नीति में किसी भी परिवर्तन की संभावना के बारे में सूचित कर दिया गया था । उन्होंने अपनी स्वतंत्र इच्छा से राज्य द्वारा बिना किसी कानूनी या अन्यथा रूप सें पुष्टि, बाध्यता के पुस्तकों का प्रकाशन जारी रखा ।

53. पुन: दोहराते हुए, हम यह स्पष्ट करते हैं कि राज्य ने किसी को, यहां तक कि याची संघ को भी कभी कोई आश्वासन नहीं दिया ।

उनको विधित: प्रवर्तनीय अधिकार के अतिरिक्त अन्य कोई अधिकार प्राप्त नहीं है । काल्पनिक रूप से परिकल्पित करते हुए कि इस प्रकार का कोई आश्वासन विद्यमान था, फिर भी प्रशासनिक विधि के न्यायशास्त्र के सिद्धांतों के आधार पर भी यह नितांत रूप से अप्रवर्तनीय होगा क्योंकि हम वृहत्त लोक हित और समस्त अभिभावी और विधिसम्मत प्रत्याक्षा और वचन विबंध के समस्त अभिभावी सिद्धांतों, जैसाकि माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **मोनेट इस्पात** (उपरोक्त) वाले मामले में अधिकथित किया गया, को विद्यमान्यता में पाते हैं और वर्तमान मामले में इसकी कमी पाते हैं ।

54. इस बाबत कि क्या मंत्रीमंडल के समक्ष मामले को प्रस्तुत किए बिना निविदा आमंत्रित किए जाने की सूचना जारी की जा सकती है या नहीं, स्वयमेव ही महत्वपूर्ण विषय है क्योंकि सुसंगत विभाग ने पहले ही इस संबंध में विनिश्चय ले लिया है और किसी भी पक्ष का यह पक्ष कथन नहीं है कि विभाग अन्यथा रूप से ऐसा करने के लिए प्राधिकृत, सशक्त या हकदार नहीं था । हमको ऐसा प्रतीत होता है कि केवल सावधानी को दृष्टि में रखते हुए इस मामले को मंत्रीमंडल के समक्ष प्रस्तुत कर दिया गया और इस प्रकार का दृष्टिकोण अपनाए जाने में यह न्यायालय कोई त्रुटि नहीं पाता ।

55. अत: पूर्वोक्त समस्त कारणोंवश रिट याचिका गुणागुण से रहित होने के कारण खारिज की जाती है । लंबित आवेदन, यदि कोई हो, भी तद्नुसार निस्तारित किए जाते हैं ।

याचिका खारिज की गई ।

शु.

शिखा रानी दास (भौमिक) (श्रीमती)

बनाम

अरुण भौमिक

[2019 का अंतरण आवेदन (सिविल) संख्या 15]

तारीख 29 अगस्त, 2019

मुख्य न्यायमूर्ति संजय करोल

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – धारा 24 – वैवाहिक मामले का अंतरण – पति द्वारा विवाह-विच्छेद के लिए फाइल किए गए वाद को पत्नी के निवास वाले जिले में अंतरण के लिए आवेदन – पत्नी अपने माता-पिता के साथ दूसरे जिले में निवास कर रही है और उसकी हैसियत उस जिला न्यायालय में जाकर मामले की पैरवी करने की नहीं है जिस जिले में पति निवास करता है और जहां के जिला न्यायालय में विवाह-विच्छेद का मामला फाइल किया है – मामले को उस जिला न्यायालय को अंतरित किया जाना उचित है, जहां पत्नी अपने माता-पिता के साथ निवास कर रही है ।

संक्षेप में मामले के तथ्य यह हैं कि यह विवाद पत्नी और पति के मध्य कलह के कारण उद्भूत हुआ । पक्षों का विवाह वर्ष 2015 में संपन्न हुआ था । अभिलेखों के अनुसार विवाह के पश्चात् दोंनो पक्ष दो वर्ष तक साथ रहे, जिसके पश्चात् विवादों के कारण वे पृथक् रूप से रहने लगे । वर्तमान में याची-पत्नी अपने माता-पिता के घर में निवास कर रही है जो उत्तरी त्रिपुरा जिला के पनीसागार नामक स्थान पर स्थित है और प्रत्यर्थी-पति वैवाहिक घर में ही निवास कर रहा है जो दक्षिणी त्रिपुरा जिला के बेलोनिया उपखंड के जोरियाबारी नामक स्थान पर स्थित है । प्रत्यर्थी-पति ने फरवरी, 2019 में 1955 के हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13(1)(i-क) के अधीन विवाह-विच्छेद की ईप्सा करते हुए दक्षिणी त्रिपुरा जिले के बेलोनिया उपखंड की अधिकारिता प्राप्त न्यायालय में याचिका फाइल की । याची-पत्नी ने सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 24

के अधीन फाइल की गई इस याचिका में समाविष्ट तथ्यों के अनुसार इस याचिका को दक्षिणी त्रिपुरा जिला के बेलोनिया उपखंड की अधिकारिता प्राप्त सक्षम न्यायालय से उत्तरी त्रिपुरा जिले के धर्मानगर की अधिकारिता प्राप्त सक्षम न्यायालय में अंतरित किए जाने की ईप्सा की । जिन आधारों पर अंतरण की ईप्सा की गई, वे हैं (क) प्रत्यर्थी का विवाहेत्तर संबंध है जिनके कारण याची को अपना वैवाहिक घर छोड़ने के लिए और अपने माता-पिता के घर पर निवास करने के लिए विवश होना पड़ा, (ख) उसको अपनी बीमार माता की देखभाल भी करनी होती है, (ग) उसकी अधिक स्थिति बेलोनिया स्थित न्यायालय में जाकर मामले की प्रतिरक्षा करने की नहीं है, (घ) उसके लिए मामले की प्रतिरक्षा के प्रयोजनार्थ बारंबार बेलोनिया की यात्रा करना अत्यधिक कठिन है क्योंकि वह एक ही दिन में अपने निवास स्थान वापस नहीं लौट सकती और उसको आवश्यक रूप से रात्रि अपने वैवाहिक घर या किसी होटल में व्यतीत करने के लिए विवश होना होता है और इस कारणवश उसकी सुरक्षा भी खतरे में आ सकती है । अंतरण आवेदन का तद्नुसार निस्तारण करते हुए,

अभिनिर्धारित – मेरे समक्ष उपस्थित मामले में यह बात पूर्णतया स्पष्ट है कि दोनों ही पक्ष ग्रामीण पृष्ठभूमि से संबंधित हैं । निर्वावाद रूप से पत्नी को लंबी दूरी की यात्रा करनी होगी और किसी सार्वजनिक स्थान पर रात्रि व्यतीत करनी होगी । यद्यपि इस बात का उल्लेख आवेदन में नहीं किया गया है और यह बात मौखिक रूप से कही गई है, उसकी माता बीमार रहती है और इसके अतिरिक्त उसकी माता की देखभाल करने वाला घर में और कोई नहीं है । इसके विपरीत मैंने यह आवेक्षित किया कि प्रत्यर्थी पति के भी वृद्ध माता-पिता हैं । किंतु अभिलेख पर इस बात को साबित करने के लिए कुछ भी उपलब्ध नहीं है कि वे अस्वस्थ्य हैं और अपनी देखभाल करने में एक दिन भी समर्थ नहीं होंगे । तुलनात्मक रूप से पति के लिए यह सुविधाजनक होगा कि वह निजी या सार्वजनिक यातायात के साधनों द्वारा असुविधाजनक समय पर भी यात्रा कर सकता है और अपने वृद्ध माता-पिता के पास उसी दिन वापस भी लौट सकता है । अनिंदिता दास बनाम क्षिजित दास वाले मामले में

माननीय उच्चतम न्यायालय ने न्यायालय द्वारा उदारता दर्शित किए जाने का लाभ लेकर महिलाओं द्वारा अंतरण किए जाने की इस प्रकार की शक्ति के दुरुपयोग किए जाने की आशंका व्यक्त की है । उक्त मामले में न्यायालय ने याचिका के अंतरण के लिए पत्नी की प्रार्थना को इस आधार पर अस्वीकृत कर दिया था कि वह वातानुकूलित रेल में सुविधापूर्वक दिल्ली की यात्रा कर सकती है जिसके लिए खर्च उसके पति द्वारा वहन किया जाएगा और वह दिल्ली में आवश्यकतानुसार रात्रि भी तीन सितारा होटल में व्यतीत कर सकती है । इसके अतिरिक्त पति उसके साथ यात्रा करने वाले सहभागी के व्यय की लागत वहन करने के लिए भी सहमत हो गया था । न्यायालय ने इन परिस्थितियों में याचिका के अंतरण के लिए पत्नी की प्रार्थना को अस्वीकृत कर दिया । (पैरा 12, 13 और 14)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2006] (2006) 9 एस. सी. सी. 1997 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 2005 एस. सी. 37 : **अनिंदिता दास** बनाम **क्षिजित दास** ; 9

[2001] (2001) 10 एस. सी. सी. 41 = ए. आई. आर. 2002 एस. सी. 396 : **सुमीता सिंह** बनाम **कुमार संजय और एक अन्य** ; 8

[1996] (1996) 11 एस. सी. सी. 96 : **कल्पना देवी प्रकाश ठाकुर** बनाम **डा. देवी प्रकाश ठाकुर** । 9

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2019 का अंतरण आवेदन (सिविल) संख्या 15.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 24 के अधीन अंतरण याचिका ।

याची की ओर से सर्वश्री जी. के. नामा और पमार्थ दत्ता

प्रत्यर्थी की ओर से श्री तनमय देब्ब वर्मा

आदेश

यह विवाद पत्नी और पति के मध्य कलह से उद्भूत होकर प्रस्तुत हुआ है । पक्षों के मध्य विवाह वर्ष 2015 में संपन्न हुआ था । अभिलेखों के अनुसार विवाह के दोनों पक्ष दो वर्षों की अवधि तक एक साथ निवास करते रहे, जिसके पश्चात् वे पृथक् रूप से रहने लगे ।

2. वर्तमान में याची-पत्नी अपने माता-पिता के घर में निवास कर रही है जो उत्तरी त्रिपुरा जिले के पनीसागार नामक स्थान पर स्थित है और प्रत्यर्थी-पति वैवाहिक घर में ही निवास कर रहा है जो दक्षिणी त्रिपुरा जिले के बेलोनिया उपखंड के जोरियाबारी नामक स्थान पर स्थित है ।

3. प्रत्यर्थी-पति ने 2019 के फरवरी माह में किसी समय बिंदु पर 1955 के हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13(1)(i-क) के अधीन विवाह-विच्छेद की ईप्सा करते हुए दक्षिणी त्रिपुरा जिले के बेलोनिया उपखंड की अधिकारिता प्राप्त न्यायालय में याचिका फाइल की ।

4. याची-पत्नी ने सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 24 के अधीन फाइल की गई वर्तमान याचिका में समाविष्ट तथ्यों के अनुसार इस याचिका को दक्षिणी त्रिपुरा जिले के बेलोनिया उपखंड की अधिकारिता प्राप्त सक्षम न्यायालय से उत्तरी त्रिपुरा जिला के धर्मानगर की अधिकारिता प्राप्त सक्षम न्यायालय में अंतरित कराने की ईप्सा की है ।

5. वे आधार, जिन पर अंतरण की ईप्सा की गई है (क) प्रत्यर्थी का विवाहेत्तर संबंध हैं जिनके कारण याची को अपना वैवाहिक घर छोड़ने के लिए और अपने माता-पिता के घर पर निवास करने के लिए विवश होना पड़ा, (ख) उसको अपनी बीमार माता की देखभाल भी करनी होती है, (ग) उसकी बेलोनिया स्थित न्यायालय में जाकर मामले की प्रतिरक्षा करने की हैसियत नहीं है, (घ) उसके लिए मामले की प्रतिरक्षा के प्रयोजनार्थ बारंबार बेलोनिया की यात्रा करना अत्यधिक कठिन होगा क्योंकि वह एक ही दिन

में अपने निवास स्थान वापस नहीं लौट सकती और उसको आवश्यक रूपसे रात्रि अपने वैवाहिक घर या किसी होटल में व्यतीत करनी होगी और इस कारणवश उसकी सुरक्षा भी खतरे में आ जाएगी ।

6. याचिका का विरोध करते हुए प्रत्यर्थी-पति ने विवाहेत्तर संबंध के आरोप से इनकार करते हुए और पत्नी पर जानबूझकर परित्याग करने का आरोप लगाते हुए अभिकथित किया कि याची-पत्नी ने स्वेच्छापूर्वक वैवाहिक संबंधों और बंधनों को तोड़ने के आशय से अपने वैवाहिक घर का परित्याग कर दिया । उसने यह आरोप भी लगाया कि उसको धर्मानगर की यात्रा करने में अत्यंत असुविधा का सामना करना पड़ेगा चूंकि उसको अपने वृद्ध माता-पिता अर्थात् पिता जिनकी आयु 88 वर्ष और माता जिनकी आयु 78 वर्ष की देखभाल भी करनी होती है । साथ ही उसने यह भी कहा कि उसके अलावा उनकी देखभाल करने वाला अन्य कोई नहीं है ।

7. यह बात महत्वपूर्ण है कि प्रत्यर्थी-पति ने बेलोनिया के न्यायालय की यात्रा के लिए याची के खर्चे वहन करने का प्रस्ताव यह कहते हुए दिया है कि अगरतला की अधिकारिता प्राप्त सक्षम न्यायालय में याचिका का अंतरण कर दिया जाए जो बेलोनिया और धर्मानगर के बीचोबीच स्थित है ।

8. याची के विद्वान् काउंसेल श्री जी. के. नामा ने अपनी दलीलों के समर्थन में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **सुमीता सिंह** बनाम **कुमार संजय और एक अन्य**[1] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय को निर्दिष्ट किया और उसका अवलंब लिया ।

9. इसके विपरीत प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल श्री तन्मय देब्बवर्मा ने माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **कल्पना देवी प्रकाश ठाकुर** बनाम **डा. देवी प्रकाश ठाकुर**[2] और **अनिंदिता दास** बनाम **क्षिजित दास**[3] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय को निर्दिष्ट किया और उसका अवलंब लिया ।

---

[1] (2001) 10 एस. सी. सी. 41 = ए. आई. आर. 2002 एस. सी. 396.

[2] (1996) 11 एस. सी. सी. 96.

[3] (2006) 9 एस. सी. सी. 1997 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 2005 एस. सी. 37.

10. इस न्यायालय द्वारा किसी भी कार्यवाही को एक न्यायालय से दूसरे न्यायालय अंतरित किए जाने की शक्ति सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 24 में समाविष्ट है । यद्यपि यह धारा उन आधारों को उपबंधित नहीं करती, जिन पर ऐसी किसी याचिका को अंतरित किया जा सकता है, किंतु इस धारा में बिना कुछ कहते हुए भी यह कहा गया है कि इस धारा में समाविष्ट शक्तियों का प्रयोग विधि के स्थिरीकृत सिद्धांतों के अनुसार किया जाना चाहिए । इस शक्ति का प्रयोग न्याय हित के अग्रसरण में किया जाना चाहिए और ऐसी रीति में किया जाना चाहिए जो न्यायसंगत, निष्पक्ष और युक्तिसंगत हो ।

11. यहां पर यह उल्लेख किया जाता है कि माननीय उच्चतम न्यायालय ने वैवाहिक विवादों से उद्भूत होने वाली याचिकाओं के न्यायनिर्णयन में स्थान के विनिर्धारण के तथ्य को ध्यान में रखते हुए पत्नी की सुविधा को स्वीकृति प्रदान की है ।

12. मेरे समक्ष उपस्थित मामले में यह बात पूर्णतया स्पष्ट है कि दोनों ही पक्ष ग्रामीण पृष्ठभूमि से संबंधित हैं । निर्वावाद रूप से पत्नी को लंबी दूरी की यात्रा करनी होगी और किसी सार्वजनिक स्थान पर रात्रि व्यतीत करनी होगी । यद्यपि इस बात का उल्लेख आवेदन में नहीं किया गया है और यह बात मौखिक रूप से कही गई है कि उसकी माता बीमार रहती है और उसके अतिरिक्त उसकी माता की देखभाल करने वाला घर में और कोई नहीं है ।

13. इसके विपरीत मैंने यह आवेक्षित किया कि प्रत्यर्थी पति के भी वृद्ध माता-पिता हैं । किंतु अभिलेख पर इस बात को साबित करने के लिए कुछ भी उपलब्ध नहीं है कि वे अस्वस्थ्य हैं और अपनी देखभाल करने में एक दिन भी समर्थ नहीं होंगे । तुलनात्मक रूप से पति के लिए यह सुविधाजनक होगा कि वह निजी या सार्वजनिक यातायात के साधनों द्वारा असुविधाजनक समय पर भी यात्रा कर सकता है और अपने वृद्ध माता-पिता के पास उसी दिन वापस भी लौट सकता है ।

14. **अनिंदिता दास** बनाम **क्षितिज दास** (उपरोक्त) वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने न्यायालय द्वारा उदारता दर्शित किए

जाने का लाभ लेकर महिलाओं द्वारा अंतरण किए जाने की इस प्रकार की शक्ति के दुरुपयोग किए जाने की आशंका व्यक्त की है । उक्त मामले में न्यायालय ने याचिका अंतरण की पत्नी की प्रार्थना को इस आधार पर अस्वीकृत कर दिया था कि वह वातानुकूलित रेल में सुविधापूर्वक दिल्ली की यात्रा कर सकती है जिसके लिए खर्च उसके पति द्वारा वहन किया जाएगा और वह दिल्ली में आवश्यकतानुसार रात्रि भी तीन सितारा होटल में व्यतीत कर सकती है । इसके अतिरिक्त पति उसके साथ यात्रा करने वाले सहभागी के व्यय की लागत वहन करने के लिए भी सहमत हो गया था । न्यायालय ने इन परिस्थितियों में याचिका के अंतरण के लिए पत्नी की प्रार्थना अस्वीकृत कर दी थी ।

15. लगभग इन्हीं परिस्थितियों में न्यायालय ने **कल्पना देवी प्रकाश ठाकुर** बनाम **डा. देवी प्रकाश ठाकुर** (उपरोक्त) वाले मामले में भी यही विचार व्यक्त किए क्योंकि दोनों पक्ष महानगर में यातायात के सभी साधनों द्वारा यात्रा करने के अभ्यस्त थे । पत्नी एक महानगर से दूसरे महानगर की यात्रा यातायात के किसी भी सुविधाजनक माध्यम द्वारा सुविधापूर्वक अर्थात् वातानुकूलित रेल द्वारा कर सकती थी ।

16. न्यायालय ने महत्वपूर्ण रूप से सभी विनिश्चयों में इस बात को स्पष्ट किया है कि प्रत्येक मामले पर विचार किया जाना चाहिए और उस मामले के अभिभावी तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए निर्णय लिया जाना चाहिए । वैवाहिक विवादों के मामलों में याचिका के अंतरण के संबंध में कोई एकनिष्ठ नियम लागू नहीं किया जा सकता ।

17. अगरतला पति के लिए सुविधाजनक न्यायालय हो सकता है । किंतु यह न्यायालय पत्नी की असुविधा को किसी भी प्रकार से निराकृत या कम नहीं कर सकता । यदि पति किसी भी परिस्थिति में बेलोनिया के बजाए अगरतला के न्यायालय में उपस्थित होने के लिए तैयार हो जाता है, तो वह धर्मानगर तक की यात्रा कर सकता है ।

18. अतः, समस्त अभिभावी तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए और न्याय के दोंनो पलड़ों को समानता के संतुलन पर रखते हुए यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि याची के पक्ष में

बेलोनिया, दक्षिणी त्रिपुरा के विद्वान् जिला न्यायाधीश के न्यायालय से धर्मानगर, उत्तरी त्रिपुरा के विद्वान् जिला न्यायाधीश के न्यायालय को अंतरित किए जाने के प्रयोजनार्थ 2019 के अंतरण आवेदन (विवाह-विच्छेद) संख्या 6 के अंतरण का मामला बनता है ।

19. अतः, 2019 के अंतरण आवेदन (विवाह-विच्छेद) संख्या 6, **अरुण भौमिक** बनाम **श्रीमती सीखा रानी दास (भौमिक)** का मामला बेलोनिया, दक्षिणी त्रिपुरा के विद्वान् जिला न्यायाधीश के न्यायालय से धार्मानगर, उत्तरी त्रिपुरा के विद्वान् जिला न्यायाधीश के न्यायालय को अंतरित किया जाता है ।

20. दोनों पक्षों को निर्देशित किया जाता है कि वे तारीख 30 सितंबर, 2019 को अंतरिती न्यायालय के समक्ष उपस्थित हों ।

21. यहां पर इस बात को अभिलिखित किया जाता है कि इस न्यायालय ने मामले का शांतिपूर्वक निस्तारण करने का प्रयास किया था । पक्षों को तलब किया गया था और उनको विवाद के आरंभिक प्रक्रम पर ही शांतिपूर्ण समाधान के लाभ के बारे में जागरुक किया गया था । हो सकता है समय व्यतीत होने के साथ-साथ दोनों पक्षों को सद्बुद्धि आ जाए । फिर भी, पक्षों की उम्र और साथ ही इस तथ्य पर विचार करते हुए कि वे विगत दो वर्षों से पृथक् रूप से रह रहे हैं, यह निर्देश दिया जाता है कि याचिका की सुनवाई शीघ्रतापूर्वक की जाए ।

22. दोनों पक्षों ने अपने-अपने काउंसेलों के माध्यम से सहमति व्यक्त की है कि वे सहयोग करेंगे और मामले में अनावश्यक स्थगन नहीं लेंगे । उन्होंने इस बाबत भी सहमति व्यक्त की है कि अपनी लागत और उत्तरदायित्व पर संपूर्ण साक्ष्य प्रस्तुत करेंगे । वे केवल शासकीय साक्षियों के लिए न्यायालय की साहयता प्राप्त करेंगे ।

23. विचारण न्यायालय से अनुरोध किया जाता है कि विचारण को शीघ्रतापूर्वक निपटाएं और पक्षों की प्रथम उपस्थिति की तारीख से 9 माह की अवधि के भीतर कार्यवाही पूर्ण करे ।

24. निचले न्यायालय के अभिलेख तुरंत वापस भेजे जाएं ।

25. अंतरण याचिका का तद्नुसार निस्तारण किया जाता है ।

26. लंबित आवेदन, यदि कोई हो, का भी तद्नुसार निस्तारित किया गया ।

तद्नुसार आदेश पारित किया गया ।

शु.

(2020) 1 सि. नि. प. 360 **त्रिपुरा**

सचिन्द्र चंद्र दास

बनाम

त्रिपुरा राज्य और अन्य

[2018 की रिट याचिका (सिविल) संख्या 1167]

तारीख 20 नवंबर, 2019

न्यायमूर्ति अरिन्दम लोध

आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 (1955 का 10) – धारा 3 [त्रिपुरा खाद्यान्न (वितरण) नियंत्रण आदेश, 1972 का खंड 21] – उचित मूल्य की दुकान की अनुज्ञप्ति – 86 वर्ष के मूल लाइसेंसदार द्वारा उचित मूल्य की दुकान के चालन के प्रयोजनार्थ अन्य व्यक्ति के पक्ष में मुख्तारनामा निष्पादित किया जाना – मूल लाइसेंसदार के अलावा किसी अन्य व्यक्ति को उचित मूल्य की दुकान के चालन की अनुज्ञा नहीं होती – यह सरकार के नीतिगत विनिश्चय का अतिलंघन है – न्यायालय को सरकार के नीतिगत विनिश्चय में दखल देने या उसको प्रतिस्थापित करने की अधिकारिता प्राप्त नहीं है – लाइसेंस प्राधिकारियों द्वारा उचित मूल्य के दुकान के चालन की अनुज्ञप्ति का रद्दकरण उचित है ।

संक्षेप में मामले के तथ्य यह है कि याची को तारीख 7 सितंबर, 1968 के आदेश द्वारा उचित मूल्य की दुकान का डीलर नियुक्त किया

गया था । उक्त आदेश में यह स्पष्टत: लिखा था कि "नियुक्त फुटकर डीलर भी 1964 के त्रिपुरा खाद्यान्न डीलर अनुज्ञप्ति आदेश के उपबंधों द्वारा बाध्य होगा ।" याची की वर्तमान में आयु 86 वर्ष है । याची को तारीख 2 जून, 2018 को पश्चिमी त्रिपुरा सदर के उपखंड मजिस्ट्रेट द्वारा कारण बताओं सूचना जारी की गई और अपेक्षा की गई कि वह सूचना की प्राप्ति से सात दिनों के भीतर इस बाबत कारण स्पष्ट करे कि क्यों न विधि के उपबंधों के अनुसार उसके विरुद्ध उसकी प्रतिभूति राशि के प्रतिसंहरण के साथ-साथ उसकी डीलरशिप के निलंबन/रद्दकरण को सम्मिलित करते हुए विधिक कार्रवाई की जाए और यदि अनुध्यात अवधि के भीतर कोई उत्तर नहीं दिया जाता, तो इस विवाद्यक पर उसके विरुद्ध एकपक्षीय कार्रवाई की जाएगी । याची ने इस कारण बताओ सूचना को इस रिट याचिका के माध्यम से चुनौती दी । याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – इस ज्ञापन के कोरे परिशीलन से यह स्पष्ट हो जाता है कि त्रिपुरा सरकार का मूल लाइसेंसदार अर्थात् जिसकी उचित मुल्य कि दुकान के चालन के बाबत अनुज्ञप्ति प्रदान की गई, के अतिरिक्त किसी अन्य व्यक्ति को अनुज्ञा प्रदान न किए जाने का विनिश्चय एक जागरुकता भरा विनिश्चय है । याची की अभिस्वीकृति से यह स्पष्टत: प्रकट होता है कि वह उचित मूल्य की दुकान का कारबार करता है, जो सरकार के विनिश्चय, जो तारीख 18 मार्च, 2011 के उपर वर्णित ज्ञापन द्वारा लिया गया, के खंडन में है । सरकार का विनिश्चय किसी भी व्यक्ति को उचित मूल्य की दुकान के चालन की अनुज्ञा न प्रदान करने का था, सिवाय मूल लाइसेंसदार के, जो सरकार का नीतिगत विनिश्चय है और न्यायालय को सरकार के नीतिगत विनिश्चय में हस्तक्षेप करने प्रतिस्थापित करने की कोई अधिकारिता प्राप्त नहीं है । अभिलेखों से यह स्पष्ट हो जाता है कि याची ने मुख्तारनामा निष्पादित किया और सरकार के निर्देश के अतिलंघन में अपना कारबार अन्य व्यक्ति को चलाने की अनुज्ञा प्रदान की तद्नुसार, यह रिट याचिका गुणागुण से रहित है और खारिज की जाती है । (पैरा 8 और 9)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2018 की रिट याचिका (सिविल) संख्या 1167.

संविधान, 1950 अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से श्री के. नाथ

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री डी. शर्मा (अपर सरकारी अधिवक्ता)

आदेश

याची की ओर से उपस्थित विद्वान् काउंसेल श्री के. नाथ और राज्य-प्रत्यर्थियों की ओर से उपस्थित विद्वान् अपर सरकारी अधिवक्ता श्री डी. शर्मा को सुना ।

2. संक्षेप में मामले के तथ्य यह है कि याची को तारीख 7 सितंबर, 1968 के आदेश (जो इस रिट याचिका संलग्नक 1 है) द्वारा उचित मूल्य की दुकान का डीलर नियुक्त किया गया था । उक्त आदेश में यह स्पष्टत: लिखा था कि "नियुक्त किया गया फुटकर डीलर भी 1964 के त्रिपुरा खाद्यान्न डीलर अनुज्ञप्ति आदेश के उपबंधों द्वारा बाध्य होगा ।" याची की वर्तमान में आयु 86 वर्ष है । याची को तारीख 2 जून, 2018 को पश्चिमी त्रिपुरा सदर के उपखंड मजिस्ट्रेट द्वारा कारण बताओं सूचना जारी की गई थी, जो इस प्रकार है :-

> "जबकि, खाद्य और उपभोक्ता मामलों के निदेशक द्वारा यह निर्बंधित किया गया है कि उचित मूल्य की दुकान चलाने के मामले में कोई भी मुख्तारनामा मंजूर नहीं किया जाएगा, सिवाय वास्तविक डीलर के ;
>
> और
>
> जबकि, क्षेत्रीय खाद्य निरीक्षक द्वारा यह सूचित किया गया है कि उचित मूल्य की दुकान संख्या 4 का संचालन प्रतिनिधि मुख्तार द्वारा लंबी अवधि से किया जा रहा है ;
>
> और
>
> जबकि, यह भी संसूचित किया गया है कि तारीख 22 मई, 2018 को उचित मूल्य की दुकान संख्या 4 के दौरे के दौरान डीलर

ने 9770 किलोग्राम ए.पी.एल. चावल में से केवल 685 किलोग्राम ए.पी.एल. चावल, 1780 किलोग्राम पी.जी. चावल में से 1185 किलोग्राम पी.जी. चावल खाद्य और सिविल आपूर्ति के निर्देशक और खाद्य निरीक्षक के कड़े अनुदेश के बावजूद पोजिंग मशीन के माध्यम से बेचा था ।

इसलिए, यह साबित हो जाता है कि डीलर ने अपने निजी लाभ के लिए दिशा-निर्देशों का अतिक्रमण किया ।

इसलिए, अब उचित मूल्य की दुकान संख्या 4 के डीलर से एतद्द्वारा इस सूचना की प्राप्ति से सात दिनों के भीतर इस बाबत कारण स्पष्ट करने के लिए कहा जाता है कि क्यों न विधि के उपबंधों के अनुसार उसके विरुद्ध उसकी प्रतिभूति राशि के प्रतिसंहरण के साथ-साथ उसकी डीलरशिप के निलंबन/रद्दकरण को सम्मिलित करते हुए विधिक कार्रवाई की जाए । यदि अनुध्यात अवधि के भीतर कोई उत्तर नहीं दिया जाता है, तो इस विवाद्यक पर उसके विरुद्ध एकपक्षीय कार्रवाई की जाएगी ।"

3. याची ने तारीख 8 जून, 2018 के अपने लिखित कथन द्वारा उपरोक्त कारण बताओ सूचना का उत्तर दिया जिसमें उसने अभिकथित किया कि उसने 86 वर्ष की आयु प्राप्त कर ली है और पार्किंसन की बीमारी से ग्रसित है, जिस कारणवश वह बिना अन्य लोगों की सहायता के स्वतंत्र रूप से हिलडुल पाने में असमर्थ है और उसके समक्ष उचित मूल्य की दुकान संख्या 4 के सामान्य कार्यक्रम के प्रयोजनार्थ कोई अन्य विकल्प शेष नहीं रह गया है, सिवाय इसके कि किसी व्यक्ति/कर्मचारी की नियुक्ति की जाए । उसने अपने उत्तर में आगे अभिकथित किया कि वृद्धावस्था की समस्या के कारण उसकी अंगुलियों की छाप, जो ईपोज मशीन को क्रियान्वित किए जाने के लिए अनिवार्य है, वास्तविक स्थिति को परावर्तित नहीं करती ।

4. रिट याची ने प्रत्यर्थी संख्या 2 का डीलर होने के नाते रतन आचार्जी, पुत्र श्री अबानी मोहन आचार्जी, निवासी भाटी अभोयनगर, अगरतला, पश्चिमी त्रिपुरा नामक व्यक्ति के पक्ष में उचित मूल्य की

दुकान संख्या 4 को चलाए जाने के प्रयोजनार्थ मुख्तारनामा विलेख निष्पादित कर दिया और उसने अभिकथित किया कि उपरोक्त श्री रतन आचार्जी को उसका प्रतिनिधि डीलर न माना जाए । अंततः, उसने यह प्रार्थना की कि उसके विरुद्ध लगाए गए आरोपों से उसको मुक्त कर दिया जाए ।

5. मैं, तारीख 2 जून, 2018 की उक्त कारण बताओ सूचना और तारीख 8 जून, 2018 के उत्तर के परिशीलन के पश्चात् मुख्तारानामा विलेख की प्रकृति पर विचार करता हूं, जिसमें यह स्पष्टत: अभिकथित किया गया है कि 'और यह कि मैं किन्हीं अन्य प्रयोजनों में व्यस्त हूं और मेरे लिए यह अत्यधिक कठिन है कि मैं अपने कारबार से संबंधित समस्त दस्तावेजों पर हस्ताक्षर किए जाने को सम्मिलित करते हुए उसकी देखभाल करुं, उसका प्रबंध और नियंत्रण करुं' । अब मैं यह आवश्यक समझता हूं कि इस मुख्तारनामा आम को निष्पादित किए जाने के द्वारा श्री रतन आचार्जी, पुत्र श्री अबानी मोहन आचार्जी, निवासी भाटी अभोयनगर, अगरतला, पश्चिमी त्रिपुरा, धर्म हिंदू, व्यवसाय-व्यापार, भारतीय नागरिक को मेरे सत्य और विधिक मुख्तार के रूप में नियुक्त, नामांकित और गठित कर दिया जाए ।

6. उक्त मुख्तारनामा विलेख की अंतर्वस्तु से यह स्पष्ट है कि रिट याची ने अपने समस्त दायित्वों को अपने मुख्तार रतन आचार्जी को प्रदान कर दिया और अब वह किसी भी प्रकार से उचित मूल्य की दुकान के कारबार के चालन में अंतवर्लित नहीं है । अत:, यह स्वीकृत स्थिति है कि याची उस कारबार का चालन नहीं कर रहा है जिसके लिए उसको वर्ष 1968 में डीलर के रूप में नियुक्त किया गया था और उसने स्वयं को अन्य प्रयोजनों में व्यस्त कर लिया है और अब वह अपनी उचित मूल्य की दुकान के कारबार की देखभाल के लिए बिल्कुल भी हितबद्ध नहीं है और पुन: याची ने यह स्वीकार किया है कि उसने किसी अन्य व्यक्ति को उसकी उचित मूल्य की दुकान के चालन के लिए नामांकित कर दिया है, यदि यह तथ्य सत्य नहीं भी है, तो भी उसने अपने परिवार के किसी भी व्यक्ति को यह उत्तरदायित्व प्रदान नहीं किया है ।

7. मैंने, त्रिपुरा सरकार के खाद्य, सिविल आपूर्ति और उपभोक्ता मामलों के निदेशक द्वारा जारी किए गए तारीख 18 मार्च, 2011 के ज्ञापन का अवलोकन किया । उक्त ज्ञापन निम्नलिखित है जिसको सुविधा की दृष्टि से शब्दश: प्रत्युत्पादित किया गया है ।

"त्रिपुरा सरकार

खाद्य, सिविल आपूर्ति और उपभोक्ता

मामलों का निदेशालय

संख्या एफ. 15 - 1 (12) - एल.आई.टी./डी.एफ./2010"

तारीख, अगरतला, 18/03/2011

ज्ञापन

खाद्य, सिविल आपूर्ति और उपभोक्ता मामलों के विभाग के संज्ञान में यह आया है कि राज्य के विभिन्न भागों में उचित मूल्य की दुकाने संबद्ध लाइसेंसिंग प्राधिकारी द्वारा नियुक्त डीलर/अनुज्ञप्तिधारी के बजाय अन्य व्यक्तियों/मुख्तारों द्वारा चलाई जा रही है । अनेक मामलों में यह संसूचित किया गया है कि अनुज्ञप्तिधारियों/डीलरों के वर्ग द्वारा अनुज्ञप्ति प्राधिकारियों से अनुज्ञा प्राप्त किए बिना 'कतिपय मुखतार गठित किए जाने के माध्यम से' इस प्रकार के इंतजाम को स्थायी स्वरूप प्रदान कर दिया गया है ।

चूंकि उचित मूल्य की दुकान की अनुज्ञप्तियां शुद्धत: आवश्कय वस्तुओं के उचित, प्रभावी और साम्यापूर्ण वितरण के इंतजाम को दृष्टि में रखते हुए प्राधिकारियों के विवेकाधिकार के आधार पर जारी की जाती है, इसलिए केवल नियुक्त किए गए डीलर/अनुज्ञप्तिधारी ही क्रियान्वयन के अपने-अपने क्षेत्रों में अबाध रूप से लोक वितरण प्रणाली के चालन के कार्य के लिए उत्तरदायी हैं और ये अनुज्ञप्तियां हस्तांतरणीय नहीं हैं ।

पूर्वोक्त बातों पर विचार करते हुए और 1972 के त्रिपुरा

खाद्यान्न (वितरण) नियंत्रण आदेश के खंड 21 के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए, एतद्द्वारा यह निर्देशित किया जाता है कि अब भविष्य में किसी भी उचित मूल्य की दुकान का संचालन मूल लाइसेंसदार (अर्थात् जिसके पक्ष में अनुज्ञप्ति प्रदानकर्ता प्राधिकारी द्वारा अनुज्ञप्ति जारी की गई) के अलावा किसी अन्य व्यक्ति द्वारा किए जाने की अनुज्ञा असीमित या अयुक्तियुक्त अवधि के लिए प्रदान नहीं की जाएगी, सिवाय ऐसे मामलों के, उचित मूल्य की दुकानों से संबंधित उन मामलों को सम्मिलित करते हुए, जिनका चालन सरकारी सहकारी समितियों/लैम्स/पीएसीएस/स्वयं सहायता समूहों द्वारा किया जा रहा है, जहां लाइसेंसिंग प्राधिकारी को यह विशेषाधिकार प्राप्त है कि वह इस प्रणाली को विधिक तरीके में पूर्णत: सीमित/परिभाषित/युक्तिसंगत अवधि के लिए चलाए जाने की अनुज्ञा प्रदान कर सके और यह अनुज्ञा किसी भी स्थिति में किसी वास्तविक मामले में, जहां परिस्थितियां अबाधित लोक वितरण प्रणाली के हित में इस प्रकार के अस्थायी इंतजाम की अपेक्षा करती हों, एक समय में दो माह से अधिक की अवधि के लिए, जैसा भी मामला हो, प्रदान नहीं की जाएगी । समस्त मुख्तारनामे, जिनके अंतर्गत कतिपय उचित मूल्य की दुकानें मूल लाइसेंसदार के अलावा अन्य व्यक्तियों द्वारा लाइसेंस प्रदान करने वाले प्राधिकारी की अनुज्ञा के बिना चलाई जा रही हैं, को एतद्द्वारा उचित मूल्य की दुकान चलाए जाने के प्रयोजनार्थ अविधिमान्य घोषित किया जाता है और वास्तविक लाइसेंसदारों को एतद्द्वारा निर्देशित किया जाता है कि वे नामांतरितियों से उचित मूल्य की दुकानों का प्रभार वापस ले लें । अस्थायी अवधि के लिए मूल लाइसेंसदारों/मुख्तारों के अतिरिक्त अन्य व्यक्तियों द्वारा उचित मूल्य की दुकानों का चालन किए जाने को अनुज्ञा केवल लाइसेंस प्रदान करने वाले प्राधिकारी के अनुमोदन के अधीन ही प्रदान की जा सकती है । समस्त उपखंड मजिस्ट्रों/ओसी,एआरए (लाइसेंस प्रदान करने वाले प्राधिकारी) प्रत्येक मामले की स्थिति की जांच करेंगे और इस आदेश की भावना को ध्यान में रखते हुए कार्यवाही करेंगे ।

यह आदेश सरकार के खाद्य, सिविल आपूर्ति और उपभोक्ता मामलों के विभाग के अनुमोदन से जारी किया जा रहा है और तत्काल प्रभाव से प्रभावी होगा ।"

8. इस ज्ञापन के कोरे परिशीलन से यह स्पष्ट हो जाता है कि त्रिपुरा सरकार का मूल लाइसेंसदार अर्थात् जिसके पक्ष में अनुज्ञप्ति प्रदान करने वाले प्राधिकारी द्वारा अनुज्ञप्ति जारी की गई, के अतिरिक्त किसी अन्य व्यक्ति को अनुज्ञा प्रदान न किए जाने का विनिश्चय एक जागरुकता भरा विनिश्चय है । याची की अभिस्वीकृति से यह स्पष्टत: प्रकट होता है कि वह उचित मूल्य की दुकान का कारबार करता है, जो सरकार के विनिश्चय, जो तारीख 18 मार्च, 2011 के उपरवर्णित ज्ञापन द्वारा लिया गया था, के खंडन में है । सरकार का विनिश्चय किसी भी व्यक्ति को उचित मूल्य की दुकान के चालन की अनुज्ञा न प्रदान करने का था, सिवाय मूल लाइसेंसदार के, जो सरकार का नीतिगत विनिश्चय है और न्यायालय को सरकार के नीतिगत विनिश्चय में हस्तक्षेप करने/उसको प्रतिस्थापित करने की कोई अधिकारिता नहीं है । अभिलेखों से यह स्पष्ट हो जाता है कि याची ने मुख्तारनामा निष्पादित किया और सरकार के निर्देश के अतिलंघन में अपना कारबार अन्य व्यक्ति को चलाने की अनुज्ञा प्रदान की ।

9. तद्नुसार, यह रिट याचिका गुणागुण से रहित है और खारिज की जाती है ।

याचिका खारिज की गई ।

शु.

जोशुआ सदागुरुसकी

बनाम

भारत संघ और अन्य

(2019 की रिट याचिका सं. 1666)

तारीख 9 सितंबर, 2019

न्यायमूर्ति एस. सी. धर्माधिकारी और न्यायमूर्ति जी. एस. पटेल

विदेशी विषयक अधिनियम, 1946 (1946 का 31) – धारा 3 [विदेशी विषयक आदेश, 1948 का खंड 3] – विदेशी को भारत में प्रवेश से इनकार किया जाना – विदेशी राष्ट्रिक का पांच वर्ष के बहुउद्देशीय प्रवेश कारबार वीज़ा का होना और उसके द्वारा भारत में रोजगार के लिए प्रवेश किया जाना – वह पूर्ववर्ती अवसरों पर भी भारत में वीज़ा में उपबंधित अवधि से अधिक अवधि तक रुका रहा, किन्तु उसने इस तथ्य का प्रकटीकरण अपनी याचिका में नहीं किया – वीज़ा की शर्तों के अंतर्गत वह भारत में रोजगार से प्रतिषिद्ध था – मात्र इस कारणवश कि उसके कब्जे में बहुउद्देशीय कारबार वीज़ा है, यह अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता कि उसको भारत में प्रवेश करने से इनकार नहीं किया जा सकता ।

संक्षेप में मामले के तथ्य यह है कि याची संयुक्त राष्ट्र अमेरिका की राष्ट्रिक और वहां का नागरिक है । उसने संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन इस उच्च न्यायालय की अधिकारिता का अवलंब लेते हुए यह याचिका फाइल की है । उसने परमाधिकार के अनुतोष की ईप्सा की है, विनिर्दिष्ट रूप से भारत में प्रवेश में व्यवधान उत्पन्न किए जाने या उसको भारत में प्रवेश करने से प्रतिषिद्ध किए जाने से प्रत्यर्थियों को निषिद्ध किए जाने के प्रयोजनार्थ परमादेश की रिट जारी किए जाने के लिए और साथ ही प्रत्यर्थियों द्वारा उसको तारीख 21 मई, 2018 को जारी की गई सूचना को अभिखंडित और अपास्त किए जाने के प्रयोजनार्थ उत्प्रेषण की रिट जारी किए जाने की भी ईप्सा की है ।

सदागुरुसकी ने अनुकल्प में यह ईप्सा भी की है कि उसको कारण बताओ नोटिस जारी किया जाए और सुनवाई का अवसर प्रदान किया जाए और उसको भारत से निष्कासन के विरुद्ध लिखित प्रतिवेदन फाइल करने के द्वारा अपना प्रतिवाद प्रस्तुत करने का अवसर प्रदान किया जाए । इसके अतिरिक्त कुछ लघु अनुतोषों की भी ईप्सा की गई है जो यह हैं कि प्रत्यर्थियों को भारत से उसके निष्कासन के विस्तृत कारणों के बारे में सूचित करने के लिए निर्देशित किया जाए और संयुक्त राष्ट्र अमेरिका की वापसी उड़ान के लिए उसके द्वारा उपगत 2000 अमेरिकन डॉलर के खर्च की रकम वापस दिलाई जाए । प्रथम प्रत्यर्थी भारत संघ है जिसका प्रतिनिधित्व गृह मामलों के मंत्रालय द्वारा किया गया । द्वितीय प्रत्यर्थी आप्रवासन ब्यूरो है जिसका प्रतिनिधित्व महाराष्ट्र के मुंबई स्थित छत्रपति शिवाजी महाराज अंतरराष्ट्रीय विमानपत्तन के आप्रवासन प्राधिकारी द्वारा किया गया । याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – प्रत्युत्तर में फाइल किए गए शपथपत्र में यह अभिकथित किया गया है कि भारत सरकार की नीति उन विदेशियों को वर्जित करने की है जो वीज़ा की शर्तों का अतिक्रमण करते हुए भारत में प्रवेश करते हैं । 1948 का विदेशी विषयक अधिनियम भारत में किसी भी विदेशी को प्रवेश करने की अनुज्ञा प्रदान करने से इनकार करने की शक्ति की पुष्टि करता है । यह अधिनियम केंद्रीय सरकार में इस संबंध में वैवेकिक शक्तियां निहित करता है । सदागुरुसकी को इसी नीति के मतावलंब में प्रवेश देने से इनकार किया गया था । खंडन सपथपत्र में फाइल किए गए शपथत्र में उल्लिखित तथ्यों के अवलोकन के आधार पर एक रुचिकर बात ज्ञात होती है । सदागुरुसकी सर्वप्रथम भारत में अनुज्ञप्त अवधि से अधिक प्रवास के बारे में स्पष्टीकरण देते हुए उपस्थित होता है । वह इससे इनकार नहीं करता । वह इस बात का स्पष्टीकरण नहीं देता कि इन बातों का उल्लेख उसकी याचिका में होने से क्यों छूट गया था । जबकि वह पृष्ठ 103 पर इस बात का दावा करता है कि उसने मार्च, 2018 में हैदराबाद स्थित एफ. आर. आर. ओ. से उसके कारबार वीज़ा की अवधि को विस्तारित किए जाने के लिए आवेदन किया था, किंतु प्राधिकारियों ने उसके आवेदन पर कार्यवाही करने में लगभग दो माह का

समय लगा दिया – इसलिए, जैसाकि प्राय: होता है, यह किसी अन्य की चूक थी, न कि उसकी । यह निवदेन मान्य ठहराए जाने योग्य नहीं है । विधि में ऐसी कोई भी अपेक्षा नहीं है कि वीज़ा की अवधि का अवश्य ही विस्तार किया जाना चाहिए । खंडन सपथपत्र में फाइल किए गए शपथपत्र में यह उल्लेख भी किया गया है कि अब सदागुरुसकी ने प्रथम बार स्वीकार किया है कि उसने वर्ष 2013 में वीज़ा में दर्शित अवधि से अधिक अवधि तक प्रवास किया था । उसका दावा है कि यह पूर्णत: अनवधानतावश की गई भूल थी और ऐसे समय में घटित हुई जब वह युवा छात्र था । तत्पश्चात् उसका दावा है कि बाद में जो वीज़ा जारी किए गए उनमें यह व्यतिक्रम लगभग न के बराबर था । हम इससे असहमत हैं । भारत में आने वाले छात्रों के लिए इस प्रकार का कोई अपवाद नहीं है और अभिकथित रूप से अनवधानता की यह कहानी विश्वसनीय प्रतीत नहीं होती । यह याचिका संविधान के अनुच्छेद 14 और 21, दोनों का अवलंब लेते हुए फाइल की गई है । ये दोनों ही अनुच्छेद 'व्यक्ति' को निर्दिष्ट करते हैं और न कि 'नागरिक' को और इसलिए सदागुरुसकी ने इन अनुच्छेदों का अवलंब लिया । हम लियोनिद बेजर बनाम भारत संघ और अन्य वाले मामले में दिए गए विनिश्चय का अनदेखा करेंगे क्योंकि इस विनिश्चय में कोई भी सामान्य सिद्धांत अधिकथित नहीं किया गया है । सामान्य रूप से अन्ना ओबूखोआ बनाम गोवा राज्य वाले मामले में खंड न्यायपीठ द्वारा दिए गए विनिश्चय से भी हमको कोई सहायता प्राप्त नहीं होती क्योंकि इस विनिश्चय में यह कहा गया है कि यह विनिश्चय गुणागुण का मूल्यांकन किए बिना पारित किया गया था । कतिपय कारणोंवश, जिनको हम समझ पाने में असमर्थ हैं, ऐसा प्रतीत होता है कि सदागुरुसकी को इस तथ्य की जानकारी थी कि जब उसके ऊपर आक्षेपित सूचना तामील की गई, तो वह विधित: भारत में उपस्थित नहीं था । उसने आप्रवासन सीमाओं का अतिक्रमण नहीं किया था । जैसाकि हमने उल्लेख किया है, यद्यपि उसके पास कोई वीज़ा नहीं था, फिर भी इसी बात से उसको भारत में प्रवेश करने का अनिर्बंधित अधिकार प्राप्त नहीं हो जाता । विमान पत्तन पर तैनात सिविल अधिकारियों को सदैव ही यह अधिकार था कि वे उसको प्रवेश प्रदान करने के इनकार कर सकते । जैसाकि हमने अभिलेख के आधार

पर ही निष्कर्ष निकाला है, सदागुरुसकी को प्रवेश प्रदान करने से आक्षेपित इनकारी, जिसका उल्लेख सदागुरुसकी ने अपनी याचिका में बड़ी ही सावधानी के साथ नहीं किया है, के आधार पर एक अत्यंत भिन्न वृत्तांत उपस्थित होता है, जिसको सदागुरुसकी प्रस्तुत करना चाहता था, वह मासूम आहत नहीं है, और हम उसमें एक ऐसे व्यक्ति को देखते हैं, जो भारत में बारंबार प्रविष्ट हुआ, किंतु फिर भी उसने अपनी याचिका में अपने पूर्ववर्ती भ्रमणों के संपूर्ण विवरणों को दर्शित नहीं किया ; उसने अनेकों बार अपनी वीज़ा के निबंधनों का अतिक्रमण किया और याचिका में इन बातों का भी प्रकटीकरण नहीं किया ; और उसके अतिक्रमणों में न केवल अधिकतम अनुज्ञेय अवधि से अधिक अवधि तक देश में रुके रहना सम्मिलित था, बल्कि ऐसे क्रियाकलापों में अंतवर्लित होना भी सम्मिलित था, जो स्पष्टत: मना थी । हम इस बात का मूल्यांकन कर पाने में असमर्थ हैं कि यह याची इन परिस्थितियों में और इन तथ्यों के आधार पर किसी भी अधिकार का अवलंब ले सकता है, चाहे वे मूल अधिकार ही क्यों न हो । अत:, यह मामला मूल अधिकार के अतिक्रमण का मामला नहीं है । यह मामला किसी सीमा के वंदन या व्यापक विधिक सिद्धांत का मामला नहीं है । संपूर्ण मामला सदागुरुसकी के आचरण और उसकी स्वयं की चुकों पर आधारित है । (पैरा 21, 22, 23, 24, 36 और 39)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2019] (2019) एस. सी. सी. ऑनलाइन दिल्ली 8741 = ए. आई. आर. 2019 दिल्ली 170 : **मोहम्मद जाबेद** बनाम **भारत संघ** ; 38

[2016] (2016) एस. सी. सी. ऑनलाइन बाम्बे 128 : **ओबूखोआ** बनाम **गोवा राज्य** ; 36

[2013] (2013) एस. सी. सी. ऑनलाइन बाम्बे 1207 = 2013 (6) ए. बी. आर. 186 : **मोहम्द हसन जाफरी नेईमी** बनाम **भारत संघ और अन्य** ; 37

[2008] (2008) 1 महाराष्ट्र ला जर्नल 289 = 2008(3) ए. आई. आर., बाम्बे आर. 309 :
लियोनिद बेजर बनाम **भारत संघ और अन्य** ; 36

[2006] (2006) 3 एस. सी. सी. 705 = ए. आई. आर. 2006 एस. सी. 1714 :
हसन अली रेहानी बनाम **भारत संघ** ; 35

[2005] (2005) 5 एस. सी. सी. 665 = ए. आई. आर. 2005 एस. सी. 2920 :
सर्वानंद सोनावाल बनाम **भारत संघ** ; 32

[1998] (1998) 47 डी. आर. जे. 74 (डी. डी.) :
मोहम्मद सादिक बनाम **भारत संघ** ; 34

[1991] (1991) 3 एस. सी. सी. 554 = ए. आई. आर. 1991 एस. सी. 1886 :
लुईस डे रिडेट बनाम **भारत संघ** ; 33

[1955] ए. आई. आर. 1955 एस. सी. 367 :
हंस मुलर ऑफ न्यूरेम्बर्ग बनाम **अधीक्षक, प्रेसिडेंसी जेल, कलकत्ता** । 33

आरंभिक रिट अधिकारिता : 2019 की रिट याचिका सं. 1666.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से सर्वश्री (डा.) बिरेन्द्र सराफ, फराज मकबुल और जमान अली

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री राजेन्द्र के. सिंह और अतुल सिंह

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति जी. एस. पटेल ने दिया ।

न्या. पटेल – सूचना तामील हुई । प्रत्यर्थियों ने तामीली के अधित्यजन के लिए अनुरोध किया । दोनों पक्षों की सहमति से यह आदेश पारित किया गया कि सूचना तामील होकर तुरंत वापस प्राप्त हो

और मामले पर विचार किया गया और उसका अंतिम निस्तारण के लिए सुनाई की गई ।

2. याची ('सदागुरुसकी') संयुक्त राष्ट्र अमेरिका की राष्ट्रिक और वहां की नागरिक है । उसने संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन हमारी अधिकारिता का अवलंब लेते हुए यह याचिका फाइल की है । उसने उच्च परमाधिकार वाले अनुतोषों की ईप्सा की है, विनिर्दिष्ट रूप से सदागुरुसकी के भारत में प्रवेश में व्यवधान उत्पन्न करने या उसको भारत में प्रवेश करने से प्रतिषिद्ध करने से प्रत्यर्थियों को निषिद्ध किए जाने के प्रयोजनार्थ परमादेश की रिट जारी किए जाने के लिए और साथ ही प्रत्यर्थियों द्वारा उसको तारीख 21 मई, 2018 को जारी की गई सूचना को अभिखंडित और अपास्त किए जाने के प्रयोजनार्थ उत्प्रेषण की रिट जारी किए जाने की भी ईप्सा की है । सदागुरुसकी ने अनुकल्प में यह ईप्सा भी की है कि उसको कारण बताओ नोटिस जारी किया जाए और सुनवाई का अवसर प्रदान किया जाए और उसको भारत से उसके निष्कासन के विरुद्ध लिखित अभ्यावेदन फाइल करने के द्वारा अपनी प्रतिरक्षा प्रस्तुत करने का अवसर प्रदान किया जाए । इसके अतिरिक्त कुछ लघु अनुतोषों की भी ईप्सा की गई है जो यह हैं कि प्रत्यर्थियों को भारत से उसके निष्कासन के विस्तृत कारणों के बारे में सूचित करने के लिए निर्देशित किया जाए और संयुक्त राष्ट्र अमेरिका की वापसी उड़ान के लिए उसके द्वारा खर्च किए गए 2000 अमेरिकन डॉलर की रकम वापस दिलाई जाए ।

3. प्रथम प्रत्यर्थी भारत संघ है जिसका प्रतिनिधित्व गृह मामलों के मंत्रालय द्वारा किया गया । द्वितीय प्रत्यर्थी आप्रवासन ब्यूरो है जिसका प्रतिनिधित्व महाराष्ट्र के मुंबई स्थित छत्रपति शिवाजी महाराज अंतरराष्ट्रीय विमानपत्तन के आप्रवासन अधिकारी द्वारा किया गया ।

4. हमने सदागुरुसकी की ओर उसके काउंसेल डा. सर्राफ और प्रत्यर्थियों की ओर श्री सिंह को सुना । हमने अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री पर सतर्कतापूर्वक विचार किया । प्रत्युत्तर में तारीख 3 जून, 2019 का एक शपथ-पत्र मुंबई स्थित छत्रपति शिवाजी महाराज

अंतरराष्ट्रीय विमानपत्तन के आप्रवासन ब्यूरो के आप्रवासन अधिकारी श्री विवेकानंद शंकर रसम द्वारा फाइल किया गया है, जो इस रिट याचिका के पृष्ठ 88 से 94 पृष्ठ हैं । इस शपथपत्र के उत्तर में एक रिज्वांडर शपथपत्र भी फाइल किया गया है जिसके बारे में यह कहा जाता है कि यह शपथपत्र तारीख 3 अगस्त, 2019 को संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में शपथपूर्वक प्रमाणित किया गया था । यद्यपि आरंभ में रिट याचिका और उसके समर्थन में फाइल किए गए शपथपत्र और साथ ही प्रत्युत्तर में फाइल किए गए रिज्वांडर शपथपत्र के सत्यापन की शुद्धता के बारे में कुछ विवाद था, किंतु हम उस पर ध्यान नहीं देते और मामले के गुणागुण पर विचार करने के लिए अग्रसर होते हैं ।

5. इस मामले के तथ्य अत्यंत सीमित परिधि के अंतर्गत हैं किंतु हमको इस बात का दुख है कि यह याचिका जिस मामले को प्रस्तुत किए जाने के प्रयोजनार्थ फाइल की गई, उसको ध्यान में रखते हुए इसमें अधिक स्पष्टता नहीं है । सदागुरुसकी, जो अमेरिकन नागरिक है, का कहना है कि वह अमेरिका स्थित एक अलामकारी संगठन ग्लोबल सिटीजन ईयर का भूतपूर्व कर्मचारी है । इस संगठन की स्थापना संयुक्त राष्ट्र अमेरिका वर्ष 2008 में हुई थी । यह संगठन प्रकटत: भारत समेत चार देशों में कार्य करता है । यह संगठन विदेशों से भारत आने वाले विश्वविद्यालयीय छात्रों को शिक्षावृत्ति कार्यक्रम उपलब्ध कराता है । इस संगठन की भारत में एक गैर सरकारी संगठन 'टेक फार इंडिया' के साथ भागीदारी है । यह संगठन हैदराबाद और पुणे से अपने क्रियाकलापों को संचालित करता है ।

6. इस याचिका में प्रत्यक्षत: यह कथन किया गया है कि सदागुरुसकी को तारीख 13 दिसंबर, 2016 को एक अमेरिकन पासपोर्ट जारी किया गया था जो 10 वर्षों की अवधि के लिए तारीख 12 दिसंबर, 2026 तक विधिमान्य था । इसके पश्चात् याचिका में तुरंत ही 2017 की घटनाओं का उल्लेख किया गया है, किंतु हमको यह विश्वास है कि इसी प्रक्रम पर मामले की आरंभिक तथ्यात्मक पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए यह आवश्यक है कि प्रत्युत्तर में फाइल किए गए शपथपत्र में

वर्णित पूर्व घटनाओं को निर्दिष्ट किया जाए जिनका याचिका में पूर्णत: लोप कर लिया गया है । यह याचिका हमको एक सुस्पष्ट धारणा प्रदान करती है - मात्र इन पूर्व घटनाओं का प्रकटीकरण न किए जाने के द्वारा - कि सदागुरुसकी के पास तारीख 19 अप्रैल, 2017 का एक वर्ष का कारबार वीज़ा था और इस तारीख के पूर्व कुछ भी घटित नहीं हुआ था । यह असत्य है । वास्तव में सदागुरुसकी ने सबसे पहले पांच वर्ष पूर्व सितंबर, 2012 के आरंभिक भाग में भारत का भ्रमण किया था । वह भारत में 148 दिनों तक रहा । उस समय वह भारत पर्यटक के वीज़ा पर आया था । तत्पश्चात् वह 2013 में तारीख 5 जून के आसपास पुन: भारत आया और तारीख 22 दिसंबर, 2013 तक, कुल 201 दिनों की अवधि तक छात्र वीज़ा पर भारत में रहा । वर्ष 2012-13 में वह भारत में कुल मिलाकर 349 दिनों तक रहा, किंतु उसने भारत में छात्र वीज़ा पर द्वितीय प्रवास के दौरान 62 दिनों की अधिक अवधि तक प्रवास किया । सदागुरुसकी 2014 में पुन: भारत लौटा और वह भारत में तारीख 5 जनवरी, 2014 से 24 मई, 2014 तक, कुल 140 दिनों तक रहा और तत्पश्चात् तारीख 5 जून, 2014 से तारीख 5 अगस्त, 2014 तक, कुल 62 दिनों तक रहा, इस प्रकार कुल मिलाकर 202 दिनों तक भारत में रहा । यह सब कुछ उसने पर्यटक वीज़ा पर किया ।

7. उसने पुन: वर्ष 2015 में भारत का भ्रमण तारीख 16 अगस्त, 2015 से तारीख 14 सितंबर, 2015 तक (30 दिनों) और तारीख 19 दिसंबर, 2015 से तारीख 4 जनवरी, 2016 तक (17 दिनों) की लघु अवधियों के दौरान दो बार किया । इन दोनों ही बार उसने भारत का भ्रमण ई-पर्यटक वीज़ा पर किया था । वर्ष 2016 में सदागुरुसकी ने भारत का चार बार भ्रमण किया । यह भ्रमण तारीख 12 फरवरी, 2016 से 29 फरवरी, 2016 तक (17 दिनों) और तारीख 22 मई, 2016 से 19 जून, 2016 तक (28 दिनों) ई-पर्यटक वीज़ा पर किए गए थे और तारीख 8 जुलाई, 2016 से 12 अगस्त, 2016 (35 दिनों) तक और तारीख 28 अगस्त, 2016 से 2 जनवरी, 2017 (128 दिनों) तक पर्यटक वीज़ा पर किए गए थे । वह वर्ष 2016 में भारत में कुल मिलाकर 208 दिनों तक रहा ।

8. सदागुरुसकी वर्ष 2017-18 में तारीख 11 जनवरी, 2017 से 7 मई, 2017 (87 दिनों) तक पर्यटक के रूप में भारत में था । तत्पश्चात् वह पुन: भारत वापस लौटा और तारीख 29 अप्रैल, 2017 से 12 जुलाई, 2017 (75 दिनों)तक और तत्पश्चात् तारीख 30 जुलाई, 2017 से 13 मई, 2018 तक (288 दिनों) कारबार वीज़ा पर भारत में था । इस अवधि के दौरान भारत में उसका कुल भ्रमण 450 दिनों का था (जनवरी, 2017 से मई, 2018 तक) और इस प्रकार वह 25 दिनों की अधिक अवधि तक भारत में रुका रहा था ।

9. इन तथ्यों का प्रकटीकरण याचिका में नहीं किया गया है । यद्यपि ऐसा किया जाना चाहिए था । खंडन शपथपत्र में विलंब से एक स्पष्टीकरण दिया गया । फिर भी याचिका उन्हीं तथ्यों के आधार पर आगे अग्रसर होती रही कि सदागुरुसकी भारत में तारीख 29 अप्रैल, 2017 को आया था (जो कि उस वर्ष में उसके द्वितीय भारत भ्रमण का मात्र एक संदर्भ है और भारत में उसके पूर्ववर्ती भ्रमणों के बारे में का कोई भी संदर्भ नहीं दिया गया) । उसका कहना है कि वह आरंभिकत: पुणे में और तत्पश्चात् हैदराबाद में टेक आफ इंडिया के लिए टीम लीडर की हैसियत से कार्यरत था । उसका दावा है कि उसने अनेक प्रतिष्ठित कार्य किए । यह हमारे समक्ष उपस्थित मामले में अंतर्वलित विवाद्यकों को ध्यान में रखते हुए सर्वथा असुसंगत है ।

10. तत्पश्चात् सदागुरुसकी का याचिका में यह पक्षकथन है कि उसने मार्च, 2018 में हैदराबाद में एफ.आर.आर.ओ. में अपने कारबार वीज़ा की अवधि बढ़ाए जाने के लिए आवेदन किया । यहां पर हमको यह प्रतीत होता है कि सदागुरुसकी के पास इस मामले में अन्य कोई विकल्प शेष नहीं रह गया था क्योंकि वह भारत में पहले ही अपनी सीमा से अधिक भ्रमण कर चुका था और उसने अपने वीज़ा की शर्तों को भंग कर दिया था । सदागुरुसकी का कहना है कि यह उसके वीज़ा की शर्तों का अत्यंत मामूली अतिक्रमण था, जिसके लिए उसको कुछ जुर्माना जमा करना था । उसका कहना है कि उसने उस जुर्माने को जमा कर दिया था और तत्पश्चात् उसको सूचित और सुनिश्चित कर दिया गया था कि

मामला सुलझ गया है । उसका कहना है कि यह उसके द्वारा की गई आशय रहित चूक थी ।

11. उसकी याचिका में इस बात का उल्लेख कतई नहीं किया गया कि यह उसकी प्रथम चूक थी । इसी प्रकार से उसने 62 दिनों की चूक कई वर्ष पहले वर्ष 2012-13 में की थी जब वह भारत में छात्र वीज़ा पर आया था । तत्पश्चात् इस याचिका में यह अभिकथन किया गया है कि सदागुरुसकी को तारीख 10 मई, 2018 को हैदराबाद स्थित एफ. आर. आर. ओ. द्वारा बताया गया था कि कारबार वीज़ा के विस्तार के लिए उसके अनुरोध को ठुकरा दिया गया है । उसको देश छोड़ने की अनुज्ञा प्रदान कर दी गई, तत्पश्चात् सदागुरुसकी तारीख 12 मई, 2018 को संयुक्त राष्ट्र अमेरिका वापस लौट गया था ।

12. उसने तत्पर्तापूर्वक नए कारबार वीज़ा के लिए आवेदन किया । उसका दावा है कि भारत में उसके उल्लेखनीय योगदान को ध्यान में रखते हुए उसको पंचवर्षीय बहुउद्देशीय वीज़ा जारी किया गया उसको वीज़ा जारी किए जाने के प्रयोजनार्थ उसके द्वारा बताए गए इन तथाकथित कारणों के संबंध में हमारे समक्ष किसी भी प्रकार का कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया । अभिलेख पर यह दर्शित करने के लिए कोई भी सामग्री उपलब्ध नहीं है कि सदागुरुसकी को भारत में उसके क्रियाकलापों की मान्यता के परिणामस्वरूप या उसके द्वारा भारत में किए गए कार्यों के परिणामस्वरूप तारीख 16 मई, 2018 का पंचवर्षीय बहुउद्देशीय प्रवेश वीज़ा प्रदान किया गया था । हमको ऐसा प्रतीत होता है कि यह पूर्ण रूप से सदागुरुसकी द्वारा गढ़ी गई एक कहानी है ।

13. सदागुरुसकी तारीख 16 मई, 2018 के इस पंचवर्षीय बहुउद्देशीय वीज़ा के आधार पर तारीख 21 मई, 2018 को छत्रपति शिवाजी महाराज अंतरराष्ट्रीय विमानपत्तन के द्वारा भारत आया । उसको आप्रवासन काउंटर पर आप्रवास अधिकारी द्वारा प्रतीक्षा करने के लिए कहा गया और तत्पश्चात् उसको घेरे में लेकर एक कमरे में ले जाया गया । कुछ समय पश्चात् सदागुरुसकी से कहा गया कि उसको संयुक्त राष्ट्र अमेरिका वापस भेजा जा रहा है । सदागुरुसकी का दावा है

कि उसको कोई भी कारण नहीं बताया गया । सदागुरुसकी का इसी समयबिंदु पर यह भी कहना है कि उसको छत्रपति शिवाजी महाराज अंतरराष्ट्रीय विमानपत्तन के आप्रवासन ब्यूरो के ए.एफ.आर.आर.ओ./ ए.सी.पी. द्वारा 1948 के विदेशी विषयक आदेश के पैराग्राफ 6(i) के अधीन एक पृष्ठ की सूचना जारी की गई जिसके अधीन उसको भारत से वापस भेजा जाना था । सदागुरुसकी का कहना है कि इस सूचना में कोई भी कारण दर्शित नहीं किया गया था यद्यपि ऐसा किया जाना आवश्यक था । उसका दावा है कि यह सूचना अवैध है और अपास्त किए जाने योग्य है क्योंकि उसके मामले में 1948 के विदेशी विषयक आदेश का पैराग्राफ 6(i) लागू नहीं होता और इसका अवलंब उसके विरुद्ध नहीं लिया जा सकता । इस सूचना की एक प्रति प्रदर्श 'एफ.' है जो इस याचिका के साथ संलग्न है । हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि इस सूचना में मात्र एक कारण समाविष्ट है, जो यह है कि सदागुरुसकी 'inadmissble pax' है अर्थात् 'प्रवेश न दिए जाने योग्य यात्री' है ।

14. सदागुरुसकी का निवेदन यह है कि क्योंकि उसके पास पांच वर्ष का बहुउद्देशीय प्रवेश कारबार वीज़ा था, जो उसके पक्ष में भारतीय वाणिज्यिक दूतावास द्वारा संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में जारी किया गया था । इसलिए वह भारत प्रवेश का हकदार था और उसको रोका नहीं जा सकता था । उसके इस निवेदन में कोई गुणागुण नहीं है । यहां पर मात्र यह अभिकथित किए जाने की आवश्यकता है कि उसको इस निवेदन को अस्वीकृत किया जाता है । उसके निवेदन में कोई तर्क नहीं है और उसके निवेदन का आवश्यकत: यह अर्थ है कि समस्त आप्रवासन प्रोटोकॉल और प्राधिकार व्यर्थ हैं और समस्त शक्तियों से रहित हैं और मात्र इन प्रोटोकॉल और प्राधिकारों के अंतर्गत केवल इस बात का परीक्षण किया जा सकता है कि क्या देश में प्रवेश करने वाला यात्री वीज़ाधारक है या नहीं । यह विधि के विपरीत है या नहीं, इस पर हम कुछ समय पश्चात् विचार करेंगे ।

15. तत्पश्चात् सदागुरुसकी से संयुक्त राष्ट्र अमेरिका का वापसी टिकट क्रय करने के लिए कहा गया । इस टिकट की कीमत 2,000

अमेरिकन डालर थी । अब वह इस रकम की वापसी या प्रतिपूर्ति चाहता है ।

16. सदागुरुसकी की यह शिकायत भी है कि इस समय के दौरान अर्थात्, जब वह वायुयान से उतरा और जब तक कि उसकी वापसी नहीं हो गई, उसको आप्रवासन के बाहर प्रतीक्षा क्षेत्र में रहने के लिए विवश किया गया और उसको कहीं भी जाने की अनुमति नहीं दी गई । उसको उच्चतर प्राधिकारियों से संपर्क करने की भी अनुज्ञा प्रदान नहीं की गई । उसका दावा है कि उसको भोजन भी नहीं दिया गया और वह सो भी नहीं सका । उसको उसकी वापसी की उड़ान की निर्धारित रवानगी के तुरंत पहले घेरे में लेकर वायुयान तक पहुंचाया गया, जब अन्य सभी यात्री वायुयान में अपने-अपने स्थान ग्रहण कर चुके थे । उसको वायुयान तक सुरक्षा घेरे में ले जाया गया । उसका पासपोर्ट जब्त कर लिया गया था और तभी वापस किया गया जब वह संयुक्त राष्ट्र अमेरिका वापस पहुंच गया ।

17. सदागुरुसकी का निवेदन यह है कि उसको कारण बाताओ सूचना जारी की जानी चाहिए थी और सुनवाई का अवसर प्रदान किया जाना था । उसका निवेदन है कि इस तरीके से भारत से उसका निष्कासन अवैध है । उसका दावा है कि यह असंवैधानिक है और अनेक अंतरराष्ट्रीय प्रसंविदाओं और संधियों, जिनका भारत हस्ताक्षरकर्ता है, के विपरीत है ।

18. तत्पश्चात् सदागुरुसकी ने सूचना का अधिकार अधिनियम के अंतर्गत सूचना प्राप्त करने के लिए आवेदन फाइल किया, जिसके उत्तर में उसको बताया गया कि उसको कोई सूचना प्रदान नहीं की जा सकती और प्राधिकारियों ने 2005 के सूचना का अधिकार अधिनियम की धारा 24 के अधीन उपबंधित अपवादों के अंतर्गत छूट प्राप्ति का दावा किया ।

19. इस याचिका का संक्षेप और सार यही है और इसी संक्षेप और सार के साथ हम प्रत्युत्तर और खंडन सपथपत्र में फाइल किए गए शपथपत्रों का अवलोकन करते हैं । जैसाकि हमने आरंभ में ही उल्लेख किया है, यह याचिका उतनी निष्कपट नहीं है जितनी होनी चाहिए और

सदागुरुसकी के पूर्व भारत भ्रमणों के बारे में इस याचिका में कोई उल्लेख नहीं है या इस तथ्य का भी उल्लेख नहीं है कि वह न केवल एक बार बल्कि अनेकों बार भारत में उसके वीज़ा में अनुध्यात अनुज्ञप्त अवधियों से अधिक अवधियों तक रुका रहा । प्रत्युत्तर में फाइल किए गए शपथपत्र में इस तथ्य को एक तालिका में उल्लिखित किया गया है जो पैराग्राफ 3 के नीचे उपलब्ध है और तत्पश्चात् कहा गया है कि वह तारीख 30 जुलाई, 2017 से तारीख 13 मई, 2018 तक एफ.आर.आर.ओ. में रजिस्ट्रीकृत होने के मामले में दो माह की अवधि के विलंब का दोषी है । आगे यह बताया गया है कि कारबार वीज़ा, जो सदागुरुसकी ने अभिप्राप्त किया था, लघु/मध्यम कारबार के प्रयोजनार्थ था । उसको पूर्ववर्ती वीज़ा पर्यटक वीज़ा थे । सदागुरुसकी इन सब बातों के बावजूद भारत में एक अन्य अस्तित्व के साथ कार्य में संलग्न था । प्रत्युत्तर में फाइल किए शपथपत्र में यह बताया गया है कि सदागुरुसकी द्वारा हस्ताक्षरित घोषणा और वीज़ा आवेदन स्पष्टत: उपदर्शित करते हैं कि उसने यह समझ लिया था कि यदि उसके द्वारा प्रपत्र में उपलब्ध कराई गई सूचना असत्य पाई जाती है, तो उसको भारत में प्रवेश करने देने से या भ्रमण करने देने से इनकार किया जा सकता है । सदागुरुसकी द्वारा फाइल किए गए तीनों वीज़ा आवेदन प्रत्युत्तर में फाइल किए गए इस शपथपत्र के पृष्ठ 95, 97 और 99 पर प्रदर्श ए, बी और सी के रूप में संलग्न है । हम स्वयमेव वीज़ा की प्रति, जो याचिका के साथ संलग्न है (अर्थात् पृष्ठ 56 पर प्रदर्श ई) के आधार पर इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि वीज़ा के ऊपर ही एक विनिर्दिष्ट शर्त मुद्रित है जो यह है कि देश में उसका कोई भी प्रवास 180 दिनों से अधिक का नहीं होगा ।

20. आगे एक शर्त यह भी है कि वीज़ा (उस वीज़ा को सम्मिलित करते हुए, जो तारीख 16 मई, 2018 को जारी किया गया) सदागुरुसकी को भारत में नियोजन के लिए अर्ह नहीं बनाता । जैसाकि हम देख रहे हैं, फाइल पर उपलब्ध दस्तावेज उपदर्शित करते हैं कि सदागुरुसकी ने इस शर्त का अतिक्रमण न केवल पहले किया दिया था बल्कि 2018 के वीज़ा, के संबंध में भी आशय और कुछ नहीं बल्कि पुन: इस शर्त के अतिक्रमण का ही था ।

21. प्रत्युत्तर में फाइल किए गए शपथपत्र में यह अभिकथित किया गया है कि भारत सरकार की नीति उन विदेशियों को वर्जित करने की है जो भारत में प्रवेश करने के पश्चात् वीज़ा की शर्तों का अतिक्रमण करते हैं । 1948 का विदेशी विषयक अधिनियम भारत में किसी भी विदेशी को प्रवेश करने की अनुज्ञा प्रदान करने से इनकार करने की शक्ति की पुष्टि करता है । यह अधिनियम केंद्रीय सरकार में इस संबंध में वैवेकिक शक्तियां निहित करता है । सदागुरुसकी को इसी नीति के मतावलंब में प्रवेश देने से इनकार किया गया था ।

22. खंडन सपथपत्र में फाइल किए गए शपथत्र में उल्लिखित तथ्यों के अवलोकन के आधार पर एक दिलचस्प बात ज्ञात होती है । सदागुरुसकी सर्वप्रथम भारत में अनुज्ञप्त अवधि से अधिक प्रवास के बारे में स्पष्टीकरण देते हुए उपस्थित होता है । वह इससे इनकार नहीं करता । वह इस बात का स्पष्टीकरण नहीं देता कि इन बातों का उल्लेख उसकी याचिका में होने से क्यों छूट गया था । जबकि वह पृष्ठ 103 पर इस बात का दावा करता है कि उसने मार्च, 2018 में हैदराबाद स्थित एफ. आर. आर. ओ. से उसके कारबार वीज़ा की अवधि को विस्तारित किए जाने के लिए आवेदन किया था, किंतु प्राधिकारियों ने उसके आवेदन पर कार्यवाही करने में लगभग दो माह का समय लगा दिया इसलिए, जैसाकि प्राय: होता है, यह किसी अन्य की चूक थी, न कि उसकी । यह निवेदन मान्य ठहराए जाने योग्य नहीं है । विधि में ऐसी कोई भी अपेक्षा नहीं है कि वीज़ा की अवधि का अवश्य ही विस्तार किया जाना चाहिए ।

23. खंडन सपथपत्र में फाइल किए गए शपथपत्र में यह उल्लेख भी किया गया है कि अब सदागुरुसकी ने प्रथम बार स्वीकार किया है कि उसने वर्ष 2013 में वीज़ा में दर्शित अवधि से अधिक अवधि तक प्रवास किया था । उसका दावा है कि यह पूर्णत: अनवधानतावश की गई भूल थी और ऐसे समय में घटित हुई जब वह युवा छात्र था । तत्पश्चात् उसका दावा है कि बाद में जो वीज़ा जारी किए गए उनमें यह व्यतिक्रम लगभग न के बराबर था । हम इससे असहमत हैं । भारत में आने वाले

छात्रों के लिए इस प्रकार का कोई अपवाद नहीं है और अभिकथित रूप से अनवधानता की यह कहानी विश्वसनीय प्रतीत नहीं होती ।

24. यह याचिका संविधान के अनुच्छेद 14 और 21, दोनों का अवलंब लेते हुए फाइल की गई है । ये दोनों ही अनुच्छेद 'व्यक्ति' को निर्दिष्ट करते हैं, न कि 'नागरिक' को और इसलिए सदागुरुसकी ने इन अनुच्छेदों का अवलंब लिया ।

25. अब हम सुसंगत कानून अर्थात् 1946 के विदेशी विषयक अधिनियम का अवलोकन करते हैं । हम 1955 के नागरिकता अधिनियम या 1967 के पासपोर्ट अधिनियम से संबद्ध नहीं है । विदेशी विषयक अधिनियम एक लघु अधिनियम है । इसको वर्ष 1962 में संशोधित किया गया था । इस अधिनियम की धारा 2(क) के अधीन विदेशी को ऐसे व्यक्ति के अर्थ में परिभाषित किया गया है जो भारत का नागरिक नहीं है । सदागुरुसकी स्पष्टत: इस परिभाषा के अंतर्गत आता है । इस अधिनियम की धारा 3 केंद्रीय सरकार को या तो साधारणत: या सब विदेशियों के संबंध में या किसी विशिष्ट विदेशी संबंध में या किसी विहित वर्ग या विवरण के विदेशी के संबंध में भारत में विदेशियों के प्रवेश, उससे उनके प्रस्थान या उसमें उनकी उपस्थिति या उनकी निरंतर उपस्थिति को प्रतिक्षित, विनियमित या निर्बंधित करने के लिए आदेश द्वारा उपबंध बना सकती है । धारा 3 इस प्रकार है :-

> "3. **आदेश बनाने की शक्ति** - (1) केंद्रीय सरकार या तो साधारणत: या सब विदेशियों के संबंध में या किसी विशिष्ट विदेशी संबंध में या किसी विहित वर्ग या विवरण के विदेशी के संबंध में भारत में विदेशियों के प्रवेश, उससे उनके प्रस्थान या उसमें उनकी उपस्थिति या उनकी निरंतर उपस्थिति को प्रतिसिद्ध, विनियमित या निर्बंधित करने के लिए आदेश द्वारा उपबंध बना सकती है ।
>
> (2) विशिष्टत: और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना इस धारा के अधीन बनाए गए आदेश में यह उपबंधित हो सकता है कि विदेश -

(क) भारत में प्रवेश नहीं करेगा, या भारत में केवल ऐसे समयों पर और ऐसे मार्ग से और ऐसे पत्तन या स्थान से, और अपने आगमन पर ऐसी शर्तों के, जैसे विहित की जाएं, अनुपालन के अधीन रहते हुए, प्रवेश करेगा ;

(ख) भारत से प्रस्थान नहीं करेगा, या ऐसे समयों पर और ऐसे मार्ग से और ऐसे पत्तन या स्थान से, और अपने आगमन पर ऐसी शर्तों के, जैसे विहित की जाएं, अनुपालन के अधीन रहते हुए, प्रवेश करेगा ;

(ग) भारत में या भारत में किसी विहित क्षेत्र में नहीं रहेगा ;

(गग) यदि इस धारा के अधीन आदेश द्वारा उससे भारत में न रहने की अपेक्षा की गई है, तो वह अपने व्ययनाधीन साधनारें से भारत से अपने हटाए जाने का और ऐसे हटाए जाने तक भारत में अपने भरण-पोषण का व्यय वहन करेगा ;

(घ) भारत में ऐसे क्षेत्र में जैसा विहित किया जाए आने को ले जाएगा और उसमें रहेगा ;

(ड.) ऐसी शर्तों का अनुपालन करेगा जो विहित या विनिर्दिष्ट की जाएं -

(i) जिनसे किसी विशिष्ट स्थान में निवास करने की उससे अपेक्षा की जाए,

(ii) जिनसे उसकी गतिविधियों पर किन्हीं निर्बंधनों को अधिरोपित किया जाए,

(iii) जिनसे उनको पहचान का ऐसा सबूत देने और ऐसे प्राधिकारी को ऐसी विशिष्टियां ऐसी रीति से और ऐसे समय और स्थान पर जो विहित या विनिर्दिष्ट किए जाएं, रिपोर्ट करने के लिए अपेक्षा की जाए,

(iv) जिनसे उसके फोटोचित्र और अंगुली छाप लिए जाने के लिए, अनुज्ञात करने के लिए और उसके हस्तलेख और हस्ताक्षर का नमूना ऐसे प्राधिकारी को ऐसे समय और स्थान पर जो विहित या विनिर्दिष्ट किए जाएं देने की अपेक्षा की जाए,

(v) जिनसे ऐसे प्राधिकारी द्वारा और ऐसे समय और स्थान पर जैसे विहित या विनिर्दिष्ट किए जाएं ऐसी चिकित्सीय परीक्षा के लिए जो विहित या विनिर्दिष्ट की जाएं स्वयं को प्रस्तुत करने के लिए उससे अपेक्षा की जाएं,

(vi) जिनसे विहित या विनिर्दिष्ट प्रकार के व्यक्तियों के साथ मेलजोल से उसे प्रतिषिद्ध किया जाए,

(vii) जिनसे विहित या विनिर्दिष्ट विवरण के क्रियाकलापों के करने से उसे प्रतिषिद्ध किया जाए,

(viii) जिनसे विहित या विनिर्दिष्ट वस्तुओं के उपयोग या कब्जे से उसे प्रतिषिद्ध किया जाए,

(ix) जिनसे किसी ऐसी विशिष्टि में जैसी विहित या विनिर्दिष्ट की जाए, उसके आचरण को अन्यथा विनियमित किया जाए ;

(च) किन्हीं या सभी विहित या विनिर्दिष्ट निर्बंधनों या शर्तों के, सम्यक् अनुपालन के लिए, या प्रवर्तन के विकल्प के रूप में, प्रतिभू सहित या रहित बंधपत्र निष्पादित करेगा ;

(छ) गिरफ्तार और निरुद्ध या परिरुद्ध किया जाएगा ;

और किसी ऐसे मामले के लिए जो विहित किया जाना है या विहित किया जा सकता है और ऐसे आनुषंगिक या अनुपूरक मामलों के लिए जो केंद्रीय सरकार की राय में इस अधिनियम को प्रभावी करने के लिए समीचीन या आवश्यक है, उपबंध कर सकते हैं ।

(3) इस निमित्त विहित कोई भी प्राधिकारी किसी विशिष्ट विदेशी के संबंध में उपधारा (2) के खंड (ड.) या खंड (च) के अधीन आदेश दे सकता है ।"

26. तत्पश्चात् हम विदेशी विषयक अधिनियम की धारा 6 का अवलोकन करते हैं, जो निम्नलिखित है :–

"6. **जलयान आदि के मास्टरों की बाध्यताएं** – (1) भार में किसी पत्तन पर समुद्र से उस पत्तन को आने वाले या उससे जाने वाले यात्रियों को उस पत्तन पर उतारने या चढ़ाने वाले जलयान का मास्टर और भारत में किसी स्थान से वायु से उस स्थान को आने वाले या जाने वाले यात्रियों को उस स्थान पर उतारने या चढ़ाने वाले वायुयान का चालक ऐसे व्यक्ति को और ऐसी रीति से जो विहित की जाए एक विवरणी देगा जिसमें ऐसी यात्रियों का कर्मीदल के सदस्यों के संबंध में जो विदेशी हों, विहित विशिष्टियां होंगी ।

(2) कोई जिला मजिस्ट्रेट या पुलिस आयुक्त या जहां पर पुलिस आयुक्त नहीं है वहां पुलिस अधीक्षक इस अधिनियम या तद्धीन बनाए गए आदेश के प्रवर्तन से संबंधित प्रयोजनार्थ ऐसे किसी जलयान के मास्टर या ऐसी किसी वायुयान के चालक से अपेक्षा कर सकता है कि वह, यथास्थिति, ऐसे जलयान या वायुयान पर यात्रियों का कर्मीदल के सदस्यों के संबंध में ऐसी सूचना दे जो विहित की जाए ।

(3) ऐसे जलयान या ऐसे वायुयान पर कोई यात्री और ऐसे जलयान या वायुयान के कर्मीदल का कोई सदस्य, यथास्थिति, जलयान के मास्टर और वायुयान के चालक को उपधारा (1) में निर्दिष्ट विवरणी देने के प्रयोजन से या उपधारा (2) में अपेक्षित सूचना देने के लिए ऐसी सूचना जो उसके द्वारा अपेक्षित है, देगा ।

(4) यदि कोई विदेशी इस अधिनियम या तद्धीन बनाए गए आदेश के किसी उपबंध के उल्लंघन में भारत में प्रवेश करता है, तो विहित प्राधिकारी ऐसे प्रवेश की तारीख से दो माह के भीतर ऐसे

जलयान के मास्टर या वायुयान चालक को जिस पर ऐसी प्रविष्टि की गई थी या ऐसे जलयान या वायुयान के स्वामी या स्वामी के अभिकर्ता को, उक्त प्राधिकारी के समाधानपर्यंत और सरकार के व्यय से अन्यथा, किसी जलयान या वायुयान पर भारत से उक्त विदेशी को हटाने के प्रयोजनार्थ स्थान देने के लिए निदेश दे सकता है ।

(5) किसी जलयान का मास्टर या किसी वायुयान का चालक जो भारत में किसी पत्तन या स्थान से भारत से बाहर किसी गंतव्य स्थान पर यात्रियों को ले जाने वाला है या किसी ऐसे जलयान या वायुयान का स्वामी या ऐसे स्वामी का अभिकर्ता यदि उसे केंद्रीय सरकार द्वारा ऐसे निर्दिष्ट किया जाता है, और वर्तमान दरों पर उसके लिए संदाय किया जाता है तो भारत के बाहर ऐसे पत्तन या स्थान के लिए जैसा केंद्रीय सरकार विनिर्दिष्ट करे धारा 3 के अधीन भारत में न हरने के लिए आदिष्ट किसी विदेशी और उसके साथ यात्रा कर रहे ऐसे आश्रितों के लिए, यदि कोई हों, उस जलयान या वायुयान पर ऐसे पत्तन या स्थान के लिए स्थान की व्यवस्था करेगा जो ऐसा पत्तन या स्थान है जहां वह जलयान या वायुयान जाना है ।

(6) इस धारा के प्रयोजनों के लिए –

(क) 'जलयान के मास्टर' और 'किसी वायुयान के चालक' के अंतर्गत, यथास्थिति, ऐसे मास्टर या चालक द्वारा, उसकी ओर से इस धारा द्वारा उस पर अधिरोपित कर्तव्यों का निर्वहन करने के लिए, प्राधिकृत कोई व्यक्ति भी है ;

(ख) 'यात्री' से ऐसा यात्री अभिप्रेत है जो ऐसे कर्मीदल का वास्तविक सदस्य नहीं है और जो किसी जलयान या वायुयान पर यात्रा कर रहा है या यात्रा करना चाहता है ।"

27. 1948 का विदेशी विषयक आदेश धारा 3 द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए अधिनियमित किया गया था । विदेशी

विषयक आदेश का खंड 3 इस मामले के प्रयोजनार्थ सुसंगत है और यह निम्नलिखित है :–

"3. **भारत में प्रवेश की अनुज्ञा प्रदान करने या इनकार करने की शक्ति** – (1) भारत में कोई विदेशी प्रवेश नहीं करेगा –

(क) भारत की सीमा में प्रवेश के प्रयोजनार्थ किसी पत्तन या अन्य स्थान के अन्यथा और उस पत्तन या स्थान पर अधिकारिता प्राप्त रजिस्ट्रीकरण अधिकारी या तो सामान्यत: विदेशियों या विदेशियों के किसी विनिर्दिष्ट वर्ग या ब्यौरे के वास्तव नियुक्त किया गया हो ; या

(ख) उस पत्तन या स्थान पर अधिकारिता रखने वाले सिविल प्राधिकारी की अनुज्ञा के बिना ।

(2) प्रवेश की अनुज्ञा से इनकार कर दिया जाएगा यदि सिविल प्राधिकारी इस बाबत संतुष्ट है कि –

(क) विदेशी भारत में प्रवेश के प्रयोजनार्थ विधिमान्य पासपोर्ट या वीज़ा के कब्जे में नहीं है या उसको पासपोर्ट या वीज़ा के कब्जे से छुट प्रदान कर दी गई है ;

(ख) वह विकृत चित्त का व्यक्ति है या मंदबुद्धि का व्यक्ति ;

(ग) वह किसी घृणित या संक्रामक रोग से ग्रसित है, जिसके परिणामस्वरूप पत्तन या प्रवेश के स्थान पर तैनात चिकित्सा अधिकारी की राय में, जैसा भी मामला हो, उस विदेशी के प्रवेश से लोक स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की संभावना है ;

(घ) उसको 1903 के भारतीय प्रत्यर्पण अधिनियम (1903 का 15) के अर्थान्तगर्त किसी प्रत्यर्पण योग्य अपराध के बाबत विदेश में दोषी ठहराया गया हो ;

(ङ) उसका प्रवेश किसी सक्षम प्राधिकारी द्वारा या केंद्रीय

सरकार के विनिर्दिष्ट आदेशों के अधीन जारी आदेश के अंतर्गत प्रतिषिद्ध है ।

(3) सिविल प्राधिकारी प्रवेश के प्रयोजनार्थ अनुज्ञा प्रदान करने के पहले उन शर्तों को भी अधिरोपित कर सकता है, जिनको वह उचित समझे और उन शर्तों में, जैसाकि केंद्रीय सरकार उचित प्रतीत करे, फेरफार किया जा सकता है या उनको रद्द किया जा सकता है ।

(4) .....

(क) कोई सिविल प्राधिकारी उप पैरा (1) से (3) में या 1920 के पासपोर्ट (भारत में प्रवेश) अधिनियम (1920 का 35) या इसके अधीन बनाए गए नियमों में समाविष्ट किसी बात के होते हुए भी लोक सुरक्षा के हित में भारत में किसी विदेशी के प्रवेश को प्रतिषिद्ध कर सकता है ।

(ख) जब भी कोई सिविल प्राधिकारी खंड (ख) के अधीन कोई आदेश जारी करता है, तो वह इस मामले की रिपोर्ट तुरंत केंद्रीय सरकार को देगा, जो उस आदेश को उस रीति में, जिसमें वह उचित समझे, रद्द या उपांतरित कर सकता है ।

(5) जहां किसी विदेशी को प्रवेश प्रदान किए जाने से इनकार कर दिया जाता है, तो उसको सिविल प्राधिकारी द्वारा अनुमोदित किसी स्थान पर निरुद्ध किया जा सकता है और यदि वह समुद्र मार्ग द्वारा आया है, तो उसको अस्थायी रूप से इस प्रयोजनार्थ जलयान में ही रखा जाएगा और जब किसी विदेशी को इस प्रकार से निरुद्ध किया जाएगा, तो उसको विधिक अभिरक्षा में रखा जाना प्रतीत किया जाएगा और यह प्रतीत नहीं किया जाएगा कि वह भारत में प्रवेश कर चुका है ।"

28. इसी प्रकार से खंड 6 और 7 निम्नलिखित हैं :-

"6. **जलयान से किसी विदेशी को हटाए जाने के संबंध में जलयान के मास्टर इत्यादि के दायित्व** -

(1) कोई सिविल प्राधिकारी जलयान के मास्टर से या वायुयान के चालक से, जिसमें विदेशी का आगमन हुआ है या उस जलयान या वायुयान के स्वामियों या अभिकर्ताओं, जैसाकि उस सिविल प्राधिकारी की राय में उचित प्रतीत होता है, उस विदेशी, जिसको प्रवेश की अनुज्ञा प्रदान किए जाने से इनकार कर दिया गया है या जिसने भारत में बिना अनुज्ञा के प्रवेश किया है या जिसका आगमन उप पैरा (3) के अतिलंघन में हुआ है, को हटाए जाने की अपेक्षा कर सकता है और मास्टर, चालक, स्वामी या अभिकर्ता, जैसा भी मामला हो, उन अपेक्षाओं का अनुपालन करेंगे, जब तक कि वे अपेक्षाएं भारत में उस विदेशी के आगमन की तारीख के पश्चात् दो माह से अधिक का समय व्यतीत हो जाने के पश्चात् प्राप्त न की गई हों ।

(2) उस जलयान का मास्टर या वायुयान का चालक, जिसका भारत के बाहर किसी अन्य पत्तन पर पहुंचना तय है, किसी ऐसे विदेशी का स्वागत कर सकता है, जिसके संबंध में यह निर्देशित करते हुए आदेश पारित किया जा चुका है कि वह भारत में नहीं रहेगा और उसके आश्रित, यदि कोई हो, जलयान या वायुयान पर सवार होंगे, जैसा भी मामला हो, और उसको समस्त शुल्कों का संदाय करेंगे और तत्पश्चात् यात्रा के दौरान उस पत्तन के लिए मार्ग और समुचित आवास और भरण-पोषण का प्रबंध किया जाएगा ।

(3) किसी जलयान के मास्टर या वायुयान के चालक का आगमन सिविल प्राधिकारी की अनुज्ञा के बिना और उसकी इच्छा के विरुद्ध उस जलयान या वायुयान में यात्रा करने वाले किसी भी व्यक्ति को भारत के किसी भी पत्तन पर उस व्यक्ति की इच्छा के विरुद्ध नहीं उतारेगा, जबतक कि केंद्रीय सरकार द्वारा उस व्यक्ति को भारत में लाए जाने की अपेक्षा नहीं की जाती ।

(4) 1957 के विदेशी विषयक (छूट प्राप्त) आदेश में

समाविष्ट कोई भी बात उप पैरा (3) के उपबंधों के क्रियान्वयन और उपयोजन को विवर्जित नहीं करेगी ।

(7) **भारत में प्रवास पर निर्बंधन** –

(1) प्रत्येक विदेशी, जो 1920 के पासपोर्ट (भारत में प्रवेश) अधिनियम (1920 का 34) के मतावलंबन में जारी वीज़ा के प्राधिकार के अंतर्गत भारत में प्रवेश करता है, अधिकारिता प्राप्त रजिस्ट्रीकरण प्राधिकारी से या तो उस स्थान पर जहां वह विदेशी भारत में प्रवेश करता है, या उस स्थान जहां पर वह 1939 के विदेशियों के रजिस्ट्रीकरण नियम के नियम 6 के अनुसार रजिस्ट्रीकरण रिपोर्ट प्रस्तुत करता है, उस अवधि को उपदर्शित करते हुए अनुमति प्राप्त करेगा, जिसके दौरान वह उसे भारत में प्रवास के लिए प्राधिकृत किया गया है और इस अनुमति में उसके भारत में ठहरने के स्थान या स्थानों को भी उपदर्शित किया जाएगा, यदि किसी ठहरने के स्थान को वीज़ा में विनिर्दिष्ट किया गया हो ।

(2) प्रत्येक विदेशी, जिसको उप पैरा (1) के उपबंध लागू नहीं होते, उस अवधि को उपदर्शित करते हुए, जिसके दौरान वह भारत मे प्रवास के लिए प्राधिकृत है, रजिस्ट्रीकरण प्राधिकारी, जिसके समक्ष वह 1939 के विदेशियों का रजिस्ट्रीकरण नियम के नियम 6 के अनुसार रजिस्ट्रीकरण रिपोर्ट प्रस्तुत करता है, से अनुज्ञा अभिप्राप्त करेगा ।

(3) प्रत्येक विदेशी, जिसको उप पैरा (1) या उप पैरा (2) के अधीन अनुज्ञा जारी की गई है –

(i) यदि अनुज्ञा में भारत में प्रवास के स्थान उपदर्शित हैं, तो किसी अन्य स्थान का दौरा नहीं करेगा, जब तक कि उस अनुज्ञा को केंद्रीय सरकार द्वारा उन अन्य स्थानों की बाबत भी विस्तारित कर दिया गया हो ;

(ii) यदि अनुज्ञा में भारत में प्रवास के स्थान उपदर्शित हैं, तो वह उन स्थानों से उन स्थानों के बाबत अधिकारिता रखने वाले रजिस्ट्रीकरण प्राधिकारी को आगमन के 24 घंटों के भीतर या, जैसा भी मामला हो, अपने आशयित प्रस्थान के पूर्व व्यक्तिगत रूप से या लिखित में अपने आगमन और प्रस्थान की रिपोर्ट देगा ; और

(iii) जब तक कि अनुज्ञा में उपदर्शित अवधि को केंद्रीय सरकार द्वारा विस्तारित नहीं कर दिया जाता उक्त अवधि के व्यतीत हो जाने के पूर्व भारत से प्रस्थान करेगा और विदेशी द्वारा भारत से प्रस्थान के समय उस स्थान, जहां से वह प्रस्थान कर रहा है, पर अधिकारिता रखने वाले रजिस्ट्रीकरण अधिकारी के समक्ष अनुज्ञा का अभ्यर्पण किया जाएगा ।"

29. इसलिए मामले के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए कानूनी उपबंध स्पष्ट करते हैं कि किसी भी प्रवेश के पत्तन पर तैनात सिविल प्राधिकारी को किसी भी विदेशी अर्थात् किसी भी व्यक्ति को जो भारत का नागरिक नहीं है, को प्रवेश देने से इनकार करने का विवेकाधिकार प्राप्त होता है । अत: हम प्रस्तुत की गई विधि की प्रतिपादना से सहमत नहीं हैं चूंकि हमको ऐसा प्रतीत होता है कि हमारे समक्ष विधि की उक्त प्रतिपादना को अत्यंत बढ़ा-चढ़ा कर प्रस्तुत किया गया है अर्थात् पंचवर्षीय बहुउद्देशीय प्रवेश वीज़ा प्राप्त होने वाली बात, जिसके आधार पर सदागुरुसकी को प्रवेश के पत्तन छत्रपति शिवाजी महाराज अंतरराष्ट्रीय विमान पत्तन पर रोका नहीं जा सकता था । यदि ऐसा होता, तो आप्रवासन अधिकारियों को तैनात किए जाने की संपूर्ण आवश्यकता ही व्यर्थ हो जाएगी । ऐसा कभी भी नहीं हो सकता ।

30. इन कानूनी उपबंधों से द्वितीय सिद्धांत भी उद्भूत होता है, जो यह है कि यदि प्राधिकारी इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि कोई ऐसा विदेशी है जो देश का नागरिक नहीं है और जो अपनी वीज़ा शर्तों के

अतिक्रमण में कार्य कर रहा है, तो उसको या तो देश से निकाला जा सकता है या देश में पुन: प्रवेश से प्रतिषिद्ध या प्रवारित किया जा सकता है । हमने पहले ही उल्लेख किया है कि सदागुरुसकी द्वारा वीज़ा शर्तों के अनेक अतिक्रमण किए गए हैं । उसके द्वारा दो बार अनुज्ञप्त अवधि से अधिक प्रवास किया गया जिसका उल्लेख हमने पहले ही कर दिया है । एक अन्य तथ्य हमारे समक्ष विचारार्थ उपस्थित हुआ है जो यह है कि सदागुरुसकी ने भारत में नियोजित होने का दावा किया है । यद्यपि उसके वीज़ा में अधिरोपित निर्बंधन इसके लिए विनिर्दिष्ट रूप से प्रतिषिद्ध करते हैं । ऐसा प्रतीत होता है कि सदागुरुसकी 'कारबार' की तुलना 'नियोजन' के साथ करना चाहता है । दोनों के मध्य अंतर सुव्यक्त है और हमको ऐसा पूर्णतया प्रतीत होता है कि मामले के इस पहलू पर और अधिक विचार किया जाना अनावश्यक होगा । न्यायालय के दस्तावेजों के आधार पर हमने केवल यह अवेक्षित किया है कि सदागुरुसकी ने बिना किसी शपथपत्र के इंडिया ऑफ ग्लोबल सिटीजन ईयर की उप-सचिव अर्चना राव का पत्र तारीख 8 अगस्त, 2019 का पत्र अभिलेख पर प्रस्तुत किया है जिसके द्वारा अर्चना राव ने सदागुरुसकी को टीम लीडर की पूर्णकालिक पद प्रस्तावित किया था । सदागुरुसकी को अर्चना राव के निकट संपर्क में रहकर कार्य करना था और उसको रिपोर्ट भी देनी थी । इस पत्र से यह स्पष्ट होता है कि यह वास्तव में नियोजन ही था । इस पत्र में पारस्परिक सहमति के आधार पर तारीख 20 मार्च, 2019 से वार्षिक वेतन प्रदान किए जाने के बाबत उपबंधित किया गया है (यद्यपि इस बात को पत्र में अभिकथित नहीं किया गया है) और साथ ही बीमा और चिकित्सीय और दंत चिकित्सा को आच्छादित किए जाने के बाबत अंशदान के लिए भी उपबंधित किया गया है और वार्षिक वेतन के 3 प्रतिशत तक के बराबरी वाले फंड के बाबत सेवानिवृत्ति योजना के लिए, संदत्त अवकाश, आनम्य सेवा समय और अन्य लाभों और ग्लोबल सिटीजन ईयर के कर्मचारियों की सेवा पुस्तिका में समाविष्ट शर्तों के अनुसार उत्तरदायित्वों के बारे में भी उपबंधित किया गया है । जैसाकि हमने अवेक्षित किया है, सुसंगत प्रश्नगत वीज़ा की शर्तें, प्रदर्श 'ई' सदागुरुसकी को स्पष्टतया देश में

नियोजित होने से प्रतिषिद्ध करती हैं । स्पष्ट शब्दों में सदागुरुसकी ने जो किया, वह उसके भारत में कारबार वीज़ा के आधार पर प्रवेश की शर्तों के अंतर्गत पूर्णतया प्रतिषिद्ध था । यह वीज़ा की शर्तों का एक अन्य अतिक्रमण था । हमारे विचार में यह याचिका को खारिज करने का अपने आप में ही एक पर्याप्त कारण है ।

31. तथापि, याची के काउंसेल डा. सर्राफ ने हमारा ध्यान अनेक निर्णयज विधियों और सिविल और राजनैतिक अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र अंतरराष्ट्रीय प्रसंविदा की ओर आकर्षित किया । इस बात में कोई संदेह नहीं किया जा सकता कि भारत इन प्रसंविदाओं का हस्ताक्षरकर्ता है । डा. सर्राफ ने संयुक्त राष्ट्र प्रसंविदा के अनुच्छेद 13 का अवलंब लिया । यह अनुच्छेद कहता है कि यदि किसी राज्य पक्ष के राज्य क्षेत्र में विधिक रूप से कोई विदेशी प्रवेश करता है, तो उसको केवल विधि अनुसार पारित विनिश्चयों के मतावलंबन में ही निष्काषित किया जा सकता है और उसको सामान्यतया अपने निष्कासन के विरुद्ध कारणों को प्रस्तुत करने और सक्षम प्राधिकारी द्वारा पदनामित सक्षम प्राधिकारी या व्यक्तियों के समक्ष अपने मामले का पुनर्विलोकन किए जाने और अपना प्रतिनिधित्व किए जाने की अनुज्ञा प्रदान की जाएगी । उन्होंने निवेदन किया कि यह प्रतिपादना सदागुरुसकी के मामले में लागू होती है। उनका निवेदन भ्रमित करने वाला है और दिशाहीन है । सदागुरुसकी भारत के राज्य क्षेत्र में कभी भी विधिक रूप से उपस्थित नहीं था, जब उससे तारीख 21 मई, 2018 को उसके आगमन पर संयुक्त राष्ट्र अमेरिका वापस लौटने की अपेक्षा की गई थी । उसने तारीख 12 मई, 2018 को देश छोड़ दिया था और अब पुन: प्रवेश करने का प्रयास कर रहा है । अत: उसको निष्कासित नहीं किया गया था जिसका अर्थ यह है कि किसी ऐसे व्यक्ति का भारत के राज्य क्षेत्र से निष्कासन जो पहले से ही भारत के सीमाओं के भीतर है । उसको देश में प्रवेश प्रदान करने से इनकार किया गया था । अत: इस मामले में अनुच्छेद 13 किसी भी प्रकार से लागू नहीं होती ।

32. तत्पश्चात् उन्होंने उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए **सर्वानंद**

सोनावाल बनाम **भारत संघ**[1] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय का अवलंब लिया । हम इस बात पर विचार कर पाने में असमर्थ हैं कि यह विनिश्चय किस प्रकार से सदागुरुसकी के मामले में लागू होता है । इस विनिश्चय के पैरा 74 और 75 का अवलंब लिया गया जिनमें विदेशियों के निर्वासन से संबंधित विधि के बारे में उपबंधित है । वास्तव में ये लेखांश (पैरा 74 और 75) सदागुरुसकी के विरुद्ध है :-

> "74. हम यहां पर विदेशियों के निर्वासन से संबंधित विधि का संक्षेप में उल्लेख करना आवश्यक प्रतीत करते हैं । चूंकि हमको इसके बारे में कुछ भ्रम प्रतीत होता है और हमारे समक्ष दृढ़तापूर्वक यह दलील दी गई है कि विदेशियों के भी अनेक अधिकार होते हैं और उनके साथ निष्पक्षता सुनिश्चित किए जाने के प्रयोजनार्थ उनकी पहचान और निर्वासन से संबंधित प्रक्रिया को विस्तारपूर्वक उपबंधित किया जाना चाहिए ।
>
> 75. जे. जी. स्टार द्वारा लिखित **इन इंट्रोडक्शन टू इंटरनेशनल लॉ** (1994 में भारत में पुनर्मुद्रित प्रथम संस्करण) के अध्याय 12 (पृष्ठ 348) में इन बिंदुओं पर विधि को अधिकथित किया गया है, जो इस प्रकार है –
>
> > "अधिकांश देश विधिक सिद्धांतों के आधार पर यह दावा करते हैं कि समस्त विदेशियों को इस बात की पुष्टि करते हुए स्वेच्छयापूर्वक अपवर्जित कर दिया जाए कि इस प्रकार का अबाधित अधिकार किसी भी प्रभुसत्ता संपन्न देश की एक अनिवार्य विशेषता है । ग्रेट ब्रिटेन और संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के न्यायालयों ने यह अभिकथित किया है कि विदेशियों को स्वेच्छापूर्वक अपवर्जित किए जाने का अधिकार राज्य क्षेत्रीय प्रभूसत्ता का मामला है । जब तक कि राज्यों को इसके विपरीत अंतरराष्ट्रीय संधि द्वारा बाध्य न कर दिया जाए, वे राज्य अंतरराष्ट्रीय विधि के अधीन किसी विदेशी को देश में प्रवेश प्रदान करने या उसके अधीन उनको देश से निष्कासित

[1] (2005) 5 एस. सी. सी. 665 = ए. आई. आर. 2005 एस. सी. 2920.

करने के कर्तव्य के अध्यधीन नहीं है और न ही अंतरराष्ट्रीय विधि उनके ऊपर प्रवेश कर चुके किसी विदेशी को देश में ठहरने की किसी अवधि के संबंध में कोई कर्तव्य अधिरोपित करती है ।"

इसको देश में प्रवेश प्रदान करने से इनकार करने की शक्ति की भांति, राज्य की राज्य क्षेत्रीय प्रभूसत्ता की घटना माना जाता है । अंतरराष्ट्रीय विधि किसी विदेशी के निष्कासन को प्रतिषिद्ध नहीं करती (पृष्ठ 351) । 1966 के सिविल और राजनैतिक अधिकारों पर अंतरराष्ट्रीय प्रसंविदा के अनुच्छेद 13 को विनिर्दिष्ट किया गया है जो उपबंधित करता है कि किसी राज्य, जो प्रसंविदा का पक्ष है, के राज्य क्षेत्र में विधिक रूप से प्रवेश कर चुके किसी विदेशी को केवल विधि अनुसार दिए गए विनिश्चय के मतावलंबन में निष्कासित किया जा सकता है और केवल उन मामलों में निष्कासित किया जा सकता है जहां राष्ट्रीय सुरक्षा के बाध्यकारी कारण अन्यथा रूप से अपेक्षा करते हों और उसको निष्कासन के विरुद्ध कारणों को प्रस्तुत किए जाने की अनुज्ञा प्रदान की जानी चाहिए और यह अनुज्ञा भी प्रदान की जानी चाहिए कि वह अपने मामले का पुनर्विलोकन करा सके और इस बात की भी अनुज्ञा प्रदान की जानी चाहिए कि सक्षम प्राधिकारी के समक्ष उसका प्रतिनिधित्व हो । इस बात का उल्लेख किया जाना महत्वपूर्ण है कि 1966 की यह प्रसंविदा केवल तब लागू होगी जब कोई विदेशी भारत में विधित: प्रवेश कर चुका हो अर्थात् उसके पास विधिमान्य पासपोर्ट, वीजा इत्यादि हो और यह प्रसंविदा उन लोगों पर लागू नहीं होगी जिन्होंने किसी देश में अवैध रूप से या विधि विरुद्ध रूप से प्रवेश किया है । यही विचार ओपेनहीम की अंतरराष्ट्रीय विधि (1992 का नवां संस्करण, पैरा 400, 401 और 413) में भी यही विचार व्यक्त किए गए हैं । उपरोक्त लेखक ने कहा है कि विदेशियों का किसी देश में आगमन विवेकाधिकार का मामला है और प्रत्येक राज्य को अपनी राज्य क्षेत्रीय सर्वोच्चता के कारणवश यह सक्षमता प्राप्त है कि वह अपने राज्य क्षेत्र से या उसके किसी

भाग से किसी विदेशी को निष्कासित कर सके । पैरा 413 में यह कहा गया है कि राज्यों का विदेशियों को निष्कासित करने का अधिकार सामान्य रूप से एक मान्यता प्राप्त अधिकार है । इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि कोई विदेशी मात्र अस्थायी दौरे पर आया है या किसी वृत्तिक या कारबार के संबंध में या किसी अन्य प्रयोजनार्थ उस देश के राज्य क्षेत्र में रहने लगा है और इस कारणवश उसने उस देश में अपना निवास स्थान साबित कर दिया है । किसी भी युद्धरत्त राज्य के लिए यह सुविधाजनक होगा कि वह समस्त विद्रोही राष्ट्रिकों को, जो उसके अपने राज्य क्षेत्र के भीतर निवास कर रहे हैं या अस्थायी रूप से रुके हुए हैं, को निष्कासित कर दे यद्यपि इस प्रकार का कोई भी उपाय किसी भी वयैक्तिक विदेशी के विरुद्ध अत्यधिक कड़ा उपाय होगा । सामान्यतया इस बात को स्वीकार किया जाता है कि इस प्रकार का निष्कासन न्यायोचित होगा । 1966 के सिविल और राजनैतिक अधिकारों पर अंतरराष्ट्रीय प्रसंविदा के अनुच्छेद 13 को ध्यान में रखते हुए किसी विदेशी को, जो किसी राज्य के राज्य क्षेत्र में विधिक रूप से निवास कर रहा है, को केवल विधि के अनुसार पारित विनिश्चय के मतावलंबन में निष्कासित किया जा सकता है ।"

(अधोरेखांकन पर बल दिया गया ।)

33. वास्तव में, हम इस बात का उल्लेख करते हैं कि **लुईस डे रिडेट** बनाम **भारत संघ**[1] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय में माननीय उच्चतम न्यायालय ने स्पष्टत: अभिनिर्धारित किया है कि विदेशियों को उपलब्ध संवैधानिक अधिकार अनुच्छेद 21 तक सीमित हैं । उच्चतम न्यायालय ने **हंस मुलर ऑफ न्यूरेम्बर्ग** बनाम **अधीक्षक, प्रेसिडेंसी जेल, कलकत्ता**[2] वाले मामले में दिए गए अपने पूर्ववर्ती विनिश्चय का अनुसरण किया । उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि भारत में विधि की स्थिति यह है कि कार्यकारी सरकार को किसी भी विदेशी को निष्कासित करने के अनिर्बंधित अधिकार प्राप्त हैं ।

---

[1] (1991) 3 एस. सी. सी. 554 = ए. आई. आर. 1991 एस. सी. 1886.

[2] ए. आई. आर. 1955 एस. सी. 367.

34. दिल्ली उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा **मोहम्मद सादिक** बनाम **भारत संघ**[1] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय से भी हमको कोई सहायता प्राप्त नहीं होती क्योंकि इस मामले में भी एक अफगान शरणार्थी के मामले पर विचार किया गया था जो 1981 में भारत आया था और तत्पश्चात् भारत में ही कार्य करने लगा और रहने लगा और उसने यहां पर अपना घर और परिवार भी बनाया ।

35. तत्पश्चात् **हसन अली रेहानी** बनाम **भारत संघ**[2] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय का अवलंब लिया गया । यह मामला भी पुन: प्रभेदनीय है । इस मामले के याची का जन्म भारत में हुआ था और उसके माता-पिता ईरानी नागरिक थे । उसकी शिक्षा भारत में ही हुई और वह भारत में ही रहना चाहता था । उसने भारतीय पासपोर्ट के लिए आवेदन प्रस्तुत किया । किंतु उसको भारत, जहां वह विधित: रह रहा था, से अचानक निष्कासित करके तेहरान भेज दिया गया । हम इस बात को समझ पाने में असमर्थ है कि यह विनिश्चय सदागुरुसकी के मामले में किस प्रकार से थोड़ा सा भी सहायक हो सकता है । **हसन अली** (उपरोक्त) वाले मामले के पैरा 6 से 9 में समाविष्ट संपूर्ण चर्चा इस तथ्य पर आधारित है कि उस मामले का याची भारत में विधिक रूप से निवास कर रहा था और उसको सुनवाई का कोई अवसर दिए बिना या उसके ऊपर किसी सूचना की तामीली कराए बिना संक्षिप्तत: निष्कासित किए जाने की ईप्सा की गई थी । वास्तव में, इस विनिश्चय के पैरा 8 से यह स्पष्ट हो जाता है कि वह देश में विधित: प्रविष्ट हुआ था । किंतु सदागुरुसकी का यह पक्षकथन बिल्कुल भी नहीं है ।

36. हम **लियोनिद बेजर** बनाम **भारत संघ और अन्य**[3] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय का अनदेखा करेंगे क्योंकि इस विनिश्चय में कोई भी सामान्य सिद्धांत अधिकथित नहीं किया गया है । सामान्य रूप से अन्ना **ओबूखोआ** बनाम **गोवा राज्य**[4] वाले मामले में खंड न्यायपीठ

---

[1] (1998) 47 डी. आर. जे. 74 (डी. डी.).

[2] (2006) 3 एस. सी. सी. 705 = ए. आई. आर. 2006 एस. सी. 1714.

[3] (2008) 1 महाराष्ट्र ला जर्नल 289 = 2008(3) ए. आई. आर., बाम्बे आर. 309.

[4] (2016) एस. सी. सी. ऑनलाइन बाम्बे 128.

द्वारा दिए गए विनिश्चय से भी हमको कोई सहायता प्राप्त नहीं होती क्योंकि इस विनिश्चय में यह कहा गया है कि यह विनिश्चय गुणागुण का मूल्यांकन किए बिना पारित किया गया ।

37. इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा **मोहम्मद हसन जाफरी नेईमी** बनाम **भारत संघ और अन्य**[1] वाले मामले में दिए गए एक अन्य निर्णय को भी हमारे समक्ष निर्दिष्ट किया गया है जिसमें हममें से एक (न्यायमूर्ति एस. सी. धर्माधिकारी) न्यायाधीश थे । यह निर्णय भी तथ्यों के आधार पर प्रभेदनीय है, किंतु पैरा 21 और 22 में समाविष्ट निष्कर्ष वर्तमान याची के विरुद्ध हैं, जो निम्नलिखित हैं :-

> "21. **श्री चिटनीस** ने उच्चतम न्यायालय द्वारा की गई मताभिव्यक्ति और कारणों को समनुदेषित किए जाने की बाध्यता पर विशेष रूप से जोर दिया । उन्होंने निवेदन किया कि आक्षेपित आदेश को अभिखंडित और अपास्त किया जाना चाहिए ।
>
> 22. इसके विपरीत प्रत्यर्थियों की ओर से उपस्थित विद्वान् काउंसेल ने निवेदन किया कि मामले पर उचित परिप्रेक्ष्य में विचार किया जाना चाहिए । याची को कोई मूल अधिकार नहीं है कि वह भारत में निवास कर सके और यहां पर बस सके चूंकि वह भारत का नागरिक नहीं है । याची भारत में 1920 के अधिनियम के निबंधनों के अनुसार और पासपोर्ट के आधार पर प्रविष्ट हुआ है । तथापि, याची इस बाबत पूर्णतया जागरूक है और उसको इस तथ्य की पूरी-पूरी जानकारी है कि उसके द्वारा वीज़ा अभिप्राप्त करने की अपेक्षा का पालन किया जाना चाहिए । क्योंकि उसने इस अपेक्षा को स्वीकर किया है, इस अपेक्षा का पालन किया है । जब कोई अपेक्षा याची जैसे पक्षों पर आत्यंतिक रूप से लागू तो वह वीजा की नियमों और शर्तों का अतिक्रमण नहीं कर सकता । जब याची ने उसके वीजा के विस्तार की ईप्सा की थी, तो उसे स्पष्टत: सूचित कर दिया गया था कि उसके पासपोर्ट पर सुसंगत शर्तों का

[1] (2013) एस. सी. सी. ऑनलाइन बाम्बे 1207 = 2013 (6) ए. बी. आर. 186.

पृष्ठांकन किया जाना अपेक्षित है । तथापि, याची के मामले में शर्तें और उनका पृष्ठांकन विनिर्दिष्ट है अर्थात् उसको वीजा पर नियोजन, कारबार, अध्ययन की अनुज्ञा नहीं है । याची ने इन्हीं आधारों पर अपना प्रवास जारी रखा और इसीलिए वह किसी कारबार संबंधी क्रियाकलाप में सम्मिलित नहीं हो सकता था । तथापि, जांच किए जाने पर यह प्रकट हुआ कि वह कारबार से संबंधित क्रियाकलापों और विशेष रूप से होटल का कारबार चला रहा था । उसका नाम दुकानों और स्थापनों की अनुज्ञप्ति में भी प्रकट हुआ । इसलिए उसके द्वारा वीज़ा नियमों का अतिक्रमण किया गया और इसलिए उसके विरुद्ध भारत को छोड़ने का नोटिस जारी किया गया । अत: पासपोर्ट उसको भारत में प्रवेश और भारत में निवास के लिए, जब तक कि वह पासपोर्ट उसके उद्गम के देश में विधिमान्य है, अर्हता प्रदान करता है । उसको वीज़ा अभिप्राप्त करने की अपेक्षा की जानकारी भलीभांति थी । उसने वीज़ा के लिए आवेदन किया और विनिर्दिष्ट कोटि का वीज़ा अभिप्राप्त किया । इन परिस्थितियों में जब उसका आवेदन बारंबार अस्वीकृत किया गया है और दिशा-निर्देशों, नियमों और विनियमों के निबंधनों के अनुसार किसी भी प्रकार के परिवर्तन की अनुज्ञा प्रदान नहीं की गई, तो याची आवेदन प्रस्तुत करने के बहाने भारत में अपने अवैध प्रवास को अनंतकाल तक जारी नहीं रखता । इसलिए यह याचिका खारिज की जाती है ।

(अधोरेखांकन पर बल दिया गया)"

38. अब **मोहम्मद जावेद** बनाम **भारत संघ**[1] वाले मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय के खंड न्यायपीठ द्वारा दिया गया विनिश्चय हमारे विचारार्थ शेष रह जाता है । यह निर्णय, जिसे न्यायमूर्ति अनुज और न्यायमूर्ति भमभानी द्वारा लिखा गया, में इस विषय पर विधि की विस्तृत चर्चा समाविष्ट है । इस निर्णय को अत्यंत विलक्षण

[1] (2019) एस. सी. सी. ऑनलाइन दिल्ली 8741 = ए. आई. आर. 2019 दिल्ली 170.

परिस्थितियों में पारित किया गया था । मोहम्मद जावेद नामक एक भारतीय नागरिक का विवाह नौशीन नाज नामक पाकिस्तानी नागरिक से इस्लामिक शरिया प्रसंविदाओं के अनुसार वर्ष 2005 में संपन्न हुआ था । विवाह के साक्ष्य के रूप में एक निकाहनामा जारी किया गया था । विवाह के पश्चात् वैवाहिक जोड़ा भारत में बस गया, जहां मोहम्मद जावेद रहता था । इस विवाह से उनके दो पुत्र उत्पन्न हुए जिनकी आयु उपरोक्त मामले के विनिश्चय के समय 11 वर्ष और 6 वर्ष थी । क्योंकि दोनों बच्चे भारत में ही जन्में थे, इसलिए वे भारतीय नागरिक थे । नौशीन एल.टी.वी. अर्थात् लंबी अवधि के वीज़ा पर थी । इस विनिश्चय में इस बिंदु पर भी चर्चा हुई है कि नौशीन भारत में भी रहती थी और भारत के बाहर भी जाती थी, किंतु ऐसा प्रतीत होता है कि उसको तारीख 7 फरवरी, 2019 को बिना किसी कारण 15 दिनों के भीतर भारत छोड़ने के लिए निर्देशित किया गया, यद्यपि, वह विधिसम्मत रूप से लंबी विधिमान्य अवधि के वीज़ा पर भारत की निवासी थी । जबकि विधि पर संपूर्ण चर्चा अनुदेशात्मक है, फिर भी हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि खंड न्यायपीठ को दो सीलबंद आवरणों में कतिपय गोपनीय सूचनाएं दी गई थीं (जैसाकि पैरा 16 में उल्लेख किया गया है) । खंड न्यायपीठ ने इन गोपनीय सूचनाओं पर अत्यधिक सावधानी के साथ और गोपनीयता बनाए रखते हुए विचार किया, किंतु इस निष्कर्ष पर पहुंची कि इन गोपनीय सूचनाओं के आधार पर ऐसा कोई कारण उद्भूत नहीं होता जिसके अंतर्गत नौशीन को उसके लंबी अवधि के वीज़ा के निबंधनों के विपरीत भारत से अचानक बिना किन्हीं कारणों के निष्कासित कर दिया गया । यह सत्य नहीं है कि सदागुरुसकी के मामले में भी ऐसा ही हुआ ।

39. कतिपय कारणोंवश, जिनको हम समझ पाने में असमर्थ हैं, ऐसा प्रतीत होता है कि सदागुरुसकी को इस तथ्य की जानकारी थी कि जब उसके ऊपर आक्षेपित सूचना तामील की गई, तो वह विधित: भारत में उपस्थित नहीं था । उसने आप्रवासन सीमाओं का अतिक्रमण नहीं किया था । जैसाकि हमने उल्लेख किया है, यद्यपि उसके पास कोई वीज़ा था, फिर भी इसी बात से उसको भारत में प्रवेश करने का

अनिर्बंधित अधिकार प्राप्त नहीं हो जाता । विमानपत्तन पर तैनात सिविल प्राधिकारियों को सदैव ही यह अधिकार था कि वे उसको प्रवेश प्रदान करने से इनकार कर सकते । जैसाकि हमने अभिलेख के आधार पर ही निष्कर्ष निकाला है, सदागुरुसकी को प्रवेश प्रदान करने से आक्षेपित इनकारी, जिसका उल्लेख सदागुरुसकी ने अपनी याचिका में बड़ी ही सावधानी के साथ नहीं किया है, के आधार पर एक अत्यंत भिन्न वृत्तांत उपस्थित होता है, जिसको सदागुरुसकी प्रस्तुत करना चाहता था, वह मासूम आहत नहीं है, और हम उसमें एक ऐसे व्यक्ति को देखते हैं, जो भारत में बारंबार प्रविष्ट हुआ, किंतु फिर भी उसने अपनी याचिका में अपने पूर्ववर्ती भ्रमणों के संपूर्ण विवरणों को दर्शित नहीं किया ; उसने अनेकों बार अपनी वीज़ा के निबंधनों का अतिक्रमण किया और याचिका में इन बातों का प्रकटीकरण भी नहीं किया ; और उसके अतिक्रमणों में न केवल अधिकतम अनुज्ञेय अवधि से अधिक अवधि तक देश में रुके रहना सम्मिलित था, बल्कि ऐसे क्रियाकलापों में अंतवर्लित होना भी सम्मिलित था, जो स्पष्टत: मना थे । हम इस बात का मूल्यांकन कर पाने में असमर्थ हैं कि यह याची इन परिस्थितियों में और इन तथ्यों के आधार पर किसी भी अधिकार का अवलंब ले सकता है, चाहे वे मूल अधिकार ही क्यों न हो । अत:, यह मामला मूल अधिकार के अतिक्रमण का मामला नहीं है । यह मामला किसी सीमा के व्यापक या व्यापक विधिक सिद्धांत का मामला नहीं है । संपूर्ण मामला सदागुरुसकी के आचरण और उसकी स्वयं की चूकों पर आधारित है ।

40. यह याचिका पूर्णरुपेण गुणागुण से रहित है । इसको खारिज किया जाता है । जारी की गई सूचनाओं का शोधन किया जाता है । लागत के बाबत कोई आदेश पारित नहीं किया जाता ।

याचिका खारिज की गई ।

शु.

भारत पेट्रोलियम कारपोरेशन लिमिटेड और एक अन्य

बनाम

आलोक प्रकाश सिंघाई और एक अन्य

(2019 की सिविल पुनरीक्षण आवेदन संख्या 88)

तारीख 12 जुलाई, 2019

न्यायमूर्ति सुबोध अभ्यंकर

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – आदेश 22, नियम 2 और 3 – वाद का उपशमन – जहां एक या एक से अधिक वादी हैं और उनमें से किसी की मृत्यु हो जाती है और जहां वाद फाइल करने का अधिकार उत्तरजीवी वादी या वादियों को प्रतिवादी या प्रतिवादियों के विरुद्ध बचा रहता है, वहां न्यायालय अभिलेख में उस भाग की एक प्रविष्टि कराएगा और वाद उत्तरजीवी वादी या वादियों द्वारा प्रतिवादी या प्रतिवादियों के विरुद्ध आगे चलेगा ।

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 – आदेश 22, नियम 2 और 3 – वाद का उपशमन – संयुक्त संपत्ति से निष्कासन हेतु वादियों द्वारा संयुक्त रूप से वाद फाइल किया जाना – एक वादी की मृत्यु के पश्चात् उसके विधिक उत्तरजीवियों को वाद में पक्ष न बनाया जाना – निष्कासन वाद किसी भी संपत्ति स्वामी द्वारा फाइल किया जा सकता है, अत: वाद को सुने जाने का अधिकार एक वादी की मृत्यु के कारण समाप्त नहीं होता और उसके स्थान पर उसके उत्तरजीवियों को पक्ष न बनाए जाने के कारण वाद का उपशमन नहीं होगा ।

संक्षेप में मामले के तथ्य यह हैं कि प्रत्यर्थियों/वादियों/मकान मालिकों ने आवेदकों-भारत पेट्रोलियम कारपोरेशन के विरुद्ध निष्कासन के लिए वाद सद्भावी आवश्यकता के आधार फाइल किया और यह अभिकथित किया कि वे प्रश्नगत संपत्ति पर निर्माण कराना चाहते हैं और कारबार आरंभ करना चाहते हैं और साथ ही अपने रिहाइश के

प्रयोजन को भी पूरा करना चाहते हैं और उनके पास इस कार्य के लिए पर्याप्त निधियां उपलब्ध हैं और उन्होंने इस आधार का भी आश्रय लिया कि जबलपुर नगर में उनके स्वामित्व के अधीन कोई अन्य उपयुक्त स्थान नहीं है । पूर्वोक्त निष्कासन वाद को विचारण न्यायालय द्वारा तारीख 21 दिसंबर, 2017 को खारिज कर दिया गया । प्रत्यर्थियों/वादियों/मकान मालिकों द्वारा इस निर्णय के विरुद्ध 2018 की नियमित सिविल अपील संख्या 69 फाइल की गई और इस अपील में दो आवेदन भी सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 22, नियम 3 सपठित धारा 151 के अधीन और परिसीमा अधिनियम की धारा 5 सपठित सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 22, नियम 9 के अधीन इस आधार पर फाइल किए गए कि वादी संख्या 2 श्रीमती विमला सिंघाई की वाद के विचारण के अनुक्रम के दौरान तारीख 18 फरवरी, 2017 को मृत्यु हो गई है, यद्यपि श्रीमती विमला सिंघाई का नाम विचारण न्यायालय के अभिलेखों में काटा नहीं जा सका और प्रत्यर्थियों द्वारा फाइल की गई अपील में उनके नाम का उल्लेख वादी संख्या 2 के रूप में किया गया है । अतः, पूर्वोक्त आवेदन वादी संख्या दो का नाम काटे जाने के प्रयोजनार्थ इस आधार पर फाइल किए गए कि अनवधानतावश वादी संख्या 2 श्रीमती विमला सिंघाई का नाम विचारण न्यायालय के अभिलेख में काटा नहीं जा सका था, इसलिए इस आवेदन को फाइल किए जाने में कारित विलंब क्षमा किए जाने के प्रयोजनार्थ एक अन्य आवेदन भी फाइल किया गया है । निचले अपीली न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश ने आवेदन मंजूर कर लिया और वादी संख्या 2 का नाम काटे जाने के लिए निर्देशित कर दिया । प्रत्यर्थियों/वादियों द्वारा तारीख 22 नवंबर, 2018 को पूर्वोक्त संशोधन कार्यान्वित भी किया जा चुका है । पूर्वोक्त आदेश को आवेदकों-भारत पेट्रोलियम कारपोरेशन लिमिटेड द्वारा अन्य बातों के साथ-साथ इस आधार पर चुनौती दी गई कि आक्षेपित आदेश मान्य नहीं ठहराया जा सकता चूंकि यह आदेश ऐसे आवेदन पर पारित किया गया, जो पोषणीय नहीं था । यह पुनरीक्षण आवेदन आवेदकों/प्रतिवादियों-भारत पेट्रोलियन कारपोरेशन द्वारा 2018 के पुनरीक्षण सिविल आवेदन संख्या 69 में जबलपुर (मध्य प्रदेश) के द्वितीय अपर जिला न्यायाधीश द्वारा

तारीख 22 नवंबर, 2018 को पारित आदेश के विरुद्ध सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 115 के अधीन फाइल किया गया है, जिसके द्वारा प्रत्यर्थियों/वादियों/मकान मालिकों द्वारा प्रतिवादी संख्या 2 का नाम निकाले जाने के लिए सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 22, नियम 3 के अधीन फाइल किए गए एक आवेदन को मंजूर कर लिया गया और परिसीमा अधिनियम की धारा 5 सपठित सिविल प्रक्रिया संहिता का आदेश 22, नियम 9 के अधीन फाइल किए गए आवेदन को भी मंजूर कर लिया गया । पुनरीक्षण आवेदन खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – इस न्यायालय की सुविचारित राय में निचले अपीली न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश द्वारा आक्षेपित आदेश पारित करते हुए कोई अवैधता या अधिकारिता संबंधी त्रुटि नहीं कारित की गई है । विद्वान् न्यायाधीश ने न्यायत: अभिनिर्धारित किया कि आवेदन के नामकरण से परिणाम पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता और आवेदन की अंतर्वस्तु तात्विक होती है जो उसके शीर्षक के बजाय अधिक महत्वपूर्ण होती है । यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि निचले अपीली न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश द्वारा यह अभिनिर्धारित करते समय समनुदेशित कारण को भी शुद्ध किए जाने की आवश्यकता है कि अपील प्रतिवादी संख्या 2 की मृत्यु के पश्चात् भी विचारण योग्य बनी रहेगी, और प्रतिवादी संख्या 2 का नाम पक्षों की सूची से काटा जा सकता है । तथापि, विचारण न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश द्वारा विल का अवलंब लिए जाने को न्यायसंगत नहीं ठहराया जा सकता चूंकि पूर्वोक्त विल के अस्तित्व में होने के आधार पर ही उसको पक्षों के अधिकारों के परिसाक्ष्य के रूप में अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता जब तक कि 1925 के उत्तराधिकार अधिनियम के उपबंधों के अधीन समुचित कार्यवाहियों के अंतर्गत उसको साबित न कर दिया जाए । तथापि, क्योंकि वादियों ने सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 22, नियम 3 और 9 के अधीन फाइल किए गए अपने आवेदनों में यह अभिवाक् किया है कि यद्यपि कोई भी वादी संपत्ति का सह-स्वामी होने के नाते निष्कासन वाद फाइल कर सकता था, किंतु उन्होंने यह वाद संयुक्त रूप से फाइल

किया, जिससे भी वाद की प्रकृति के बारे में संकेत प्राप्त होता है, अत:, जब वाद फाइल करने का अधिकार बना हुआ है, तो इस आधार पर संपूर्ण वाद/अपील के उपशमन का प्रश्न उद्भूत नहीं होता कि वादी संख्या 2 के विधिक उत्तराधिकारियों को वाद में संयोजित नहीं किया गया था । कुछ भी हो, क्योंकि यह न्यायालय आवेदकों के काउंसेल की दलील को स्वीकार करने के लिए आनत नहीं है और आक्षेपित आदेश में कोई अवैधता या अधिकारिता संबंधी त्रुटि नहीं पाता, इसलिए पुनीक्षण आवेदन खारिज किए जाने योग्य है और एतद्द्वारा खारिज किया जाता है । यह न्यायालय मामले की सुनवाई समाप्त करते हुए उस तरीके के बाबत अपनी अप्रसन्नता व्यक्त करता है जिसमें आवेदकों - भारत पेट्रोलियम कारपोरेशन लिमिटेड, जो एक भारी भरकम लोक उपक्रम है, द्वारा वर्तमान निष्कासन वाद में अपनी प्रतिरक्षा की गई । सार्वजनिक क्षेत्र के संगठन से यह अपेक्षा नहीं की जा सकती कि वह न्यायालय के आदेशों का विरोध तकनीकी आधारों पर करें, जैसाकि उन्होंने वर्तमान मामले में किया । (पैरा 7, 8 और 9)

अवलंबित निर्णय

पैरा

[2001] (2001) 5 एस. सी. सी. 570 = ए. आई. आर. 2001 एस. सी. 2003 : **अम्बाबाई और अन्य** बनाम **गोपाल और अन्य** । 3, 6

पुनरीक्षण सिविल अधिकारिता : 2019 की सिविल पुनरीक्षण आवेदन संख्या 88.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 115 के अधीन पुनरीक्षण आवेदन ।

पुनरीक्षणकर्ता की ओर से श्री कपिल जैन

विपक्षी की ओर से श्री सचिन जैन

आदेश

यह पुनरीक्षण आवेदन आवेदकों/प्रतिवादियों-भारत पेट्रोलियम कारपोरेशन

द्वारा 2018 के पुनरीक्षण सिविल आवेदन संख्या 69 में जबलपुर (मध्य प्रदेश) के द्वितीय अपर जिला न्यायाधीश द्वारा तारीख 22 नवंबर, 2018 को पारित आदेश के विरुद्ध सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 115 के अधीन फाइल किया गया है, जिसके द्वारा प्रत्यर्थियों/वादियों/मकान मालिकों द्वारा प्रतिवादी संख्या 2 का नाम निकाले जाने के लिए सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 22, नियम 3 के अधीन फाइल किए गए एक आवेदन को मंजूर कर लिया गया और परिसीमा अधिनियम की धारा 5 सपठित सिविल प्रक्रिया संहिता का आदेश 22, नियम 9 के अधीन फाइल किए गए आवेदन को भी मंजूर कर लिया गया ।

2. संक्षेप में मामले के तथ्य यह है कि प्रत्यर्थियों/वादियों/मकान मालिकों ने आवेदकों-भारत पेट्रोलियम कारपोरेशन के विरुद्ध निष्कासन के लिए वाद सद्भावी आवश्यकता के आधार पर फाइल किया और यह अभिकथित किया कि वे प्रश्नगत संपत्ति पर निर्माण कराना चाहते हैं और उसमें कारबार आरंभ करना चाहते हैं और साथ ही अपने रिहायशी प्रयोजन को भी पूरा करना चाहते हैं और उनके पास इस कार्य के लिए पर्याप्त निधियां उपलब्ध हैं और उन्होंने इस आधार का भी आश्रय लिया कि जबलपुर नगर में उनके स्वामित्व के अधीन कोई अन्य उपयुक्त स्थान नहीं है । पूर्वोक्त निष्कासन वाद को विचारण न्यायालय द्वारा तारीख 21 दिसंबर, 2017 को खारिज कर दिया गया । प्रत्यर्थियों/वादियों/मकान मालिकों द्वारा इस निर्णय के विरुद्ध 2018 की नियमित सिविल अपील संख्या 69 फाइल की गई और इस अपील में दो आवेदन भी सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 22, नियम 3 सपठित धारा 151 के अधीन और परिसीमा अधिनियम की धारा 5 सपठित सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 22, नियम 9 के अधीन इस आधार पर फाइल किए गए कि वादी संख्या 2 श्रीमती विमला सिंघाई की वाद के विचारण के अनुक्रम के दौरान तारीख 18 फरवरी, 2017 को मृत्यु हो गई है, यद्यपि श्रीमती विमला सिंघाई का नाम विचारण न्यायालय के अभिलेखों में काटा नहीं जा सका और प्रत्यर्थियों द्वारा फाइल की गई अपील में उनके नाम का उल्लेख वादी संख्या 2 के रूप में ही किया गया है । अतः, पूर्वोक्त आवेदन वादी संख्या 2 का नाम काटे जाने के प्रयोजनार्थ

इस आधार पर फाइल किए गए कि अनवधानतावश वादी संख्या 2 श्रीमती विमला सिंघाई का नाम विचारण न्यायालय के अभिलेख में काटा नहीं जा सका था, इसलिए इस आवेदन को फाइल किए जाने में कारित विलंब क्षमा किए जाने के प्रयोजनार्थ एक अन्य आवेदन भी फाइल किया गया है । निचले अपीली न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश ने आवेदन को मंजूर कर लिया और वादी संख्या 2 का नाम काटे जाने के लिए निर्देशित कर दिया । प्रत्यर्थियों/वादियों द्वारा तारीख 22 नवंबर, 2018 को पूर्वोक्त संशोधन कार्यान्वित भी किया जा चुका है । पूर्वोक्त आदेश को आवेदकों- भारत पेट्रोलियम कारपोरेशन लिमिटेड द्वारा अन्य बातों के साथ-साथ इस आधार पर चुनौती दी गई कि आक्षेपित आदेश को मान्य नहीं ठहराया जा सकता चूंकि यह आदेश एक ऐसे आवेदन पर पारित किया गया है जो पोषणीय नहीं था ।

3. आवेदकों के विद्वान् काउंसेल ने इस न्यायालय के समक्ष दृढ़तापूर्वक दलील दी कि मूल वादी संख्या 2 श्रीमती विमला सिंघाई की मृत्यु तारीख 18 फरवरी, 2017 को हो गई थी, जब सिविल वाद विचारण न्यायालय के समक्ष लंबित था किंतु वादियों/प्रत्यर्थियों द्वारा उनके नाम को काटे जाने के लिए कोई भी आवेदन जानबूझकर फाइल नहीं किया गया, यद्यपि उनको कार्यवाही के लंबित होने के बाबत जानकारी थी । विद्वान् काउंसेल ने आगे निवेदन किया कि वादियों/ प्रत्यर्थियों ने पूर्वोक्त आवेदन फाइल किए जाने की बाबत कोई भी तर्कपूर्ण कारण समनुदेशित नहीं किया और इसलिए उक्त आवेदन को फाइल किए जाने में कारित विलंब क्षमा नहीं किया जा सकता । उन्होंने निवेदन किया कि अन्यथा रूप से भी सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 22, नियम 3 के अधीन फाइल किया गया आवेदन पोषणीय नहीं था, चूंकि उक्त आवेदन में यह प्रार्थना की गई थी कि श्रीमती विमला सिंघाई का नाम वादियों की सूची से काट दिया जाए । उन्होंने आगे निवेदन किया कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 22, नियम 3 के अधीन आवेदन केवल तभी फाइल किया जा सकता था, जब मृतक-वादी संख्या 2 के विधिक उत्तराधिकारियों के नाम प्रतिस्थापित किए जाने होते और इसलिए सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 22, नियम 3 के अधीन वादी

संख्या 2 का नाम काटे जाने की अनुज्ञा प्रदान नहीं की जा सकती चूंकि इस अनुतोष के प्रयोजनार्थ सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 22, नियम 2 के अधीन समुचित आवेदन फाइल किया जाना होता है । विद्वान् काउंसेल ने आगे निवेदन किया कि निचले अपीली न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश ने यह अभिनिर्धारित करने के बावजूद कि मृतक श्रीमती विमला सिंघाई के अन्य विधिक उत्तराधिकारी भी जीवित हैं, उनका नाम काटे जाने के अनुज्ञा प्रदान कर दी । उन्होंने आगे निवेदन किया कि श्रीमती विमला सिंघाई की विल के अनुसार, उनकी तीन अन्य पुत्रियां और एक पुत्र भी है किंतु वादी उनको मृतका श्रीमती विमला सिंघाई के विधिक उत्तराधिकारियों के रूप में वाद का पक्ष नहीं बनाना चाहते और इसलिए उन्होंने आगे निवेदन किया कि विद्वान् न्यायाधीश ने तारीख 27 दिसंबर, 2015 की विल का त्रुटिपूर्वक अवलंब लिया, जिसमें मृतक श्रीमती विमला सिंघाई ने अपनी संपत्ति वर्तमान वादियों के पक्ष में वसीयत कर दी थी । विद्वान् काउंसेल ने आगे निवेदन किया कि निचले अपीली न्यायालय द्वारा किसी विल के अस्तित्व में होने के आधार पर ही उस पर विचार नहीं किया जा सकता था जब तक कि वह विल विधि अनुसार साबित नहीं हो जाती । विद्वान् काउंसेल ने **अम्बाबाई और अन्य** बनाम **गोपाल और अन्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय का अवलंब लिया । अत:, उन्होंने आगे निवेदन किया कि आक्षेपित आदेश को अपास्त किया जाए और साथ ही अपील को भी उपशमित होने के आधार पर खारिज किया जाए ।

4. इसके विपरीत कैवियटकर्ता/प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल ने पुनरीक्षण का विरोध किया और निवेदन किया कि यह सत्य है कि जो आवेदन फाइल किया गया था, वह विधि के गलत उपबंध को उद्धृत करते हुए फाइल किया गया था चूंकि आवेदन सिविल प्रक्रिया संहिता में आदेश 22, नियम 3 के बजाय आदेश 22, नियम 2 के अधीन फाइल किया जाना चाहिए था, फिर भी निचले अपीली न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश ने न्यायत: अभिनिर्धारित किया कि आवेदन का नामकरण

---

[1] (2001) 5 एस. सी. सी. 570 = ए. आई. आर. 2001 एस. सी. 2003.

अतात्विक है । विद्वान् काउंसेल ने आगे निवेदन किया कि मूल वाद निष्कासन के लिए फाइल किया गया वाद है जिसमें प्रतिवादी के विरुद्ध तीन वादियों को संयोजित किया गया था और यदि विचारण के अनुक्रम के दौरान वादी संख्या 2 श्रीमती विमला सिंघाई की मृत्यु हो गई थी, तो इसका परिणाम वाद का उपशमन नहीं होगा । उन्होंने आगे निवेदन किया कि उनका नाम मात्र अनवधानतावश काटा नहीं जा सका चूंकि वर्तमान वादियों को इस बाबत कोई कारण उपस्थित नहीं हुआ था कि वे वादी संख्या 2 श्रीमती विमला सिंघाई का नाम न काटते । उन्होंने आगे निवेदन किया कि अन्य जीवित वादियों के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वे श्रीमती विमला सिंघाई के विधिक उत्तराधिकारियों के नाम संयोजित कराएं चूंकि श्रीमती विमला सिंघाई ने अपने दोनों ही पुत्रों के पक्ष में विधिक उत्तराधिकारी होने के नाते तारीख 27 दिसंबर, 2015 की विल के माध्यम से अपनी समस्त संपत्ति की वसीयत कर दी थी । विद्वान् काउंसेल ने आगे निवेदन किया कि यह स्थिरीकृत विधि है कि संपत्ति के किसी भी मकान मालिक द्वारा निष्कासन वाद फाइल किया जा सकता है । अत:, यद्यपि वादी संख्या 2 के अन्य विधिक प्रतिनिधियों या विधिक उत्तराधिकारियों के नामों को वादपत्र में संख्यांकित नहीं किया गया था, फिर भी प्रतिवादियों के हितों पर इस कारणवश कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ा । अत: उन्होंने आगे निवेदन किया कि पुनरीक्षण गुणागुण से रहित होने के कारण खारिज किए जाने योग्य है । पक्षों के विद्वान् काउंसेलों को सुना और अभिलेख का परिशीलन किया ।

6. अभिलेख के आधार पर यह स्पष्ट है कि मृतक वादी संख्या 2 श्रीमती विमला सिंघाई की मृत्यु तारीख 18 फरवरी, 2017 को हो गई थी जबकि सिविल वाद में अंतिम निर्णय तारीख 21 दिसंबर, 2017 को पारित किया गया और वादी संख्या 2 का नाम काटे जाने के लिए आवेदन तारीख 19 फरवरी, 2018 को निचले अपीली न्यायालय के समक्ष फाइल किया गया था । विचारण न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश द्वारा इस आवेदन को फाइल किए जाने में कारित विलंब को

क्षमा करते हुए मंजूर कर लिया गया था और साथ ही यह भी अभिनिर्धारित किया कि यह वाद निष्कासन वाद है जो तब भी चल सकता है यदि दोनों वादियों में से एक वादी अर्थात् वादी संख्या 2 की मृत्यु हो गई हो । विचारण न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश ने **अंबाबाई** (उपरोक्त) वाले मामले, जिसका अवलंब वादियों द्वारा लिया गया है, को भी इस आधार पर विभेदित किया कि पूर्वोक्त वाद संविदा के विनिर्दिष्ट पालन के लिए फाइल किया गया था जबकि वर्तमान मामले में वाद वादियों द्वारा निष्कासन के लिए फाइल किया गया ।

7. इस न्यायालय की सुविचारित राय में निचले अपीली न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश द्वारा आक्षेपित आदेश पारित करते हुए कोई अवैधता या अधिकारिता संबंधी त्रुटि नहीं कारित की गई है । विद्वान् न्यायाधीश ने न्यायत: अभिनिर्धारित किया कि आवेदन के नामकरण से परिणाम पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता और आवेदन की अंतर्वस्तु तात्विक होती है जो उसके शीर्षक के बजाय अधिक महत्वपूर्ण होती है । यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि निचले अपीली न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश द्वारा यह अभिनिर्धारित करते समय समनुदेशित कारण को भी शुद्ध किए जाने की आवश्यकता है कि अपील प्रतिवादी संख्या 2 की मृत्यु के पश्चात् भी विचारण योग्य बनी रहेगी, और प्रतिवादी संख्या 2 का नाम पक्षों की सूची से काटा जा सकता है । तथापि, विचारण न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश द्वारा विल का अवलंब लिए जाने को न्यायसंगत नहीं ठहराया जा सकता चूंकि पूर्वोक्त विल के अस्तित्व में होने के आधार पर ही उसको पक्षों के अधिकारों के परिसाक्ष्य के रूप में अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता जब तक कि 1925 के उत्तराधिकार अधिनियम के उपबंधों के अधीन समुचित कार्यवाहियों के अंतर्गत उसको साबित न कर दिया जाए । तथापि, क्योंकि वादियों ने सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 22, नियम 3 और 9 के अधीन फाइल किए गए अपने आवेदनों में यह अभिवाक् किया है कि यद्यपि कोई भी वादी संपत्ति का सह-स्वामी होने के नाते निष्कासन वाद फाइल कर सकता था, किंतु उन्होंने यह वाद संयुक्त रूप से फाइल

किया, जिससे भी वाद की प्रकृति के बारे में संकेत प्राप्त होता है, अतः, जब वाद फाइल करने का अधिकार बना हुआ है, तो इस आधार पर संपूर्ण वाद/अपील के उपशमन का प्रश्न उद्भूत नहीं होता कि वादी संख्या 2 के विधिक उत्तराधिकारियों को वाद में संयोजित नहीं किया गया था ।

8. कुछ भी हो, क्योंकि यह न्यायालय आवेदकों के काउंसेल की दलील को स्वीकार करने के लिए आनत नहीं है और आक्षेपित आदेश में कोई अवैधता या अधिकारिता संबंधी त्रुटि नहीं पाता, इसलिए पुनरीक्षण आवेदन खारिज किए जाने योग्य है और एतद्द्वारा खारिज किया जाता है ।

9. यह न्यायालय मामले की सुनवाई समाप्त करते हुए उस तरीके के बाबत अपनी अप्रसन्नता व्यक्त करता है जिसमें आवेदकों-भारत पेट्रोलियम कारपोरेशन लिमिटेड, जो एक भारी भरकम लोक उपक्रम है, द्वारा वर्तमान निष्कासन वाद में अपनी प्रतिरक्षा की गई । सार्वजनिक क्षेत्र के संगठन से यह अपेक्षा नहीं की जा सकती कि वह न्यायालय के आदेशों का विरोध तकनीकी आधारों पर करें, जैसाकि उन्होंने वर्तमान मामले में किया ।

10. इन परिस्थितियों में, आवेदकों पर इस प्रकार का तुच्छ आवेदन फाइल किए जाने और न्यायालय का मूल्यवान समय व्यर्थ करने के लिए 50,000/- रुपए की लागत भी अधिरोपित की जाती है । यह लागत इस आदेश की प्रमाणित प्रति की प्राप्ति की तारीख से 15 दिनों के भीतर सेना कैंद्रीय कल्याण निधि के बचत खाते में जमा की जाएगी जिसका कारपोरेशन बैंक चांदनी चौक शाखा, दिल्ली का पुराना बचत खाता संख्या 020500101007721 और नया बचत खाता संख्या 520101236373338 है ताकि इस रकम का प्रयोग राष्ट्र हित में किया जा सके । पूर्वोक्त लागत को जमा किए जाने से संबंधित रसीद इस न्यायालय की रजिस्ट्री में जमा की जाए ।

पुनरीक्षण आवेदन खारिज किया गया ।

शु.

राजा राम

बनाम

लक्ष्मण

(2002 की द्वितीय अपील संख्या 113)

तारीख 18 जुलाई, 2019

न्यायमूर्ति जी. एस. अहलूवालिया

भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 (1925 का 39) – धारा 63(ग) [सपठित साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 68 और 106] – विल के अंतर्गत संपत्ति के कब्जे के लिए वाद – विल की निष्पादन साबित करने का भार – वसीयतकर्ता की मृत्यु विल के निष्पादन के एक माह के भीतर हो गई और उसके अंगूठे की छाप को वादी द्वारा विवादित किया गया – प्रतिवादियों ने भी अभिकथित किया कि वसीयतकर्ता का स्वास्थ्य ठीक नहीं था – जहां वसीयतकर्ता के हस्ताक्षर या उसके अंगूठे की छाप को साबित नहीं किया जाता तो विल को कड़ाईपूर्वक धारा 63(ग) के उपबंधों के अनुसार साबित किया जाना चाहिए ।

भारतीय उतराधिकार अधिनियम, 1925 – धारा 63(ग) [सपठित साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 106] – विल निष्पादन के मामले में साबित करने का भार – विल को न्यायालय के समक्ष प्रतिवादियों द्वारा प्रस्तुत किया जाना – चूंकि प्रतिवादी वसीयत को साबित कर पाने में विफल रहे, अत: विचारण न्यायालय ने साबित करने का भार वादी पर अंतरित करके तात्विक अवैधता कारित की और त्रुटिपूर्वक अभिनिर्धारित किया कि विल को सम्यक् रूप से साबित किया गया ।

भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 – धारा 63(ग) [सपठित साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 68] – विल के निष्पादन का सबूत – विल के लेखक द्वारा यह अभिकथित नहीं किया गया कि विल का

निष्पादन वसीयतकर्ता द्वारा दिए गए श्रुतलेख के आधार पर किया गया था और वसीयतकर्ता द्वारा उस पर अंगूठे की छाप अंकित किए जाने के पूर्व उसको पढ़कर सुनाया गया था – विल में नामित हिताधिकारी किसी भी अधिप्रमाणन साक्षी का परीक्षण कराने में विफल रहे – विल के लेखक के साक्ष्य की तुलना विल के अधिप्रमाणन साक्षियों के साक्ष्य से नहीं की जा सकती – इसलिए यह अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता कि विल को सम्यक् रूप से साबित किया गया ।

संक्षेप में मामले के तथ्य ये हैं कि मूलवादी राजा राम (जिसकी वर्तमान अपील के लंबन के दौरान मृत्यु हो गई थी और वर्तमान अपीलार्थी उसके विधिक प्रतिनिधि हैं) ने स्वत्व की घोषणा और स्थायी व्यादेश के लिए वाद फाइल किया । वादी और प्रतिवादी संख्या 2 प्रभूलाल के पुत्र हैं । प्रभूलाल के एक अन्य पुत्र नारायण सिंह की मृत्यु हो चुकी है । प्रभुलाल के चौथे पुत्र हुकूम सिंह को पहले ही अंगीकरण में दे दिया गया था और उसके पांचवे पुत्र रामचरण ने संसार का परित्याग कर दिया था । प्रतिवादी संख्या 1 प्रतिवादी संख्या 2 का अवयस्क पुत्र है । वादी द्वारा फाइल किए गए वादपत्र में यह अभिवचन किया गया कि नारायण सिंह की मृत्यु हो चुकी है और वह संतान विहीन थी और सर्वे संख्या 314 और 651/1 धारण करने वाली कृषि भूमि का स्वामी था जिसका क्षेत्रफल 0.113 हेक्टेयर और 0.481 हेक्टेयर है और यह भूमि जिला विदिशा के तहसील गयारसपुर के ग्राम अत्रीखेजड़ा में स्थित है । क्योंकि नारायण सिंह अविवाहित था और उसकी मृत्यु संतानविहीनता में हुई, इसलिए वादी और प्रतिवादी संख्या 2 का उसकी संपत्ति में बराबर-बराबर अंश है । उक्त वादपत्र में यह अभिवाक् भी किया गया कि नारायण सिंह का स्वास्थ्य ठीक नहीं था और इसलिए उसके खराब स्वास्थ्य का लाभ लेते हुए तारीख 7 फरवरी, 1995 को प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा एक कूटरचित विल तैयार की गई जो वास्तव में पूर्व दिनांकित थी और जिसके द्वारा नारायण सिंह द्वारा प्रतिवादी संख्या 1 के पक्ष में संपत्ति की वसीयत कर दी गई थी और यह दावा किया गया कि चूंकि तारीख 7 फरवरी, 1995 की विल एक कूटरचित और गढ़ा गया दस्तावेज है, इसलिए प्रतिवादी संख्या 1 को इस विल को दृष्टि में रखते हुए कोई

स्वत्व प्राप्त नहीं होता । इस वादपत्र में आगे यह अभिवाक् किया गया कि नारायण सिंह की देखभाल वादी और प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा संयुक्त रूप से की जाती थी । बाद में वादपत्र को संशोधित किया गया और यह अभिवाक् किया गया कि प्रतिवादी संख्या 1 और 2 ने विदिशा के उपखंड अधिकारी द्वारा पारित तारीख 31 मार्च, 1997 के आदेश के प्रकाश में विवादित संपत्ति का बलपूर्वक कब्जा ले लिया और इसलिए कब्जा और साथ ही पांच सौ रुपए के अंत:कालीन लाभ का अनुतोष भी वादपत्र में सम्मिलित किया गया । प्रतिवादी संख्या 1 और 2 ने अपने लिखित कथन फाइल किए और दावा किया कि नारायण सिंह भूमि जिसका सर्वे संख्या 651/1/1 और क्षेत्रफल 0.481 हेक्टेयर है और सर्वे संख्या 314 और क्षेत्रफल 0.112 हेक्टेयर, का स्वामी था । उन्होंने इस बात को स्वीकार किया कि नारायण सिंह अविवाहित था । उन्होंने आगे यह अभिवाक् किया कि नारायण सिंह ने तारीख 10 नवंबर, 1995 को समाज के सम्मानित सदस्यों की उपस्थिति में प्रतिवादी संख्या 1 के पक्ष में एक विल निष्पादित की थी और तब से प्रतिवादी संख्या 1 विवादित संपत्ति का स्वामी और स्वत्वधारक है । उन्होंने इस बात से इनकार किया कि विल कूटरचित और गढ़ा हुआ दस्तावेज है । उन्होंने विनिर्दिष्ट रूप से अभिवाक् किया कि वास्तव में नारायण सिंह ने उक्त विल निष्पादित की थी । उन्होंने आगे अभिवाक् किया कि नारायण सिंह विगत 25 वर्षों से प्रतिवादी संख्या 2 के साथ निवास कर रहा था और प्रतिवादी संख्या 2 ही उसकी देखभाल करता था । यहां तक कि नारायण सिंह का अंतिम संस्कार प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा किया गया था । उन्होंने इस बात से इनकार किया कि प्रतिवादियों ने बलपूर्वक कब्जा लिया है किंतु उन्होंने यह अभिवाक् किया कि प्रतिवादी आरंभ से ही इस भूमि के कब्जे में है और इसलिए उन्होंने प्रार्थना की कि वाद खारिज किया जाए । विचारण न्यायालय ने विवाद्यक विरचित करने और साक्ष्य अभिलिखित करने के पश्चात् वाद को खारिज कर दिया और अभिनिर्धारित किया कि प्रति. सा. 2 ने विनिर्दिष्ट रूप से स्वीकार किया है कि वह विल का लेखक है और इस साक्षी ने नारायण सिंह और उक्त विल (प्रदर्श डी-2) के अन्य साक्षियों के हस्ताक्षरों को भी स्वीकार किया ।

विचारण न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया कि वादी ने यह दर्शित किए जाने के प्रयोजनार्थ कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है कि नारायण सिंह द्वारा निष्पादित विल (प्रदर्श डी-2) कूटरचित और गढ़ा हुआ दस्तावेज है । तद्नुसार, वाद खारिज कर दिया गया । अपीलार्थी ने विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री से व्यथित होकर 2001 की नियमित सिविल अपील संख्या 27-ए फाइल की जिसको भी विदिशा के चतुर्थ अपर जिला न्यायाधीश द्वारा तारीख 30 अक्तूबर, 2001 के निर्णय और आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया, जिससे व्यथित होकर सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन 2001 की वर्तमान नियमित द्वितीय सिविल अपील संख्या 27-ए फाइल की गई । अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – अतः, मिट्ठू सिंह के साक्ष्य की तुलना अनुप्रमाणन साक्षियों के साक्ष्य से नहीं की जा सकती । पुनः, मिट्ठू सिंह ने यह अभिकथित नहीं किया है कि विल का निष्पादन नारायण सिंह के अनुदेशों के आधार पर किया गया था और नारायण सिंह द्वारा विल पर अंगूठे की छाप लगाए जाने के पूर्व उसको विल को पढ़कर सुनाया गया था । प्रतिवादी ने किसी भी अनुप्रमाणन साक्षी का परीक्षण नहीं कराया । अतः, यह विल के प्रस्तुतकर्ता का दायित्व है कि वह समस्त संदेहास्पद परिस्थितियों का निराकरण करे । निचले न्यायालयों ने इस बात को साबित करने का भार वादी पर त्रुटिपूर्वक अंतरित कर दिया कि विल कूटरचित या मनगढ़ंत नहीं है । यहां पर यह उल्लेख किया जाना निरर्थक नहीं होगा कि विल के वसीयतकर्ता (नारायण सिंह) की मृत्यु विल के निष्पादन के एक माह के भीतर हो गई थी । विल के किसी भी साक्षी ने यह अभिकथित नहीं किया है कि नारायण सिंह विल के निष्पादन के समय चिकित्सीय और मानसिक रूप से पूर्णतया स्वस्थ्य था । इसके विपरीत प्रतिवादियों का पक्षकथन यह है कि नारायण सिंह का स्वास्थ्य ठीक नहीं था । बाबूलाल (प्रति. सा. 1) ने भी यह अभिकथित किया है कि विल पर नारायण सिंह द्वारा उसकी उपस्थिति में हस्ताक्षर किए गए थे । उच्चतम न्यायालय ने गणेशन (मृतक) द्वारा विधिक प्रतिनिधि बनाम कलंजियम वाले मामले में अभिनिर्धारित किया है कि

जहां विल पर वसीयतकर्ता का हस्ताक्षर निर्विवाद हों, तो यह आवश्यक नहीं है कि इस बात को साबित किया जाए कि वसीयतकर्ता को आवश्यक रूप से विल पर केवल अधिप्रमाणन साक्षियों की उपस्थिति में हस्ताक्षर करने चाहिए या दोनों अधिप्रमाणन साक्षी एक ही समय पर एक साथ एक दूसरे की उपस्थिति में और वसीयतकर्ता की उपस्थिति में विल पर हस्ताक्षर करेंगे । तथापि, वर्तमान मामले में नारायण सिंह के अंगूठे की छाप को वादी द्वारा स्वीकार नहीं किया गया है । अत:, जहां विल के वसीयतकर्ता के हस्ताक्षर/अंगूठे की छाप को स्वीकार नहीं किया गया है, तो यह अपेक्षित है कि विल को भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 63(ग) के उपबंधों का कड़ाईपूर्वक पालन करते हुए साबित किया जाए । चूंकि प्रत्यर्थी/प्रतिवादी विल को भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 63(ग) के उपबंधों के अनुसार साबित करने में विफल रहे हैं, इसलिए इस न्यायालय का सुविचारित विचार है कि निचले न्यायालय ने साबित करने का भार वादी पर अंतरित करने के द्वारा तात्विक अवैधता कारित की और त्रुटिपूर्वक अभिनिर्धारित किया कि विल को प्रतिवादियों द्वारा सम्यक् रूप से साबित किया गया । (पैरा 12, 16, 17 और 18)

अवलंबित निर्णय

		पैरा
[2015]	ए. आई. आर. 2015 एम. पी. 72 = (2014) 3 एम. पी. एल. जे. 542 : **नूर बख्श खान** बनाम **सलीम खान और अन्य** ;	11,15
[2010]	(2010) 5 एस. सी. सी. 770 = 2010 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 3131 : **बालाठंडायुथम और एक अन्य** बनाम **एझिलारसन** ।	15

निर्दिष्ट निर्णय

[2019]	2019 (3) रिकार्डेड सिविल रिपोर्टर 843 : **गणेशन (मृतक) द्वारा विधिक प्रतिनिधि** बनाम **कलंजियम** ;	18

[2008] (2008) 14 एस. सी. सी. 754 = ए. आई. आर. 2008 एस. सी. 2485 : **बाबू सिंह और अन्य** बनाम **राम सहाय** उर्फ **राम सिंह** ; 14

[1959] ए. आई. आर. 1959 एस. सी. 443 : **एच. वेंकटचला अय्यंगर** बनाम **बी. एन. थेम्माजम्मा** । 13

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2002 की द्वितीय अपील संख्या 113.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन द्वितीय अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से श्री अभिषेक सिंह भदौरिया

प्रत्यर्थी की ओर से –

निर्णय

अपीलार्थी की ओर से उसके काउंसेल श्री अभिषेक सिंह भदौरिया उपस्थित हैं । प्रत्यर्थियों की ओर से कोई उपस्थित नहीं हुआ । यह द्वितीय अपील सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन 2001 की नियमित सिविल अपील संख्या 27-ए में विदिशा के चतुर्थ अपर जिला न्यायाधीश द्वारा तारीख 30 अक्तूबर, 2001 को पारित निर्णय और डिक्री के विरुद्ध फाइल की गई है जिसके द्वारा 1957 के सिविल वाद संख्या 20-ए में विदिशा के प्रथम सिविल न्यायाधीश, वर्ग-II द्वारा तारीख 19 मार्च, 2001 को पारित निर्णय और डिक्री की पुष्टि की गई थी ।

2. संक्षेप में वर्तमान अपील के निस्तारण के लिए आवश्यक तथ्य ये हैं कि मूलवादी राजा राम (जिसकी इस अपील के लंबन के दौरान मृत्यु हो गई और वर्तमान अपीलार्थी उसके विधिक प्रतिनिधि हैं) ने स्वत्व की घोषणा और स्थाई व्यादेश के लिए वाद फाइल किया था ।

वादी राजा राम और प्रतिवादी संख्या 2 बाबू लाल प्रभूलाल के पुत्र हैं । प्रभूलाल के एक अन्य पुत्र नारायण सिंह की मृत्यु हो चुकी है । प्रभूलाल के चौथे पुत्र हुकूम सिंह को पहले ही अंगीकरण में दे दिया गया था और उसके पांचवें पुत्र रामचरण ने संसार का परित्याग कर दिया । प्रतिवादी संख्या 1 प्रतिवादी संख्या 2 का अवयस्क पुत्र है । राजा राम द्वारा फाइल किए गए वादपत्र में यह अभिवचन किया गया कि नारायण सिंह की मृत्यु हो चुकी है और वह संतान विहीन था और वह सर्वे संख्या 314 और 651/1 धारण करने वाली कृषि भूमि का स्वामी था जिसका क्षेत्रफल 0.113 हेक्टेयर और 0.481 हेक्टेयर है और यह भूमि जिला विदिशा के तहसील ग्यारसपुर के ग्राम अत्रीखेजड़ा में स्थित है । क्योंकि नारायण सिंह अविवाहित था और उसकी मृत्यु संतानविहीनता में हुई, इसलिए वादी और प्रतिवादी संख्या 2 का उसकी संपत्ति में बराबर-बराबर अंश है । उक्त वादपत्र में यह अभिवाक् भी किया गया कि नारायण सिंह का स्वास्थ्य ठीक नहीं था और इसलिए उसके खराब स्वास्थ्य का लाभ लेते हुए तारीख 7 फरवरी, 1995 को प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा एक कूट रचित विल तैयार की गई जो वास्तव में पूर्व दिनांकित थी और जिसके द्वारा नारायण सिंह द्वारा प्रतिवादी संख्या 1 के पक्ष में संपत्ति की वसीयत कर दी गई थी और यह दावा किया गया कि चूंकि तारीख 7 फरवरी, 1995 की विल एक कूटरचित और गढ़ा गया दस्तावेज है, इसलिए प्रतिवादी संख्या 1 को इस विल द्वारा कोई स्वत्व प्राप्त नहीं होता । इस वादपत्र में आगे यह अभिवाक् किया गया कि नारायण सिंह की देखभाल वादी और प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा संयुक्त रूप से की जाती थी । बाद में वादपत्र को संशोधित किया गया और यह अभिवाक् किया गया कि प्रतिवादी संख्या 1 और 2 ने विदिशा के उपखंड अधिकारी द्वारा पारित तारीख 31 मार्च, 1997 के आदेश के प्रकाश में विवादित संपत्ति का बलपूर्वक कब्जा ले लिया है और इसलिए कब्जा और साथ ही पांच सौ रुपए के अंत:कालीन लाभ का अनुतोष भी वादपत्र में सम्मिलित किया गया ।

3. प्रतिवादी संख्या 1 और 2 ने अपने लिखित कथन फाइल किए

और दावा किया कि नारायण सिंह भूमि, जिसका सर्वे संख्या 651/1 और क्षेत्रफल 0.481 हेक्टेयर है और सर्वे संख्या 314 और क्षेत्रफल 0.112 हेक्टेयर, का स्वामी था । उन्होंने इस बात को स्वीकार किया कि नारायण सिंह अविवाहित था । उन्होंने आगे यह अभिवाक् किया कि नारायण सिंह ने तारीख 10 नवंबर, 1995 को समाज के सम्मानित सदस्यों की उपस्थिति में प्रतिवादी संख्या 1 के पक्ष में एक विल निष्पादित की थी और तब से प्रतिवादी संख्या 1 विवादित संपत्ति का स्वामी और स्वत्वधारक है । उन्होंने इस बात से इनकार किया कि विल कूटरचित और गढ़ा हुआ दस्तावेज है । उन्होंने विनिर्दिष्ट रूप से अभिवाक् किया कि वास्तव में नारायण सिंह ने उक्त विल निष्पादित की थी । उन्होंने आगे अभिवाक् किया कि नारायण सिंह विगत 25 वर्षों से प्रतिवादी संख्या 2 के साथ निवास कर रहा था और प्रतिवादी संख्या 2 ही उसकी देखभाल करता था । यहां तक कि नारायण सिंह का अंतिम संस्कार प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा किया गया था । उन्होंने इस बात से इनकार किया कि प्रतिवादियों ने बलपूर्वक कब्जा लिया है किंतु उन्होंने यह अभिवाक् किया कि प्रतिवादी आरंभ से ही इस भूमि के कब्जे में है और इसलिए उन्होंने यह प्रार्थना की कि वाद खारिज किया जाए ।

4. विचारण न्यायालय ने विवाद्यक विरचित करने और साक्ष्य अभिलिखित करने के पश्चात् वाद खारिज कर दिया और अभिनिर्धारित किया कि मिट्ठू सिंह (प्रति. सा. 2) ने विनिर्दिष्ट रूप से स्वीकार किया है कि वह विल का लेखक है और उसने नारायण सिंह और विल (प्रदर्श डी-2) के अन्य साक्षियों के हस्ताक्षरों को भी स्वीकार किया विचारण न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया कि वादी ने यह दर्शित किए जाने के प्रयोजनार्थ कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है कि नारायण सिंह द्वारा निष्पादित विल (प्रदर्श डी-2) कूटरचित और गढ़ा हुआ दस्तावेज है । तद्नुसार, वाद खारिज कर दिया गया ।

5. अपीलार्थी ने विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री से व्यथित होकर 2001 की नियमित सिविल अपील संख्या 27-ए फाइल की जिसको भी विदिशा के चतुर्थ अपर जिला न्यायाधीश द्वारा तारीख 30 अक्तूबर, 2001 के निर्णय और आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया ।

6. वर्तमान अपील विधि के निम्नलिखित सारभूत प्रश्न के आधार पर विचारार्थ ग्रहण की गई है :-

"क्या तारीख 10 नवंबर, 1995 की इच्छा को सम्यक् रूप से साबित किया गया जैसाकि 1925 के भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 63(क) के अधीन अपेक्षित है ?"

7. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा निचले न्यायालय द्वारा पारित निणर्य और डिक्री को चुनौती देते हुए निवेदन किया गया कि प्रतिवादी भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 63(क) के उपबंधों के अनुसार विल के निष्पादन को साबित करने में विफल रहे हैं और न तो किसी अनुप्रमाणन साक्षी का परीक्षण किया और न ही किसी ऐसे साक्षी का परीक्षण किया गया जो अनुप्रमाणन साक्षियों के हस्ताक्षरों की पहचान कर सकता । प्रतिवादियों ने केवल मिट्ठू सिंह (प्रति. सा. 2) जो विल का लेखक है, का परीक्षण कराया । अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा आगे निवदेन किया गया कि निचले न्यायालयों ने वादी पर अनुचित रूप से साबित करने का भार डाल दिया जबकि यह विल को प्रस्तुत करने वाले का कर्तव्य है कि वह विल को समस्त संदिग्ध परिस्थितियों के परे साबित करे ।

8. यद्यपि प्रत्यर्थी पर समन की तामीली की गई, किंतु उसकी तरफ से कोई उपस्थित नहीं हुआ ।

9. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल को सुना ।

10. मिट्ठू सिंह (प्रति. सा. 2) ने अभिकथित किया है कि उसने विल को लिखा था जिस पर नारायण सिंह ने अपने अंगूठे की छाप अंकित की थी । यह साक्षी अनुप्रमाणन साक्षियों द्वारा विल के हस्ताक्षर के बारे में पूर्णतया मौन है । मिट्ठू सिंह (प्रति. सा. 2) ने मात्र यह अभिकथित किया है कि विल के निष्पादन के समय गणेश राम, हुकूम सिंह, रतन सिंह और हरि सिंह नामक एक अन्य व्यक्ति उपस्थित थे किंतु उसने यह अभिकथित नहीं किया कि विल को इन साक्षियों द्वारा हस्ताक्षरित किया गया था । अतः, मिट्ठू सिंह (प्रति. सा. 2) का साक्ष्य

मात्र इस सीमा तक नहीं पढ़ा जा सकता है कि वह विल (प्रदर्श डी-2) का लेखक है और नारायण सिंह ने इसी विल पर अपनी अंगूठे की छाप अंकित की थी ।

11. मेरे द्वारा विचारार्थ एक अन्य प्रश्न यह है कि क्या विल के लेखक को अनुप्रमाणन साक्षी कहा जा सकता है या नहीं ? इसी न्यायालय की एक समकक्ष न्यायपीठ ने **नूर बख्श खान** बनाम **सलीम खान और अन्य**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया है :-

> "6. उत्तराधिकार अधिनियम (1925 का 39) की धारा 63 के निबंधनों के अनुसार किसी विधिमान्य 'विल' को दो साक्षियों द्वारा अनुप्रमाणित किया जाना चाहिए । पुनः, साक्ष्य अधिनियम की धारा 68 के निबंधनों के अनुसार किसी 'विल' के निष्पादन के तथ्य को साबित किए जाने के प्रयोजनार्थ यह आवश्यक है कि इसको कम से कम एक अनुप्रमाणन साक्षी द्वारा साबित किया जाना चाहिए ।
>
> 7. संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 3 शब्द 'अनुप्रमाणित' को परिभाषित करती है और परिभाषा खंड में दिए गए अर्थ को माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा एम. एल. अब्दुल जब्बार साहिब **बनाम** एच. बी. वेंकटाशास्त्री एंड सन्स (ए. आई. आर. 1969 एस. सी. 1147) वाले मामले में निम्नलिखित शब्दों में भलीभांति स्पष्ट किया गया है –
>
> > '8. इस बात को अवेक्षित किया जाना चाहिए कि शब्द 'अनुप्रमाणित' अर्थात् वह बात जिसको परिभाषित किया जाना है, स्वमेव परिभाषा के भाग के रूप में ही प्रकट होती है । अनुप्रमाणन किए जाने का अर्थ है किसी साक्षी द्वारा किसी तथ्य की जिम्मेदारी लिया जाना । संक्षेप में, धारा 3 के अधीन किसी विधिमान्य अनुप्रमाणन की आवश्यक शर्तें हैं (1) दो या दो से अधिक साक्षियों ने निष्पादक को लिखत पर हस्ताक्षर करते हुए देखा या उससे उसके हस्ताक्षर की

[1] ए. आई. आर. 2015 एम. पी. 72 = (2014) 3 एम. पी. एल. जे. 542.

व्यक्तिगत अभिस्वीकृति प्राप्त की ; (2) इस तथ्य का अनुप्रमाणन किए जाने या साक्ष्य दिए जाने के प्रयोजनार्थ उनमें से प्रत्येक ने लिखत पर निष्पादक की उपस्थिति में हस्ताक्षर किए हैं । यह आवश्यक है कि साक्षी ने अपने हस्ताक्षर अनुप्रमाणन करने वाले साक्षी (Animo Attestandi) के रूप में किए हैं अर्थात् अनुप्रमाणन के प्रयोजनार्थ कि उसने निष्पादक को हस्ताक्षर करते हुए देखा या उससे उसके हस्ताक्षर की व्यक्तिगत अभिस्वीकृति प्राप्त की यदि कोई व्यक्ति किसी दस्तावेज पर किसी उद्देश्य के लिए हस्ताक्षर करता है अर्थात् वह इस बात को प्रमाणित है कि वह उस दस्तावेज का लेखक है या पहचान करता है या रजिस्ट्रीकरण अधिकारी है, तो वह अनुप्रमाणन साक्षी नहीं है ।'

8. एन. कमलाम (मृतक) और एक अन्य **बनाम** अय्यास्वामी और एक अन्य (ए. आई. आर. 2001 एस. सी. 2802) वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने पुन: विस्तारपूर्वक और स्पष्ट शब्दों में (विल) के निष्पादन के तथ्य के संदर्भ में अनुप्रमाणन की परिधि, अर्थ और परिणामों को स्पष्ट किया । अनुप्रमाणन की महत्वपूर्ण अपेक्षाएं दो प्रकार की पाई जाती हैं (1) अनुप्रमाणन साक्षी को निष्पादन का साक्षी होना चाहिए जिसका अर्थ है उसकी उपस्थिति और (2) उसको साक्षी के रूप में अपने नाम को लिखते हुए निष्पादन को प्रमाणित या चिह्नांकित करना चाहिए, जो अनुप्रमाणन के भानपूर्ण आशय का द्योतक है अर्थात् अनुप्रमाणन करने वाले व्यक्ति के रूप में अनुप्रमाणन साक्षी ।

9. 'विल' पर लेखक द्वारा हस्ताक्षर किए जाने की तुलना अनुप्रमाणन साक्षियों के हस्ताक्षरों से नहीं की जा सकती चूंकि अनुप्रमाणन साक्षियों के हस्ताक्षर विल के निष्पादन के साक्षी होने और कानूनी अपेक्षाओं को पूर्ण किए जाने के विनिर्दिष्ट प्रयोजन के लिए होते हैं ।

10. लेखक 'विल' पर अपने हस्ताक्षर लेखक के रूप में करता

है । वह 'विल' का साक्षी नहीं होता बल्कि मात्र 'विल' लिखने वाला होता है । यहां पर अनुप्रमाणन के आशय का तत्व लुप्त है अर्थात् अनुप्रमाणन का आशय लुप्त है । उसके हस्ताक्षर मात्र इस बात को प्रमाणित किए जाने के प्रयोजनार्थ हैं कि वह 'विल' का लेखक था ।

11. विधि की पूर्वोक्त प्रतिपादना को दृष्टि में रखते हुए मेरे समक्ष उपस्थित मामले में लेखक प्रति. सा. 2 जय बाबू के साक्ष्य को अनुप्रमाणन साक्षी के साक्ष्य के रूप में प्रतिस्थापित नहीं किया जा सकता ।

12. इस प्रकार, प्रति. सा. 2 जय बाबू का शपथपूर्वक साक्ष्य अनुप्रमाणन साक्षी के साक्ष्य को प्रतिस्थापित नहीं कर सकता । 'विल' के बाबत यह नहीं कहा जा सकता कि वह साबित हो गई है । उसका शपथपूर्वक कथन संदेहपूर्ण है जहां तक न केवल निष्पादन के तथ्य का संबंध है बल्कि उसकी अंतर्वस्तु का भी है ।"

12. अत:, मिट्ठू सिंह के साक्ष्य की तुलना अनुप्रमाणन साक्षियों के साक्ष्य से नहीं की जा सकती । पुन:, मिट्ठू सिंह ने यह अभिकथित नहीं किया कि विल का निष्पादन नारायण सिंह के अनुदेशों के आधार पर किया गया था और नारायण सिंह द्वारा विल पर अंगूठे की छाप लगाए जाने के पूर्व उसको विल को पढ़कर सुनाया गया था । प्रतिवादी ने किसी भी अनुप्रमाणन साक्षी का परीक्षण नहीं कराया ।

13. उच्चतम न्यायालय ने **एच. वेंकटचला अय्यंगर** बनाम **बी. एन. थेम्माजम्मा**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया है :-

"18. विल के सबूत के मामले में वास्तविक विधिक स्थिति क्या है ? यह सभी को भलीभांति ज्ञात है कि विल का सबूत न्यायालयों के विनिश्चयों में निरंतर चर्चा का विषय रहा है और इस विषय पर बड़ी संख्या में न्यायिक उद्घोषणाएं विद्यमान हैं । विल प्रतिवादित करने वाला पक्ष या उसके अधीन अन्यथा रूप से दावा करने वाला पक्ष नि:संदेह रूप से उस दस्तावेज को साबित कराने

[1] ए. आई. आर. 1959 एस. सी. 443.

की ईप्सा करता है और इस बात का निर्णय किए जाने के प्रयोजनार्थ कि इसे कैसे साबित किया जाए, हमको अपरिहार्य रूप से उन कानूनी उपबंधों को निर्दिष्ट करना चाहिए जो दस्तावेजों के सबूत के विषय पर लागू होते हैं । इस प्रयोजनार्थ साक्ष्य अधिनियम की धारा 67 और 68 सुसंगत हैं । धारा 68 के अधीन यदि कोई दस्तावेज अभिकथित रूप से किसी व्यक्ति द्वारा हस्ताक्षरित किया गया है, तो इस बात को साबित किया जाना चाहिए कि उस व्यक्ति के हस्ताक्षर उसी की हस्तलिपि में है और अधिनियम की धारा 45 और 47 के अधीन ऐसी किसी भी हस्तलिपि को साबित किए जाने के प्रयोजनार्थ विशेषज्ञों की राय और उन व्यक्तियों की राय जो संबद्ध व्यक्ति की हस्तलिपि से भलीभांति परिचित हैं, को सुसंगत माना गया है । धारा 68 दस्तावेज, जिसका अनुप्रमाणन विधि द्वारा अपेक्षित होता है, के निष्पादन के सबूत पर विचार करती है और यह धारा उपबंधित करती है कि ऐसे किसी भी दस्तावेज को साक्ष्य के रूप में उपयोग में तब तक न लाया जाएगा, जब तक कि कम से कम एक अनुप्रमाणक साक्षी को, निष्पादन को साबित करने के प्रयोजन से न बुलाया गया हो । यह उपबंध उन अपेक्षाओं और सबूत की प्रकृति को विहित करते हैं जिनका समाधान उस पक्ष द्वारा किया जाना चाहिए जो विधि के न्यायालय में किसी दस्तावेज का अवलंब लेता है । इसी प्रकार से भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 59 और 63 भी सुसंगत है । धारा 59 उपबंधित करती है कि प्रत्येक स्वस्थ्यचित्त व्यक्ति, जो अवयस्क नहीं है, विल द्वारा अपनी संपत्ति का व्ययन कर सकेगा और इस धारा के तीन स्पष्टीकरण इस बात को उपदर्शित करते हैं कि अभिव्यक्ति 'स्वस्थ्यचित्त व्यक्ति' से इस संदर्भ में क्या आशय है । धारा 63 की यह अपेक्षा है कि वसीयतकर्ता विल पर अपने हस्ताक्षर करेगा या अपना चिह्न लगाएगा या उस पर किसी अन्य व्यक्ति द्वारा उसकी अनुपस्थिति में और उसके निर्देशानुसार हस्ताक्षर किया जाएगा और वसीयतकर्ता के हस्ताक्षर या चिह्न या उसके लिए

हस्ताक्षर करने वाले व्यक्ति के हस्ताक्षर ऐसे किए जाएंगे या लगाए जाएंगे कि उससे यह प्रकट हो कि उसके द्वारा लेख को विल के रूप में प्रभावी करने का आशय था । इस धारा की यह अपेक्षा भी है कि विल को ऐसे दो या अधिक साक्षियों द्वारा अनुप्रमाणित किया जाएगा, जिसमें से प्रत्येक ने वसीयतकर्ता को विल पर हस्ताक्षर करते हुए या चिह्न लगाते हुए देखा है या वसीयतकर्ता की उपस्थिति में और उसके निर्देशानुसार किसी अन्य व्यक्ति को विल पर हस्ताक्षर करते हुए देखा है या वसीयतकर्ता से उसके हस्ताक्षर या चिह्न की या ऐसे अन्य व्यक्ति के हस्ताक्षर की वैयक्तिक अभिस्वीकृति प्राप्त की है और प्रत्येक साक्षी वसीयतकर्ता की उपस्थिति में विल पर हस्ताक्षर करेगा, किंतु यह आवश्यक नहीं होगा कि एक से अधिक साक्षी एक ही समय पर उपस्थित हों और अनुप्रमाणन का कोई विशेष प्ररूप आवश्यक नहीं होगा । अत: यह प्रश्न कि क्या प्रतिवादी द्वारा तैयार की गई विल वसीयतकर्ता की अंतिम विल के रूप में साबित हो गई है, का निर्णय इन उपबंधों के प्रकाश में किया जाएगा । क्या वसीयतकर्ता ने विल पर हस्ताक्षर किए थे ? क्या वह विल में किए गए प्रकटनों की प्रकृति और प्रभाव को समझता था ? क्या उसने विल पर अपने हस्ताक्षर यह जानते हुए किए थे कि उस विल में क्या समाविष्ट है ? यदि व्यापक तौर पर बात की जाए तो इन्हीं प्रश्नों का विनिश्चय विल के सबूत के प्रश्न पर निष्कर्षों की प्रकृति को विनिर्धारित करता है । यह कहना प्रथमदृष्ट्या सत्य होगा कि विल को किसी भी अन्य दस्तावेज की भांति साबित किया जाना चाहिए, सिवाए भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 63 द्वारा विहित अनुप्रमाणन की विशेष अपेक्षाओं के । जैसाकि अन्य दस्तावेजों के सबूत के मामले में होता है, वैसा ही विल के सबूत के मामले में भी होता है और गणितीय निश्चितता के साथ सबूत की प्रत्याशा किया जाना व्यर्थ होगा । ऐसे मामलों में जो परीक्षण लागू किया जाना चाहिए, वह प्रज्ञावान मस्तिष्क का समाधान है ।

19. तथापि, एक ऐसा महत्वपूर्ण लक्षण है जो विल और अन्य

दस्तावेजों के मध्य विभेद करता है । अन्य दस्तावेजों की भांति विल वसीयतकर्ता की मृत्यु के पश्चात् लागू होती है और इसलिए जब इसको किसी न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है या पेश किया जाता, तो वसीयतकर्ता जो पहले ही इस संसार से विदा ले चुका है, यह नहीं कह सकता कि यह उसी की विल है अथवा नहीं और यह पहलू नैसर्गिक रूप से इस प्रश्न के विनिश्चय में गंभीरता के तथ्य को पुर:स्थापित करता है कि क्या प्रस्तुत किया गया दस्तावेज संसार को छोड़ चुके वसीयतकर्ता की अंतिम इच्छा और दस्तावेज है । ऐसी स्थिति में भी यह न्यायालय विल के सबूत के बारे में विचार करते हुए उसी जांच को आरंभ करेगा जो किसी भी अन्य दस्तावेज के सबूत के मामले में होती है । प्रस्तुत करने वाले से यह अपेक्षा की जाएगी कि वह संतोषप्रद साक्ष्य के द्वारा इस बात को दर्शित करे कि विल पर वसीयतकर्ता द्वारा हस्ताक्षर किए गए थे, वसीयतकर्ता सुसंगत समय बिंदु पर स्वस्थ्य और स्वयं द्वारा किए जा रहे कार्य को भलीभांति समझने वाले चित्त का व्यक्ति था, उसने दस्तावेजों की प्रकृति और प्रभाव को समझ लिया था और तत्पश्चात् अपनी स्वतंत्र सहमति से उन दस्तावेजों पर हस्ताक्षर किए थे । सामान्यतया, जब विल के समर्थन में पेश किया गया साक्ष्य (साक्षी) वसीयतकर्ता स्वस्थचित्त और उसके हस्ताक्षर जैसा कि विधि द्वारा अपेक्षित है, को साबित करने के प्रयोजनार्थ निष्पक्ष, संतोषप्रद और पर्याप्त होता है तो न्यायालय विल को प्रस्तुत करने वाले के पक्ष में निष्कर्ष अभिलिखित करने में न्यायसंगत होगा । अन्य शब्दों में प्रस्तुत करने वाले के भार का निर्वहन हो जाता है, जब आवश्यक तथ्यों के सबूत, जैसाकि उपदर्शित किए गए हैं, प्रस्तुत कर दिए जाते हैं ।

20. तथापि, ऐसे भी मामले हो सकते हैं जिनमें विल का निष्पादन संदेहास्पद परिस्थितियों के घेरे में हो । वसीयतकर्ता के अभिकथित हस्ताक्षर अत्यंत अस्थिर और संदेहजनक हो सकते हैं और इस बाबत पेश करने वाले के पक्षकथन के समर्थन में साक्ष्य कि प्रश्नगत हस्ताक्षर वसीयतकर्ता के ही हस्ताक्षर हैं, हस्ताक्षर की

उपस्थिति द्वारा सृजित संदेह को निराकृत नहीं कर सकते, तो वसीयतकर्ता की मानसिक स्थिति अत्यंत दुर्बल और कमजोर प्रतीत होने लगती है और प्रस्तुत किए गए साक्ष्य वसीयतकर्ता की मानसिक क्षमता के संबंध में विधिसम्मत संदेह को दूर कर पाने में सफल नहीं हो पाते, तो विल में समाविष्ट विवरण सुसंगत परिस्थितियों के प्रकाश में अनैसर्गिक, अनधिसंभाव्य और अनुचित प्रतीत होते हैं, या विल अन्यथा रूप से यह उपदर्शित करती है कि उक्त विवरण वसीयतकर्ता की स्वतंत्र इच्छा और विवेक के परिणामस्वरूप नहीं हैं । इन परिस्थितियों में न्यायालय नैसर्गिक रूप से यह प्रत्याशा करेगा कि इसके पहले कि दस्तावेज को वसीयतकर्ता की अंतिम विल के रूप में स्वीकार किया जाए, समस्त विधिसम्मत संदेहों को पूर्णतया दूर किया जाना चाहिए । ऐसी संदेहपूर्ण परिस्थितियों की उपस्थिति नैसर्गिक रूप से दस्तावेज के संबंध में आरंभिक दायित्व को अत्यधिक महत्वपूर्ण बना देती है और जब तक कि उनका संतोषप्रद रूप से समाधान नहीं हो जाता, न्यायालय प्रस्तुत किए गए दस्तावेज को वसीयतकर्ता की अंतिम विल के रूप में मान्यता प्रदान करने के प्रति अनिच्छुक रहेगा । यह सत्य है कि यदि प्रस्तुत की गई विल के निष्पादन के संबंध में अनुचित प्रभाव, कपट या प्रपीड़न के प्रयोग को अभिकथित करते हुए केवियट फाइल किया जाता है, तो इस प्रकार के अभिवाकों को केवियट फाइल करने वालों द्वारा साबित किया जाना होगा, किंतु जहां इस प्रकार के अभिवाकों का आश्रय नहीं लिया गया है और परिस्थितियोंवश इस प्रकार के संदेह उत्पन्न होते हैं कि क्या वसीयतकर्ता विल के निष्पादन में अपनी स्वतंत्र इच्छा के अनुसार कार्य कर रहा था और इन परिस्थितियों में यह आरंभिक भार का भाग होगा कि मामले में इस प्रकार के किसी भी विधिसम्मत संदेह को निराकृत किया जाए ।"

14. उच्चतम न्यायालय ने **बाबू सिंह और अन्य** बनाम **राम सहाय** उर्फ **राम सिंह**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया है :-

---

[1] (2008) 14 एस. सी. सी. 754 = ए. आई. आर. 2008 एस. सी. 2485.

"12. निर्विवाद रूप से, किसी भी विल को 1925 के उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 63(1)(ग) के निबंधनों के अनुसार दो साक्षियों द्वारा सत्यापित किया जाता है । यह भी निर्विवादित है कि विल को साबित किए जाने के प्रयोजनार्थ 1872 के साक्ष्य अधिनियम की धारा 68 की अपेक्षा का अनुपालन किया जाना अपेक्षित होता है । उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 63(1)(ग) की यह आज्ञा है कि सत्यापन दो साक्षियों द्वारा किया जाना चाहिए । अतः, न केवल विल का निष्पादन साबित किया जाना चाहिए, बल्कि वास्तविक निष्पादन भी न्यूनतम दो साक्षियों द्वारा सत्यापित किया जाना चाहिए । विल के निष्पादन का सत्यापन संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 3 के उपबंधों के पुष्टिकरण में होना चाहिए ।

13. 'सत्यापन' और 'निष्पादन' के दो भिन्न अर्थ होते हैं । कुछ दस्तावेजों में सत्यापन अपेक्षित नहीं होता । कुछ दस्तावेजों का सत्यापन विधि द्वारा अपेक्षित होता है ।

14. अधिनियम की धारा 68 के निबंधनों के अनुसार यद्यपि यह आवश्यक नहीं है कि किसी विल के निष्पादन को सम्यक् रूप से साबित करने के लिए एक से अधिक साक्षी की अपेक्षा की जाए किंतु इसका यह अर्थ नहीं होगा कि किसी भी सत्यापित दस्तावेज को केवल एक अधिप्रमाणन साक्षी के साक्ष्य द्वारा साबित किया जाएगा और दो या दो से अधिक अधिप्रमाणन साक्षी का परीक्षण किए जाने की कदापि आवश्यकता नहीं है । अधिनियम की धारा 68 सबूत के तरीके को अधिकथित करती है । यह धारा मात्र अधिप्रमाणन के बजाय अधिक साक्ष्य की आवश्यकता के लिए परिकल्पित करती है, चूंकि इस धारा में शब्द 'कम से कम' का प्रयोग हुआ है । जब विल के निष्पादन और अधिप्रमाणन के अतिरिक्त उसकी शुद्धता प्रश्नगत हो जाती है, तो विल की विधिमान्यता के बारे में घोषणा की ईप्सा करने वाले किसी व्यक्ति का यह भी कर्तव्य हो जाता है कि वह विद्यमान प्रतिवेशी

संदेहास्पद परिस्थितियों, यदि कोई हो, को वर्णित करे । अतः, विल को प्रस्तुत करने वाले से अधिप्रमाणन साक्षियों का परीक्षण किए जाने के दौरान विल के निष्पादन को साबित किए जाने के अतिरिक्त यह अपेक्षा की जाती है कि वह प्रतिवेशी संदेहास्पद परिस्थितियों, यदि कोई हो, को स्पष्ट करने के लिए भी साक्ष्य प्रस्तुत करे । विल के निष्पादन का सबूत अन्य बातों के साथ-साथ इन्हीं बातों पर निर्भर होगा ।

15. न्यायालय को विल का प्रोबेट प्रदान करते समय समस्त सुसंगत कारकों पर विचार करना चाहिए । न्यायालय द्वारा यह निष्कर्ष निकाला जाना चाहिए कि विल स्वतंत्र इच्छा के कारण अस्तित्व में आई । वसीयतकर्ता को इस बाबत पूर्ण जानकारी और समझ होनी चाहिए, जहां तक उसकी अंतर्वस्तु का संबंध है । उक्त प्रयोजनार्थ पृष्ठभूमि से संबंधित तथ्यों का भी उल्लेख किया जाना चाहिए । तथापि, जहां पर अनुचित प्रभाव का अभिवाक् किया जाता है, उसको साबित करने का भार आक्षेपकर्ता पर होगा, न कि अपराधकर्ता पर । (देखें सावित्री **बनाम** कार्थयायनी अम्मा, ए. आई. आर. 2008 एस. सी. 300)"

15. उच्चतम न्यायालय ने **बालाठंडायुथम और एक अन्य** बनाम **एझिलारसन**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया :-

"14. जब कोई विल संदिग्ध परिस्थितियों से घिरी हुई होती है तो उस विल को प्रस्तुत करने वाले व्यक्ति को अत्यधिक महत्वपूर्ण कर्तव्यों का निर्वहन करना होता है । इस न्यायालय द्वारा एच. वेंकटचला अय्यंगर **बनाम** बी. एन. थिम्माजम्मा (ए. आई. आर. 1959 एस. सी. 443) वाले मामले में न्यायमूर्ति पी. बी. गजेन्द्रगडकर (जो उस समय न्यायाधीश थे) द्वारा तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ की ओर से निर्णय लिखते हुए निर्णय के पैरा 20 में प्राधिकारपूर्वक अभिनिर्धारित किया गया है कि किसी ऐसे मामले में

---

[1] (2010) 5 एस. सी. सी. 770 = 2010 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 3131.

ऐसे मामले में जहां वसीयतकर्ता का मस्तिष्क दुर्बल है और उसका चित्त अस्थिर है और वसीयतकर्ता की मानसिक क्षमता के बाबत पर्याप्त साक्ष्य उपलब्ध नहीं है या जहां परिस्थितियों के प्रकाश में विल में शपथपूर्वक किए गए कथन अनैसर्गिक, अनधिसंभाव्य या अनुचित हैं या यह प्रतीत होता है कि विल में प्रकट की गई अंतिम इच्छा वसीयतकर्ता की स्वतंत्र इच्छा और विवेक के परिणामस्वरूप नहीं है, तो न्यायालय इस बात पर विचार कर सकता है कि प्रश्नगत विल संदेहास्पद परिस्थितियों से घिरी हुई है ।

15. इस परीक्षण का अनुसरण करते हुए, और यही हमको करना भी चाहिए, हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि दोनों ही विल, जो प्रदर्श बी-19 और प्रदर्श बी-20 हैं, संदेहास्पद परिस्थितियों द्वारा घिरी हुई हैं । **एच. वेंकटचला** (उपरोक्त) वाले मामले में दिया गया विनिश्चयानुपात यह है कि ऐसी परिस्थिति में न्यायालय 'नैसर्गिक रूप से इस बात का प्रत्याशा करेगा कि इसके पहले कि दस्तावेज को वसीयतकर्ता की अंतिम विल के रूप में स्वीकार किया जाए, समस्त विधिसम्मत संदेहों को पूर्णतया निराकृत किया जाना चाहिए । ऐसी संदेहास्पद परिस्थितियों की मौजूदगी नैसर्गिक रूप से साबित करने के आरंभिक भार को अत्यधिक कठिन बना देती है और जब तक कि इस आरंभिक भार का संतोषजनक ढंग से निर्वहन नहीं कर दिया जाता, न्यायालय दस्तावेज को वसीयत की अंतिम विल के रूप में मान्यता प्रदान करने से विरत रहेगा' (देखें ए. आई. आर. का पृष्ठ 452, पैरा 20) । यह न्यायालय पूर्वोक्त सिद्धांत का अनुसरण करते हुए यह अभिनिर्धारित करने के लिए विवश है कि अपीलार्थी उन संदेहास्पद परिस्थितियों को निराकृत करने के अपने भार का निर्वहन करने में सफल नहीं हो सके, जिन्होंने प्रदर्श बी-19 और बी-20 को घेरे में ले रखा है । अतः, उच्च न्यायालय के निर्णय में कोई त्रुटि निकालने का हमारे समक्ष कोई भी कारण उपस्थित नहीं है ।

16. जहां तक विल के निष्पादन का संबंध है, 1925 के

उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 63 के अधीन इस दस्तावेज को दो या दो अधिक साक्षियों द्वारा सत्यापित किया गया है, जिनमें से प्रत्येक ने वसीयतकर्ता को विल पर हस्ताक्षर करते या अपने चिह्न को चिह्नांकित करते हुए देखा है या किसी अन्य व्यक्ति को वसीयतकर्ता की उपस्थिति में और उसके निर्देश पर विल पर हस्ताक्षर करते हुए देखा है या उसने वसीयतकर्ता से अपने हस्ताक्षर या चिह्न या किसी अन्य व्यक्ति के हस्ताक्षर की व्यक्तिगत अभिस्वीकृति प्राप्त की है और दोनों ही साक्षियों में से प्रत्येक वसीयतकर्ता की उपस्थिति में हस्ताक्षर करेगा, किंतु यह आवश्यक नहीं होगा कि दोनों ही साक्षी एक ही समय पर उपस्थित हों और सत्यापन का कोई विशिष्ट प्ररूप आवश्यक नहीं होगा ।

17. 1872 के साक्ष्य अधिनियम की धारा 68 पुन: उपबंधित करती है कि यदि किसी दस्तावेज का सत्यापन विधि द्वारा अपेक्षित है तो उस दस्तावेज को तब तक साक्ष्य में प्रयोग नहीं किया जाएगा जब तक कि दोनों में से कम से कम एक अधिप्रमाणन साक्षी को उसके निष्पादन का साबित किए जाने के प्रयोजनार्थ तलब किया गया है, यदि दोनों में से एक अधिप्रमाणन साक्षी जीवित है और न्यायालय की प्रक्रिया के अध्यधीन साक्ष्य देने के लिए सक्षम है । धारा 68 के अधीन एक परंतुक है किंतु हम उस परंतुक से इस मामले में संबद्ध नहीं है ।

18. इस न्यायालय ने **एच. वेंकटचला** (उपरोक्त) वाले मामले में इन उपबंधों पर टिप्पण करते हुए अधिकथित किया कि धारा 68 उस दस्तावेज के निष्पादन के सबूत पर विचार करती है जिसका अधिप्रमाणन विधि द्वारा अपेक्षित है और यह धारा उपबंधित करती है कि ऐसा कोई भी दस्तावेज साक्ष्य में प्रयोग नहीं किया जाएगा जब तक कि दोनों में से कम से कम एक अधिप्रमाणन साक्षी को उसके निष्पादन को साबित किए जाने के प्रयोजनार्थ तलब न किया गया हो । ये उपबंध उस सबूत की अपेक्षाओं और प्रकृति को विहित करते हैं, जिसका समाधान उस

पक्ष द्वारा किया जाना चाहिए जो विधि के किसी न्यायालय के समक्ष किसी दस्तावेज का अवलंब लेता है । आगे यह अभिनिर्धारित किया गया है कि उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 63 यह अपेक्षा करती है कि वसीयतकर्ता विल पर हस्ताक्षर करेगा और अपना चिह्न अंकित करेगा या इस पर उसकी उपस्थिति में और उसके निर्देशानुसार किसी अन्य व्यक्ति द्वारा हस्ताक्षर किया जाएगा और हस्ताक्षर किया जाना या चिह्न का अंकित किया जाना ऐसी रीति में होगा ताकि यह प्रतीत हो कि इसको किए जाने का आशय विल की लिखत को प्रभाव प्रदान करना था । यह धारा यह अपेक्षा भी करती है कि विल का अधिप्रमाणन दो या दो से अधिक साक्षियों द्वारा किया जाएगा, जैसाकि विहित किया गया है । अतः, यह प्रश्न कि क्या वसीयतकर्ता द्वारा निष्पादित विल उसकी अंतिम विल के रूप में साबित हो गई है, का निर्णय इन उपबंधों के प्रकाश में किया जाना चाहिए । (देखें ए. आई. आर. पृष्ठ 451 पैरा 18)

19. अतः, **एच. वेंकटचला** (उपरोक्त) वाले मामले में अधिकथित विधि आज भी लागू है और इस न्यायालय ने इस निर्णयज विधि का अनुसरण अनेक निर्णयों में किया है । (देखें मधुकर डी. शिंडे **बनाम** ताराबाई अबासेडागे, ए. आई. आर. 2002 एस. सी. 637, निरंजन उमेंश चंद्र जोशी **बनाम** मृदुला ज्योति राव, ए. आई. आर. 2007 एस. सी. 614 और सावित्री **बनाम** कार्थयायनी अम्मा, ए. आई. आर. 2008 एस. सी. 300 वाले मामले) अतः, यह विल के प्रस्तुतकर्ता का दायित्व है कि वह समस्त संदेहास्पद परिस्थितियों का निराकरण करे । निचले न्यायालयों ने इस बात को साबित करने का भार वादी पर त्रुटिपूर्वक अंतरित कर दिया कि विल कूटरचित या मनगढ़ंत नहीं है ।"

16. यहां पर यह उल्लेख किया जाना निरर्थक नहीं होगा कि विल के वसीयतकर्ता (नारायण सिंह) की मृत्यु विल के निष्पादन के एक माह के भीतर हो गई थी । विल के किसी भी साक्षी ने यह अभिकथित नहीं किया है कि नारायण सिंह विल के निष्पादन के समय चिकित्सीय और

मानसिक रूप से पूर्णतया स्वस्थ्य था । इसके विपरीत प्रतिवादियों का पक्षकथन यह है कि नारायण सिंह का स्वास्थ्य ठीक नहीं था । बाबूलाल (प्रति.सा. 1) ने भी यह अभिकथित किया है कि विल पर नारायण सिंह द्वारा उसकी उपस्थिति में हस्ताक्षर किए गए थे ।

17. उच्चतम न्यायालय ने **गणेशन (मृतक) द्वारा विधिक प्रतिनिधि** बनाम **कलंजियम**[1] वाले मामले में अभिनिर्धारित किया है कि यदि विल पर वसीयतकर्ता के हस्ताक्षर निर्विवाद हैं, तो यह आवश्यक नहीं है कि इस बात को साबित किया जाए कि वसीयतकर्ता को आवश्यक रूप से विल पर केवल अधिप्रमाणन साक्षियों की उपस्थिति में हस्ताक्षर करने चाहिए या दोनों अधिप्रमाणन साक्षी एक ही समय पर एक साथ एक दूसरे की उपस्थिति में और वसीयतकर्ता की उपस्थिति में विल पर हस्ताक्षर करेंगे । तथापि, वर्तमान मामले में नारायण सिंह के अंगूठे की छाप को वादी द्वारा स्वीकार नहीं किया गया है । अतः, जहां विल के वसीयतकर्ता के हस्ताक्षर/अंगूठे की छाप को स्वीकार नहीं किया गया है, तो यह अपेक्षित है कि विल को भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 63(ग) के उपबंधों का कड़ाईपूर्वक पालन करते हुए साबित किया जाए । चूंकि प्रत्यर्थी/प्रतिवादी विल को भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 63(ग) के उपबंधों के अनुसार साबित करने में विफल रहे हैं, इसलिए इस न्यायालय का सुविचारित विचार है कि निचले न्यायालय ने वादी पर साबित करने के भार को अंतरित करने के द्वारा तात्विक अवैधता कारित की और त्रुटिपूर्वक अभिनिर्धारित किया कि विल को प्रतिवादियों द्वारा सम्यक् रूप से साबित किया गया ।

18. तद्नुसार, विधि के सारभूत प्रश्नों का उत्तर अपीलार्थियों के पक्ष में दिया जाता है ।

19. विदिशा के चतुर्थ अपर जिला न्यायाधीश द्वारा 2001 की सिविल अपील संख्या 27-ए में तारीख 30 अक्तूबर, 2001 को पारित निर्णय और डिक्री और विदिशा के प्रथम सिविल न्यायाधीश, वर्ग-2 द्वारा

---

[1] 2019 (3) रिकार्डेड सिविल रिपोर्टर 843.

1997 के सिविल वाद संख्या 20-ए में तारीख 19 मार्च, 2001 को पारित निर्णय और डिक्री को तद्नुसार अपास्त किया जाता है । वादी/अपीलार्थी द्वारा फाइल किया गया वाद एतद्द्वारा डिक्री किया जाता है ।

20. इस निर्विवाद तथ्य को दृष्टि में रखते हुए कि नारायण सिंह सर्वे संख्या 314 क्षेत्रफल 0.113 हेक्टेयर और सर्वे संख्या 651/1 क्षेत्रफल 0.481 हेक्टेयर वाली भूमि का स्वामी था और वादी राजा राम और प्रतिवादी बाबू लाल, नारायण सिंह के सगे भाई होने के नाते उसके वर्ग-2 उत्तराधिकारी हैं, इसलिए निम्नलिखित डिक्री पारित की जाती है :-

(1) अपीलार्थी और प्रतिवादी संख्या 2 का विवादित संपत्ति अर्थात् सर्वे संख्या 314 क्षेत्रफल 0.113 हेक्टेयर और सर्वे संख्या 651/1 क्षेत्रफल 0.481 हेक्टेयर स्थित ग्राम अटारीखेजरा तहसील ग्यारसपुर जिला विदिशा में आधा अंश है ।

(2) अपीलार्थी विभाजन के पश्चात् विवादित संपत्ति के आधे अंश के कब्जे के हकदार हैं ।

(3) अपीलार्थी राजस्व अभिलेखों में अपने नामों का नामांतरण कराने के हकदार हैं ।

(4) काउंसेल का शुल्क, यदि प्रमाणित किया जाए ।

21. परिणामस्वरूप अपील सफल होती है और एतद्द्वारा मंजूर की जाती है । तद्नुसार, डिक्री तैयार की जाए ।

अपील मंजूर की गई ।

शु.

कुमारी सुभांगी

बनाम

नाथूराम और अन्य

(2005 की एकल न्यायपीठ सिविल प्रकीर्ण अपील संख्या 683 और 635)

तारीख 9 जनवरी, 2018

न्यायमूर्ति श्री महेन्द्र माहेश्वरी

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59) – धारा 166 – मृतक के आश्रितों द्वारा प्रतिकर के लिए आवेदन – मृतक सरकारी विभाग में स्थायी रूप से कार्यरत था, उसकी आयु 40 वर्ष से कम थी – उसकी आय की क्षति के रूप में वार्षिक वेतन पर सरला वर्मा वाले मामले को ध्यान में रखते हुए गुणांक 15 लागू होगा और प्राप्त राशि में से मृतक पर होने वाले खर्च के रूप में 1/3 राशि घटा दी जाएगी ।

मोटर यान अधिनियम, 1988 – धारा 166 – मृतक के आश्रितों द्वारा प्रतिकर के लिए आवेदन – मृतक सरकारी विभाग में स्थायी रूप से कार्यरत था, उसकी आयु 40 वर्ष से कम थी – मृतक के आश्रितों को दाह-संस्कार के रूप में पारम्परिक खर्चों और सह-जीवन क्षति का भी संदाय प्रणय सेठी वाले मामले को ध्यान में रखते हुए देय होगा – यदि दुर्घटना के पश्चात् अनेक वर्ष व्यतीत हो चुके हैं, तो दाह-संस्कार व्यय और सह-जीवन क्षति की राशियों में घटना की तारीख से प्रत्येक तीन वर्ष में 10 प्रतिशत की वृद्धि की जाएगी ।

मोटर यान अधिनियम, 1988 – धारा 166 – मृतक के आश्रितों द्वारा प्रतिकर के लिए आवेदन – मृतक सरकारी विभाग में स्थायी रूप से कार्यरत था, उसकी आयु 40 वर्ष से कम थी – चूंकि प्रणय सेठी वाले मामले में मृतक के प्रेम और स्नेह के मद को पारम्परिक व्ययों के अन्तर्गत नहीं माना गया है, अतः इस मद में दिलाई गई राशि को पारम्परिक व्यय नहीं माना जा सकता ।

संक्षेप में मामले के तथ्य ये हैं कि अपीलार्थी, जो अधीनस्थ न्यायालय में दावाकर्ता है, ने मोटर यान अधिनियम की धारा 166 के अधीन तारीख 1 दिसम्बर, 1999 को घटित मोटर दुर्घटना में मृतक की मृत्यु के परिणामस्वरूप क्षतिपूर्ति प्राप्त करने के प्रयोजनार्थ दावा आवेदन प्रस्तुत किया और विभिन्न मदों के अन्तर्गत प्रतिकर दिलाए जाने की प्रार्थना की । विद्वान् अधीनस्थ न्यायालय द्वारा विरचित विवाद्यकों पर दोनों पक्षों के तर्क सुने जाने और अभिलेख पर उपलब्ध मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य ध्यान में रखते हुए आक्षेपित आदेश पारित किया गया । जिसके अंतर्गत मृतक की मासिक आय उसको 3,000/- रुपए वाला ग्रेड मिलने के आधार पर 7,194/- रुपए आंकी गई है जबकि वास्तव में उसकी मासिक आय समस्त भत्तों सहित 8,162/- रुपए थी । साथ ही विचारण न्यायालय ने यह मृत्यु के समय मृतक की 36 वर्ष की आयु को ध्यान में रखते हुए 16 के गुणांक का प्रयोग करते हुए आय की क्षति की गणना की । साथ ही विचारण न्यायालय ने पारंपरिक व्ययों (अंतिम संस्कारों) अंतर्गत 13,000/- रुपए और मृतक की पत्नी को हुई सहजीवन क्षति के अंतर्गत 35,000/- रुपए दिलाए जाने के लिए आदेशित किया । इसके अलावा विचारण न्यायालय ने दावाकर्ताओं को मृतक की स्नेह वंचना के परिणामस्वरूप भी 2,000/- रुपए दिलाए जाने के लिए आदेशित किया । इस आदेश व्यथित होकर दावाकर्ताओं ने वर्तमान अपीलें फाइल कीं । अपीलें मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – जहां तक मृतक की आय का प्रश्न है, विद्वान् अधिवक्ता अपीलार्थीगण द्वारा मृतक की आय के क्रम में जो तथ्य प्रस्तुत किए गए हैं उनके अनुसार मृतक के वेतन प्रमाण पत्र प्रदर्श पी.11 में मृतक की समस्त आय मय भत्तों के 8,162/- रुपए मासिक बताई गई है जिसे अधीनस्थ न्यायालय ने मात्र मृतक को मात्र पत्नी को 3,000/- रुपए ग्रेड मिलने के आधार पर मृतक की मासिक आय 7,194/- रुपए मानी है । इस न्यायालय के मत में मृतक की पत्नी को अन्य कोई लाभ प्राप्त होना प्रकट हुआ है तब भी आय को मध्यनजर रखते हुए आय की क्षति की गणना किया जाना न्यायोचित है अतः मृतक की 8,162/- रुपए प्रतिमाह के हिसाब से आय की गणना किया जाना

न्यायोचित है । अधीनस्थ न्यायालय ने 16 का गुणांक उपयोग में लिया है, जबकि मृतक की मृत्यु के समय 36 वर्ष की आयु को ध्यान में रखते हुए माननीय उच्चतम न्यायालय के दृष्टान्त सरला वर्मा बनाम दिल्ली परिवहन निगम में प्रतिपादित सिद्धान्तों की रोशनी में 16 के स्थान पर 15 का गुणांक उपयोग में लिया जाना उचित है । इस प्रकार आय की क्षति की मद में 9,79,440-/ रुपए की राशि निर्धारित की जाती है । अधीनस्थ न्यायालय द्वारा इस मद में 9,20,832/- रुपए की बढ़ोतरी की जाती है । जहां तक इस (मद भविष्यवर्ती) आय की क्षतिपूर्ति राशि का प्रश्न है, इस क्रम में ऊपर किए गए विवेचन से आय की क्षति के मद में 9,79,440/- रुपए की राशि निर्धारित की गई है । ऐसी स्थिति में नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम प्रणय सेठी और अन्य की रोशनी में मृतक की आयु 36 वर्ष होने व मृतक के सरकारी कर्मचारी होने के तथ्य को ध्यान में रखते हुए आय की क्षति की पचास प्रतिशत राशि भविष्य की संभावनाओं के मद में देय होगी, जो गणना करने पर 4,89,720/- रुपए होती है । चूंकि न्याय दृष्टांत नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम प्रणय सेठी और अन्य में प्रतिपादित सिद्धांतों की रोशनी में अपीलार्थीगण को भविष्यवर्ती आय की मद में राशि दिलाई गई है । ऐसी स्थिति में उक्त न्याय दृष्टांत में प्रतिपादित सिद्धांतों को सम्पूर्ण रूप से इस मामले में लागू किया जाना उचित है । अतः उक्त न्याय दृष्टांत की रोशनी में पारम्परिक मदों के तहत अधीनस्थ न्यायाल द्वारा दिलाए गए दाह संस्कार की मद की 2,000/- रुपए में वृद्धि करते हुए 15,000/- रुपए और मृतक की पत्नी को सहजीवन क्षति की मद में दिलाए गए 5,000/- रुपए की वृद्धि करते हुए 40,000/- रुपए की राशि निर्धारित की जाती है । साथ ही उक्त दृष्टांत में प्रतिपादित सिद्धांतों के तहत इन मदों में प्रत्येक तीन वर्ष में दस प्रतिशत की वृद्धि किया जाना भी उचित है । वर्तमान मामले में घटना 30 नवंबर, 1999 की है, जिसको 18 वर्ष व्यतीत हो चुके हैं । अतः दाह संस्कार की मद में 15,000/- रुपए की राशि में दस प्रतिशत यानि 1,500/- रुपए प्रत्येक वर्ष में वृद्धि कर जोड़ने पर दाह संस्कार की मद में यह राशि 24,000/- रुपए होती है । इसी प्रकार पति को सहजीवन की क्षति के मद में

40,000/- रुपए की राशि में दस प्रतिशत यानि 4,000/- रुपए प्रत्येक तीन वर्ष में वृद्धि कर जोड़ने पर इस मद में यह राशि 64,000/- रुपए होती है । जहां तक मृतक की आश्रितों को मृतक के स्नेह वंचना में दिलाई गई 2,000/- रुपए की राशि को क्षतिपूर्ति राशि से कम किए जाने के क्रम में योग्य अधिवक्ता प्रत्यर्थी के तर्क का प्रश्न है, इस क्रम में इस न्यायालय के विनम्र मत में पारम्परिक मद की परिभाषा यद्यपि न्याय दृष्टांत राजेश बनाम राजबीर के मामले में विवेचित है तथा इसमें प्रेम व स्नेह की मद को पारम्परिक मद की श्रेणी में अंकित किया गया है, किन्तु न्याय दृष्टांत नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लि. बनाम प्रणय सेठी और अन्य में माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस मद को पारम्परिक मदों में नहीं माना गया है । ऐसी स्थिति में अधीनस्थ न्यायालय द्वारा इस मद में दिलाई गई राशि को पारम्परिक मदों में नहीं माना जाकर इस मद में किसी प्रकार की क्षतिपूर्ति राशि क्लेमेंट को दिलाया जाना उचित नहीं है । अधीनस्थ न्यायालय द्वारा अपीलार्थीगण क्लेमेंट को अवार्ड की गई राशि 9,50,000/- रुपए दिलाई गई है, जिसको उपरोक्तानुसार बढ़ाकर 15,77,328/- रुपए किया जाता है । योग्य अधिवक्ता अपीलार्थी की ओर से ब्याज के क्रम में न्याय दृष्टांत नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम प्रणय सेठी और अन्य और राजेश बनाम राजबीर में प्रतिपादित सिद्धांतों की रोशनी में बढ़ी हुई क्षतिपूर्ति राशि पर ब्याज दर, ब्याज प्राप्त करने की तारीख तथा क्षतिपूर्ति राशि के आनुपातिक वितरण के क्रम में समस्त शर्तें अधीनस्थ न्यायालय के आदेशानुसार प्रभावी रहेंगी । (पैरा 9, 10, 12, 13, 14, 15 और 17)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2015] (2015) 2015 ए. सी. जे. 598 :
नीता और अन्य बनाम **डिवीजनल मैनेजर, महाराष्ट्र राज्य सड़क परिवहन निगम** ; 3

[2015] (2015) डी. एन. जे. 2015 एस. सी. 589 :
मुन्ना लाल बनाम **विपिन कुमार** ; 3

[2014] (2014) विशेष इजाजत याचिका (सिविल) संख्या 25590/2014 :
नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम **प्रणय सेठी और अन्य** ; 3, 4

[2013] (2013) 2013 टी. ए. सी. (एस. सी.) 369 :
रेशमा कुमारी और अन्य बनाम **मदन मोहन और अन्य** ; 3

[2012] (2012) ए. आई. आर. 2012 एस. सी. 2085 :
संतोष देवी बनाम **नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** ; 3

[2009] (2009) ए. आई. आर. 2009 एस. सी. 3104 :
सरला वर्मा बनाम **दिल्ली परिवहन निगम** । 3, 5

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2005 की एकल न्यायपीठ सिविल प्रकीर्ण अपील संख्या 683 और 635.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री सुरेश शर्मा

प्रत्यर्थी की ओर से श्री वी. पी. माथूर

न्यायमूर्ति महेन्द्र माहेश्वरी – अधीनस्थ न्यायालय, मोटर दुर्घटना वाद न्यायाधिकरण और अपर जिला एवं सेशन न्यायाधीश क्रम-9, जयपुर नगर, जयपुर द्वारा मोटर दुर्घटना वाद प्रकरण संख्या 75/2004 (281/2000) में पारित निर्णय तारीख 29 नवम्बर, 2004, के निर्णय जिसके तहत आश्रितों/क्यों-क्यों अपीलार्थियों की ओर से प्रस्तुत क्लेम याचिका निस्तारित की जाकर श्री राम शर्मा की मोटर दुर्घटना में मृत्यु के परिणामस्वरुप कुल 9,50,000/- रुपए क्षतिपूर्ति राशि दिलाई गई, को अपर्याप्त मानते हुए क्षतिपूर्ण राशि को बढ़ाए जाने हेतु अपीलार्थीगण-क्लेमेण्ट्स की ओर से उपरोक्तानुसार अलग-अलग अपीलें पेश की गई हैं । चूंकि दोनों ही अपीलें अधिनस्थ न्यायालय द्वारा पारित एक ही निर्णय

के विरुद्ध प्रस्तुत हुई हैं, अतः इनका निस्तारण एक साथ किया जा रहा है ।

2. अपीलार्थीगण-क्लेमेण्ट्स ने विद्वान् अधीनस्थ अधिकरण में धारा 166 मोटर यान अधिनियम के तहत क्लेम आवेदन प्रस्तुत कर तारीख 1 दिसम्बर, 1999 को हुई मोटर दुर्घटना में श्री-राम शर्मा की मृत्यु होने के परिणामस्वरूप क्षतिपूर्ण राशि प्राप्त करने के क्रम में क्लेम प्रार्थना-पत्र प्रस्तुत कर विभिन्न मदों में क्षतिपूर्ति राशि दिलाए जाने की प्रार्थना की गई । विद्वान् अधीनस्थ न्यायालय द्वारा बनाए गए विवाद्यकों के क्रम में दोनों पक्षों के तर्क सुनने एवं पत्रावली पर उपलब्ध मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य के आधार पर आक्षेपित पंचाट द्वारा क्षतिपूर्ति राशि दिलाई गई, जिसके विरुद्ध अपीलार्थीगण-क्लेमेंटस की ओर से अलग-अलग अपीलें पेश की गई हैं ।

3. बहस सुनी गई । योग्य अधिवक्ता अपीलार्थीगण का कथन रहा कि मृतक वाणिज्य कर विभाग में वाणिज्यक कर अधिकारी के पद पर कार्यरत था । अधीनस्थ न्यायालय ने मृतक की आय 7,194/- रुपए मासिक मानी है जबकी मृतक के वेतन प्रमाण पत्र प्रदर्श पी.11 के अनुसार उसका मासिक वेतन 8,162/- रुपए प्रभावित है । अतः मृतक की 8,162/- रुपए मासिक आय के आधार पर क्षतिपूर्ति राशि का निर्धारण किया जाना चाहिए । उन्होंने दाह संस्कार की मद में अधीनस्थ न्यायालय द्वारा दिलाई गई राशि 2,000/- रुपए को बढ़ाकर 15,000/- रुपए करने और मृतक की पत्नी को पति सुख वंचना की मद में दिलाई गई 5,000/- रुपए की राशि को बढ़ाकर 40,000/- रुपए करने तथा उससे प्रत्येक तीन वर्ष में दस प्रतिशत की बढ़ोत्तरी कर राशि दिलाए जाने का निवेदन किया । उनका यह भी कथन रहा कि अधीनस्थ न्यायालय ने भविष्यवर्ती आय की मद में कोई राशि नहीं दिलाई है । जबकि मृतक एक सरकारी कर्मचारी था । अतः इस मद में भी 50 प्रतिशत राशि दिलाई जाए । अपने तर्कों के समर्थन में अपीलार्थी के विद्वान् अधिवक्ता द्वारा न्याय दृष्टान्त **सरला वर्मा** बनाम **दिल्ली**

परिवहन निगम[1], **संतोष देवी** बनाम **नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड**[2], **मुन्ना लाल** बनाम **विपिन कुमार**[3], **रेशमा कुमारी और अन्य** बनाम **मदन मोहन और अन्य**[4], **नीता और अन्य** बनाम **डिवीजनल मैनेजर, महाराष्ट्र राज्य सड़क परिवहन निगम**[5] और **नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** बनाम **प्रणय सेठी और अन्य**[6] वाले मामलों में पारित निर्णय तारीख 31 अक्तूबर, 2017 में प्रतिपादित सिद्धान्त के अनुसार क्षतिपूर्ति राशि बढ़ाए जाने और प्रार्थना की गई है ।

4. योग्य अधिवक्ता प्रत्यर्थी बीमा कम्पनी के क्रोस ओब्जेक्शन के रूप में कानूनी तर्क की न्याय दृष्टान्त **नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** बनाम **प्रणय सेठी और अन्य** (उपरोक्त) वाले मामले में प्रतिपादित सिद्धान्त के अनुसार यदि अपीलार्थी को भविष्यवर्ती आय और अन्य मदों में राशि दिलाई जाती है तो उसी न्याय दृष्टांत की रोशनी में प्रतिपादित सिद्धांतों के तहत अधीनस्थ न्यायालय द्वारा क्लेमेण्ट को पिता के स्नेह वंचना की मद में दिलाई गई राशि 2,000/- रुपए कुल क्षतिपूर्ति राशि में से कम किया जाए ।

5. योग्य अधिवक्ता प्रत्यर्थी का यह भी तर्क रहा है कि अधीनस्थ न्यायालय द्वारा मृतक की 36 वर्ष आयु को मद्देनेजर रखते हुए 16 का गुणांक का उपयोग लिया है । जबकि न्याय दृष्टांत **सरला वर्मा** बनाम **दिल्ली परिवहन निगम**[7] वाले मामले के अनुसार मृतक की आयु को ध्यान में रखते हुए 15 के गुणक का उपयोग में लिया जाना चाहिए ।

6. योग्य अधिवक्ता प्रत्यर्थी का यह भी तर्क रहा है कि मृतक को देय क्षतिपूर्ण राशि में से नियमानुसार आयकर की कटौती की जाए ।

---

[1] ए. आई. आर. 2009 एस. सी. 3104.

[2] ए. आई. आर. 2012 एस. सी. 2085.

[3] डी. एन. जे. 2015 एस. सी. 589.

[4] 2013 टी. ए. सी. (एस. सी.) 369.

[5] 2015 ए. सी. जे. 598.

[6] विशेष इजाजत याचिका (सिविल) संख्या 25590/2014.

[7] ए. आई. आर. 2009 एस. सी. 3104.

7. दोनों पक्षों के योग्य अधिवक्तागण के तर्क सुने गए एवं विद्वान् अधीनस्थ न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित अवार्ड और अभिलेख का अवलोकन किया गया ।

8. योग्य अधिवक्ता अपीलार्थी एवं प्रत्यर्थी ने माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित (उपरोक्त) निर्णय तारीख 31 अक्तूबर, 2017 **नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** बनाम **प्रणय सेठी और अन्य** (उपरोक्त) वाले मामले की रोशनी में विभिन्न मदों में क्षतिपूर्ण राशि बढ़ाने व घटाने हेतु जो तर्क प्रस्तुत किए गए हैं, उन तर्कों की रोशनी में अपील को क्लेम आवेदन की निरन्तरता में मानते हुए दुर्घटना घटित होने के समय को मद्देनजर रखते हुए उक्त न्याय दृष्टान्त में प्रतिपादित सिद्धान्तों की रोशनी क्लेम आवेदन में चाहे गए अनुतोष के अनुरूप राशि का निर्धारण निम्न प्रकार किया जाता है ।

आश्रितों को आय की हानि के क्रम में :

9. जहां तक मृतक की आय का प्रश्न है, विद्वान् अधिवक्ता अपीलार्थीगण द्वारा मृतक की आय के क्रम में जो तथ्य प्रस्तुत किए गए है उनके अनुसार मृतक के वेतन प्रमाण पत्र प्रदर्श पी.11 में मृतक की समस्त आय मय भत्तों के 8,162/- रुपए मासिक बताई गई है, जिसे अधीनस्थ न्यायालय ने मृतक को मात्र 3,000/- रुपए ग्रेड मिलने के आधार पर मृतक की मासिक आय 7,194/- रुपए मानी है । इस न्यायालय के मत में मृतक की पत्नी को अन्य कोई लाभ प्राप्त होना प्रकट हुआ है तब भी आय को मद्देनजर रखते हुए आय की क्षति की गणना किया जाना न्यायोचित है अतः मृतक की 8,162/- रुपए प्रतिमाह के हिसाब से आय की गणना किया जाना न्यायोचित है ।

10. अधीनस्थ न्यायालय ने 16 का गुणांक उपयोग में लिया है, जबकि मृतक की मृत्यु के समय 36 वर्ष की आयु को ध्यान में रखते हुए माननीय उच्चतम न्यायालय के दृष्टान्त **सरला वर्मा** बनाम **दिल्ली परिवहन निगम** (उपरोक्त) वाले मामले में प्रतिपादित सिद्धान्तों की रोशनी में 16 के स्थान पर 15 का गुणांक उपयोग में लिया जाना उचित है ।

11. इस प्रकार मृतक की दुर्घटना में मृत्यु के परिणामस्वरूप आय की क्षति की गणना निम्न प्रकार की जाती है ।

मृतक की वार्षिक आय	8,162
वार्षिक आय	8,162×12=97,944
आयु की गंणना के क्रम में गुणांक 15	97,944×15=14,69,160
मृतक पर खर्च होने वाली कटौती 1/3	14,69,160×1/3=48,9,720
आय की क्षति की राशि-	14,69,160-48,9,720=9,79,440

12. इस प्रकार आय की क्षति की मद में 9,79,440/- रुपए की राशि निर्धारित की जाती है । अधीनस्थ न्यायालय द्वारा इस मद में 9,20,832/- रुपए की बढ़ोतरी की जाती है ।

भविष्य की संभावनाओं की मद

13. जहां तक इस मद (भविष्यवर्ती आय) की क्षतिपूर्ति राशि का प्रश्न है, इस क्रम में ऊपर किए गए विवेचन से आय की क्षति के मद में 9,79,440/- रुपए की राशि निर्धारित की गई है । ऐसी स्थिति में **नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** बनाम **प्रणय सेठी और अन्य** (उपरोक्त) वाले मामले की रोशनी में मृतक की आयु 36 वर्ष होने व मृतक के सरकारी कर्मचारी होने के तथ्य को ध्यान में रखते हुए आय की क्षति की पचास प्रतिशत राशि भविष्य की संभावनाओं के मद में देय होगी, जो गणना करने पर 48,9,720/- रुपए होती है ।

मृतक की मृत्यु के परिणामस्वरूप पारम्परिक मदों में प्रतिकर :

14. चूंकि न्याय दृष्टांत **नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** बनाम **प्रणय सेठी और अन्य** (उपरोक्त) वाले मामले में प्रतिपादित सिद्धांत की रोशनी में अपीलार्थीगण को भविष्यवर्ती आय की मद में राशि दिलाई गई है । ऐसी स्थिति में उक्त न्याय दृष्टांत में प्रतिपादित सिद्धांतों को सम्पूर्ण रूप से इस मामले में लागू किया जाना उचित है । अतः उक्त न्याय दृष्टांत की रोशनी में पारम्परिक मदों के तहत अधीनस्थ न्यायालय द्वारा दिलाए गए दाह संस्कार के मद की 2,000/- रुपए

वृद्धि करते हुए 15,000/- रुपए और मृतक की पत्नी को सहजीवन क्षति की मद में दिलाए गए 5,000/- रुपए की वृद्धि करते हुए 40,000/- रुपए की राशि निर्धारित की जाती है । साथ ही उक्त दृष्टांत में प्रतिपादित सिद्धांतों के तहत इन मदों में प्रत्येक तीन वर्ष में दस प्रतिशत की वृद्धि किया जाना भी उचित है । वर्तमान मामले में घटना 30 नवंबर, 1999 की है, जिसको 18 वर्ष व्यतीत हो चुक हैं । अतः दाह संस्कार की मद में 15,000/- रुपए की राशि में दस प्रतिशत यानि 1,500/- रुपए प्रत्येक वर्ष में वृद्धि कर जोड़ने पर दाह संस्कार की मद में यह राशि 24,000/- रुपए होती है । इसी प्रकार पति को सहजीवन की क्षति के मद में 40,000/- रुपए की राशि में दस प्रतिशत यानि 4,000/- रुपए प्रत्येक तीन वर्ष में वृद्धि कर जोड़ने पर इस मद में यह राशि 64,000/- रुपए होती है ।

15. जहां तक मृतक की आश्रितों को मृतक के स्नेह वंचना में दिलाई गई 2,000/- रुपए की राशि को क्षतिपूर्ति राशि से कम किए जाने के क्रम में योग्य अधिवक्ता प्रत्यर्थी के तर्क का प्रश्न है, इस क्रम में इस न्यायालय के विनम्र मत में पारम्परिक मद की परिभाषा यद्यपि न्याय दृष्टांत राजेश बनाम राजबीर के मामले में विवेचित है तथा इसमें प्रेम व स्नेह की मद को पारम्परिक मद की श्रेणी में अंकित किया गया है, किन्तु न्याय दृष्टांत **नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** बनाम **प्रणय सेठी और अन्य** (उपरोक्त) वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस मद को पारम्परिक मदों में नहीं माना गया है । ऐसी स्थिति में अधीनस्थ न्यायालय द्वारा इस मद में दिलाई गई राशि को पारम्परिक मदों में नहीं माना जाकर इस मद में किसी प्रकार की क्षतिपूर्ति राशि दावेदार को दिलाया जाना उचित नहीं है ।

16. अतः अधीनस्थ न्यायालय द्वारा क्लेमेंट को दिलाई गई क्षतिपूर्ति राशि में उपरोक्तानुसार वृद्धि/कमी करते हुए क्लेमेंट निम्नानुसार क्षतिपूर्ति राशि प्राप्त करने के अधिकाकरी है :

क्रम स.	मद	क्षतिपूर्ति राशि
1.	आय की क्षति में	97,9,440/-
2.	भविष्य की संभावनाओं की मद में	489720/-
3.	मृतक के आश्रितों को स्नेह से वंचित रहने के प्रतिकर	कुछ नहीं
4.	दाह संस्कार व्यय	24,000/-
5.	सहजीवन की क्षति	64,000/-
6	दवाइयों के बिल	20,168/-
	कुल राशि	15,77,328

17. अधीनस्थ न्यायालय द्वारा अपीलार्थीगण-क्लेमेंट को अवार्ड की गई राशि 9,50,000/- रुपए दिलाई गई है, जिसको उपरोक्तानुसार बढ़ाकर 15,77,328/- रुपए किया जाता है । योग्य अधिवक्ता अपीलार्थी की ओर से ब्याज के क्रम में न्याय दृष्टांत **नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** बनाम **प्रणय सेठी और अन्य** (उपरोक्त) वाले मामले और राजेश बनाम राजबीर में प्रतिपादित सिद्धांतों की रोशनी में बढ़ी हुई क्षतिपूर्ति राशि पर ब्याज दर, ब्याज प्राप्त करने की तारीख तथा क्षतिपूर्ति राशि के आनुपातिक वितरण के क्रम में समस्त शर्तें अधीनस्थ न्यायालय के आदेशानुसार प्रभावी रहेंगी ।

18. जहां तक आयकर कटौती का प्रश्न है, क्लेमेंटस को प्राप्त होने वाली राशि का नियमानुसार यदि कोई आयकर देय होता है तो क्लेमेंटर आयकर विभाग में जमा कराने के लिए दायी होंगे । तद्नुसार उक्त दोनों अपीलें उपरोक्तानुसार निस्तारित की जाकर अधीनस्थ न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय/पंचाट में क्षतिपूर्ति राशि के क्रम में उपरोक्तानुसार संशोधन किया जाता है ।

अपीलों का निपटारा किया गया ।

महीं./शु.

संसद् के अधिनियम

सीमित दायित्व भागीदारी अधिनियम, 2008

(2009 का अधिनियम संख्यांक 6)

[7 जनवरी, 2009]

सीमित दायित्व भागीदारी की विरचना और विनियमन का तथा उनसे संबंधित या उनके आनुषंगिक विषयों का उपबंध करने के लिए अधिनियम

भारत गणराज्य के उनसठवें वर्ष में संसद् द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो :-

अध्याय 1

प्रारंभिक

1. संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारंभ - (1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम सीमित दायित्व भागीदारी अधिनियम, 2008 है ।

(2) इसका विस्तार संपूर्ण भारत पर है ।

(3) यह उस तारीख को प्रवृत्त होगा, जो केंद्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, नियत करे :

परंतु इस अधिनियम के भिन्न-भिन्न उपबंधों के लिए भिन्न-भिन्न तारीखें नियत की जा सकेंगी और किसी ऐसे उपबंध में इस अधिनियम के प्रारंभ के प्रति किसी निर्देश का यह अर्थ लगाया जाएगा कि वह उस उपबंध के प्रवृत्त होने के प्रतिनिर्देश है ।

2. परिभाषाएं - (1) इस अधिनियम में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, -

(क) सीमित दायित्व भागीदारी के भागीदार के संबंध में "पते" से निम्नलिखित अभिप्रेत है -

(i) यदि व्यष्टि है तो उसके प्रायिक निवास स्थान का पता ; और

(ii) यदि निगम निकाय है तो उसके रजिस्ट्रीकृत कार्यालय का पता ;

(ख) "अधिवक्ता" से अधिवक्ता अधिनियम, 1961 (1961 का 25) की धारा 2 की उपधारा (1) के खंड (क) में यथापरिभाषित अधिवक्ता अभिप्रेत है ;

(ग) "अपील अधिकरण" से कंपनी अधिनियम, 1956 (1956 का 1) की धारा 10चद की उपधारा (1) के अधीन गठित राष्ट्रीय कंपनी विधि अपील अधिकरण अभिप्रेत है ;

(घ) "निगम निकाय" से कंपनी अधिनियम, 1956 (1956 का 1) की धारा 3 में यथापरिभाषित कंपनी अभिप्रेत है और इसके अंतर्गत निम्नलिखित भी हैं –

(i) इस अधिनियम के अधीन रजिस्ट्रीकृत सीमित दायित्व भागीदारी ;

(ii) भारत के बाहर निगमित सीमित दायित्व भागीदारी ; और

(iii) भारत के बाहर निगमित कंपनी,

किंतु इसके अंतर्गत निम्नलिखित नहीं हैं –

(i) एकल निगम ;

(ii) तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन रजिस्ट्रीकृत सहकारी सोसाइटी ; और

(iii) कोई अन्य निगम निकाय [जो कंपनी अधिनियम, 1956 (1956 का 1) की धारा 3 में यथापरिभाषित कंपनी या इस अधिनियम में यथापरिभाषित सीमित दायित्व भागीदारी नहीं है], जो केंद्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, इस निमित्त विनिर्दिष्ट करे ;

(ङ) "कारबार" में प्रत्येक व्यापार, वृत्ति, सेवा और उपजीविका सम्मिलित हैं ;

(च) "चार्टर्ड अकाउंटेंट" से चार्टर्ड अकाउंटेंट अधिनियम, 1949 (1949 का 38) की धारा 2 की उपधारा (1) के खंड (ख) में यथापरिभाषित चार्टर्ड अकाउंटेंट अभिप्रेत है जिसने उस अधिनियम की धारा 6 की उपधारा (1) के अधीन व्यवसाय प्रमाणपत्र अभिप्राप्त कर लिया है ;

(छ) "कंपनी सचिव" से कंपनी सचिव अधिनियम, 1980 (1980 का 56) की धारा 2 की उपधारा (1) के खंड (ग) में यथापरिभाषित कंपनी सचिव अभिप्रेत है जिसने उस अधिनियम की धारा 6 की उपधारा (1) के अधीन व्यवसाय प्रमाणपत्र अभिप्राप्त कर लिया है ;

(ज) "लागत लेखापाल" से लागत और संकर्म लेखापाल अधिनियम, 1959 (1959 का 23) की धारा 2 की उपधारा (1) के खंड (ख) में यथापरिभाषित कोई लागत लेखापाल अभिप्रेत है जिसने उस अधिनियम की धारा 6 की उपधारा (1) के अधीन व्यवसाय प्रमाणपत्र अभिप्राप्त कर लिया है ;

(झ) इस अधिनियम के अधीन किसी अपराध के संबंध में "न्यायालय" से धारा 77 के उपबंधों के अनुसार अधिकारिता रखने वाला न्यायालय अभिप्रेत है ;

(ञ) "अभिहित भागीदार" से धारा 7 के अनुसरण में भागीदार के रूप में अभिहित कोई भागीदार अभिप्रेत है ;

(ट) "अस्तित्व" से कोई निगम निकाय अभिप्रेत है और धारा 18, धारा 46, धारा 47, धारा 48, धारा 49, धारा 50, धारा 52 और धारा 53 के प्रयोजनों के लिए इसके अंतर्गत भारतीय भागीदारी अधिनियम, 1932 (1932 का 9) के अधीन स्थापित फर्म भी है ;

(ठ) सीमित दायित्व भागीदारी के संबंध में "वित्तीय वर्ष" से वर्ष की 1 अप्रैल से आगामी वर्ष की 31 मार्च तक की अवधि अभिप्रेत है :

परंतु वर्ष की 30 सितंबर के पश्चात् निगमित सीमित दायित्व भागीदारी की दशा में, वित्तीय वर्ष, उस वर्ष के अगले आगामी वर्ष की 31 मार्च को समाप्त हो सकेगा ;

(ङ) "विदेशी सीमित दायित्व भागीदारी" से भारत के बाहर विरचित, निगमित या रजिस्ट्रीकृत सीमित दायित्व भागीदारी अभिप्रेत है और जो भारत के भीतर कारबार का कोई स्थान स्थापित करती है ;

(ढ) "सीमित दायित्व भागीदारी" से इस अधिनियम के अधीन विरचित और रजिस्ट्रीकृत भागीदारी अभिप्रेत है ;

(ण) "सीमित दायित्व भागीदारी करार" से सीमित दायित्व भागीदारी के भागीदारों के बीच या सीमित दायित्व भागीदारी और उसके भागीदारों के बीच कोई लिखित करार अभिप्रेत है, जो भागीदारों के पारस्परिक अधिकारों और कर्तव्यों तथा उस सीमित दायित्व भागीदारी के संबंध में उनके अधिकारों और कर्तव्यों का अवधारण करता है ;

(त) सीमित दायित्व भागीदारी के भागीदार के संबंध में "नाम" से निम्नलिखित अभिप्रेत है –

(i) यदि व्यष्टि है तो उसका मुख्य नाम, मध्य नाम और उपनाम ; और

(ii) यदि निगम निकाय है तो उसका रजिस्ट्रीकृत नाम ;

(थ) सीमित दायित्व भागीदारी के संबंध में "भागीदार" से ऐसा कोई व्यक्ति अभिप्रेत है, जो सीमित दायित्व भागीदारी करार के अनुसार सीमित दायित्व भागीदारी में भागीदार बनता है ;

(द) "विहित" से इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा विहित अभिप्रेत है ;

(ध) "रजिस्ट्रार" से कंपनी अधिनियम, 1956 (1956 का 1) के अधीन कंपनियों को रजिस्ट्रीकृत करने के कर्तव्य वाला

रजिस्ट्रार, या अपर, संयुक्त, उप या सहायक रजिस्ट्रार अभिप्रेत है ;

(न) "अनुसूची" से इस अधिनियम की अनुसूची अभिप्रेत है ;

(प) "अधिकरण" से कंपनी अधिनियम, 1956 (1956 का 1) की धारा 10चख की उपधारा (1) के अधीन गठित राष्ट्रीय कंपनी विधि अधिकरण अभिप्रेत है ।

(2) उन शब्दों और पदों के, जो इस अधिनियम में प्रयुक्त हैं और परिभाषित नहीं हैं, किंतु कंपनी अधिनियम, 1956 (1956 का 1) में परिभाषित हैं, वही अर्थ हैं जो उस अधिनियम में हैं ।

अध्याय 2

सीमित दायित्व भागीदारी की प्रकृति

3. सीमित दायित्व भागीदारी का निगम निकाय होना – (1) सीमित दायित्व भागीदारी ऐसा निगम निकाय है, जिसे इस अधिनियम के अधीन विरचित और निगमित किया गया है तथा जिसका इसके भागीदारों से पृथक् विधिक अस्तित्व है ।

(2) सीमित दायित्व भागीदारी का शाश्वत् उत्तराधिकार होगा ।

(3) सीमित दायित्व भागीदारी के भागीदारों में किसी परिवर्तन से सीमित दायित्व भागीदारी की विद्यमानता, अधिकार या दायित्व प्रभावित नहीं होंगे ।

4. भारतीय भागीदारी अधिनियम, 1932 का लागू न होना – जैसा अन्यथा उपबंधित है, उसके सिवाय, भारतीय भागीदारी अधिनियम, 1932 (1932 का 9) के उपबंध सीमित दायित्व भागीदारी को लागू नहीं होंगे ।

5. भागीदार – कोई व्यष्टि या निगम निकाय सीमित दायित्व भागीदारी का भागीदार हो सकेगा :

परंतु व्यष्टि सीमित दायित्व भागीदारी का भागीदार होने के लिए समर्थ नहीं होगा, यदि, –

(क) वह सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय द्वारा विकृतचित्त

पाया गया है और ऐसा निष्कर्ष प्रवर्तन में है ;

(ख) वह अनुन्मोचित दिवालिया है ; या

(ग) उसने दिवालिया न्यायनिर्णीत किए जाने के लिए आवेदन किया है और उसका आवेदन लंबित है ।

6. भागीदारों की न्यूनतम संख्या – (1) प्रत्येक सीमित दायित्व भागीदारी में कम से कम दो भागीदार होंगे ।

(2) यदि किसी समय सीमित दायित्व भागीदारी के भागीदारों की संख्या दो से कम हो जाती है और सीमित दायित्व भागीदारी इस प्रकार संख्या के कम होने के दौरान छह मास से अधिक के लिए कारबार जारी रखती है, तो वह व्यक्ति, जो उस समय के दौरान सीमित दायित्व भागीदारी का एकमात्र भागीदार है जब वह उन छह मास के पश्चात् इस प्रकार कारबार करता रहा है और उसे उस तथ्य की जानकारी है कि वह अकेला ही उसका कारबार चला रहा है, तो वह उस अवधि के दौरान सीमित दायित्व भागीदारी को उपगत बाध्यताओं के लिए व्यक्तिगत रूप से दायी होगा ।

7. अभिहित भागीदार – (1) प्रत्येक सीमित दायित्व भागीदारी के कम से कम दो अभिहित भागीदार होंगे, जो व्यष्टि हों और उनमें से कम से कम एक भारत में निवासी होगा :

परंतु ऐसी सीमित दायित्व भागीदारी की दशा में, जिसमें सभी भागीदार निगम निकाय हैं या जिसमें एक या अधिक भागीदार व्यष्टि और निगम निकाय हैं, कम से कम दो व्यष्टि जो ऐसी सीमित दायित्व भागीदारी के भागीदार हैं या ऐसे निगम निकायों के नामनिर्देशिती हैं, अभिहित भागीदारों के रूप में कार्य करेंगे ।

स्पष्टीकरण – इस धारा के प्रयोजन के लिए "भारत में निवासी" पद से ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जो ठीक पूर्ववर्ती एक वर्ष के दौरान एक सौ बयासी दिन से अन्यून की अवधि के लिए भारत में ठहरा है ।

(2) उपधारा (1) के उपबंधों के अधीन रहते हुए, –

(i) यदि निगमन दस्तावेज, –

(क) यह विनिर्दिष्ट करता है कि अभिहित भागीदार कौन होंगे तो ऐसे व्यक्ति निगमन पर अभिहित भागीदार होंगे ; या

(ख) यह कथन करता है कि सीमित दायित्व भागीदारी का प्रत्येक भागीदार समय-समय पर अभिहित भागीदार होगा तो प्रत्येक ऐसा भागीदार अभिहित भागीदार होगा ;

(ii) कोई भागीदार, सीमित दायित्व भागीदारी करार द्वारा और उसके अनुसार अभिहित भागीदार बन सकेगा और कोई भागीदार सीमित दायित्व भागीदारी करार के अनुसार अभिहित भागीदार नहीं रहेगा ।

(3) कोई व्यष्टि किसी सीमित दायित्व भागीदारी में तभी अभिहित भागीदार होगा जब उसने सीमित दायित्व भागीदारी में उस रूप में कार्य करने के लिए ऐसे प्ररूप और ऐसी रीति में जो विहित की जाए, पूर्व सहमति दे दी हो ।

(4) प्रत्येक सीमित दायित्व भागीदारी ऐसे प्रत्येक व्यष्टि की, जिसने अभिहित भागीदार के रूप में कार्य करने के लिए अपनी पूर्व सहमति अपनी नियुक्ति के तीस दिन के भीतर ऐसे प्ररूप और ऐसी रीति में, जो विहित की जाए, दे दी है, विशिष्टियां रजिस्ट्रार के पास फाइल करेगा ।

(5) अभिहित भागीदार होने के लिए पात्र व्यष्टि ऐसी शर्तों और अपेक्षाओं को जो विहित की जाएं, पूरा करेगा ।

(6) सीमित दायित्व भागीदारी का प्रत्येक अभिहित भागीदार केंद्रीय सरकार से अभिहित भागीदार पहचान संख्या अभिप्राप्त करेगा और उक्त प्रयोजन के लिए कंपनी अधिनियम, 1956 (1956 का 1) की धारा 266क से धारा 266छ (जिसमें दोनों धाराएं भी सम्मिलित हैं) के उपबंध यथा आवश्यक परिवर्तनों सहित लागू होंगे ।

8. अभिहित भागीदारों के दायित्व – जब तक कि इस अधिनियम

में अभिव्यक्त रूप से अन्यथा उपबंधित न हो, कोई अभिहित भागीदार –

(क) ऐसे सभी कार्यों, विषयों और बातों को करने के लिए उत्तरदायी होगा जो सीमित दायित्व भागीदारी द्वारा इस अधिनियम के उपबंधों के अनुपालन की बाबत की जानी अपेक्षित हैं, जिसके अंतर्गत इस अधिनियम के उपबंधों के अनुसरण में ऐसे किसी दस्तावेज, विवरणी, विवरण और इसी प्रकार की रिपोर्ट को जो सीमित दायित्व भागीदारी करार में विनिर्दिष्ट किया जाए, फाइल करना भी है ; और

(ख) उन उपबंधों के किसी उल्लंघन के लिए सीमित दायित्व भागीदारी पर अधिरोपित सभी शास्तियों के लिए दायी होगा ।

9. अभिहित भागीदारों में परिवर्तन – सीमित दायित्व भागीदारी किसी कारण से हुई रिक्ति के तीस दिन के भीतर अभिहित भागीदार को नियुक्त कर सकेगी और धारा 7 की उपधारा (4) और उपधारा (5) के उपबंध ऐसे नए अभिहित भागीदार के संबंध में लागू होंगे :

परंतु यदि कोई अभिहित भागीदार नियुक्त नहीं किया जाता है या यदि किसी समय केवल एक अभिहित भागीदार है तो प्रत्येक भागीदार अभिहित भागीदार समझा जाएगा ।

10. धारा 7, धारा 8 और धारा 9 के उल्लंघन के लिए दंड – (1) यदि सीमित दायित्व भागीदारी धारा 7 की उपधारा (1) के उपबंधों का उल्लंघन करती है तो सीमित दायित्व भागीदारी और उसका प्रत्येक भागीदार जुर्माने से, जो दस हजार रुपए से कम का नहीं होगा, किंतु जो पांच लाख रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा ।

(2) यदि सीमित दायित्व भागीदारी, धारा 7 की उपधारा (4) और उपधारा (5), धारा 8 या धारा 9 के उपबंधों का उल्लंघन करती है, तो सीमित दायित्व भागीदारी और उसका प्रत्येक भागीदार जुर्माने से, जो दस हजार रुपए से कम का नहीं होगा, किंतु जो एक लाख रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा ।

अध्याय 3

सीमित दायित्व भागीदारी का निगमन और उसके आनुषंगिक विषय

11. निगमन दस्तावेज – (1) निगमित की जाने वाली सीमित दायित्व भागीदारी के लिए, –

(क) लाभ की दृष्टि से किसी विधि युक्त कारबार को चलाने के लिए सहयोजित दो या अधिक व्यक्ति निगमन दस्तावेज पर अपने नाम हस्ताक्षरित करेंगे ;

(ख) निगमन दस्तावेज ऐसी रीति में और ऐसी फीस के साथ, जो विहित की जाए, उस राज्य के रजिस्ट्रार के पास फाइल किया जाएगा, जिसमें सीमित दायित्व भागीदारी का रजिस्ट्रीकृत कार्यालय अवस्थित है ; और

(ग) निगमन दस्तावेज के साथ विहित प्ररूप में या तो किसी अधिवक्ता या कंपनी सचिव या चार्टर्ड अकाउंटेंट या लागत लेखापाल द्वारा, जो सीमित दायित्व भागीदारी की विरचना में लगा हुआ है और ऐसे किसी व्यक्ति द्वारा, जिसने निगमन दस्तावेज पर अपना नाम हस्ताक्षरित किया है, किया गया यह कथन फाइल किया जाएगा कि निगमन और उससे पूर्व के और उसके आनुषंगिक विषयों के संबंध में इस अधिनियम और उसके अधीन बनाए गए नियमों की सभी अपेक्षाओं का अनुपालन किया गया है ।

(2) निगमन दस्तावेज, –

(क) ऐसे प्ररूप में होगा, जो विहित किया जाए ;

(ख) सीमित दायित्व भागीदारी के नाम का कथन होगा ;

(ग) सीमित दायित्व भागीदारी के प्रस्तावित कारबार का कथन होगा ;

(घ) सीमित दायित्व भागीदारी के रजिस्ट्रीकृत कार्यालय के पते का कथन होगा ;

(ङ) ऐसे प्रत्येक व्यक्ति के, जो निगमन पर सीमित दायित्व

भागीदारी के भागीदार होंगे, नाम और पते का कथन होगा ;

(च) ऐसे व्यक्तियों के, जो निगमन पर सीमित दायित्व भागीदारी के अभिहित भागीदार होंगे, नाम और पते का कथन होगा ;

(छ) प्रस्तावित सीमित दायित्व भागीदारी से संबंधित ऐसी अन्य सूचना अंतर्विष्ट होगी, जो विहित की जाए ।

(3) यदि कोई व्यक्ति उपधारा (1) के खंड (ग) के अधीन ऐसा कथन करता है जिसके बारे में वह –

(क) यह जानता है कि वह मिथ्या है ; या

(ख) यह विश्वास नहीं करता है कि वह सही है,

तो वह कारावास से, जिसकी अवधि दो वर्ष तक की हो सकेगी और जुर्माने से, जो दस हजार रुपए से कम का नहीं होगा, किंतु जो पांच लाख रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा ।

12. रजिस्ट्रीकरण द्वारा निगमन – (1) जब धारा 11 की उपधारा (1) के खंड (ख) और खंड (ग) द्वारा अधिरोपित अपेक्षाओं का अनुपालन हो गया है तब रजिस्ट्रार निगमन दस्तावेज को रखेगा और जब तक उस उपधारा के खंड (क) द्वारा अधिरोपित अपेक्षा का अनुपालन नहीं किया जाता है तब तक वह चौदह दिन की अवधि के भीतर –

(क) निगमन दस्तावेज को रजिस्ट्रीकृत नहीं करेगा ; और

(ख) यह प्रमाणपत्र नहीं देगा कि सीमित दायित्व भागीदारी निगमन दस्तावेज में विनिर्दिष्ट नाम से निगमित की गई है ।

(2) रजिस्ट्रार, धारा 11 की उपधारा (1) के खंड (ग) के अधीन परिदत्त विवरण को पर्याप्त साक्ष्य के रूप में स्वीकार कर सकेगा कि उस उपधारा के खंड (क) द्वारा अधिरोपित अपेक्षा का अनुपालन कर दिया गया है ।

(3) उपधारा (1) के खंड (ख) के अधीन जारी प्रमाणपत्र रजिस्ट्रार द्वारा हस्ताक्षरित और उसकी कार्यालय मुद्रा द्वारा अधिप्रमाणित किया जाएगा ।

(4) प्रमाणपत्र इस बात का निर्णायक साक्ष्य होगा कि सीमित दायित्व भागीदारी उसमें विनिर्दिष्ट नाम से निगमित की गई है ।

13. सीमित दायित्व भागीदारी का रजिस्ट्रीकृत कार्यालय और उसमें परिवर्तन – (1) प्रत्येक सीमित दायित्व भागीदारी का एक रजिस्ट्रीकृत कार्यालय होगा जिसको सभी संसूचनाएं और सूचनाएं संबोधित की जा सकेंगी और जहां वे प्राप्त की जाएंगी ।

(2) किसी दस्तावेज की तामील सीमित दायित्व भागीदारी या उसके भागीदार या अभिहित भागीदार पर डाक में डाले जाने के प्रमाणपत्र के अधीन डाक द्वारा या रजिस्ट्रीकृत डाक द्वारा या ऐसी किसी अन्य रीति से, जो विहित की जाए, उसके रजिस्ट्रीकृत कार्यालय पर और ऐसे किसी अन्य पते पर, जो सीमित दायित्व भागीदारी द्वारा इस प्रयोजन के लिए विनिर्दिष्ट रूप से घोषित किया जाए, ऐसे प्ररूप और रीति में, जो विहित किए जाएं, भेजकर की जा सकेगी ।

(3) सीमित दायित्व भागीदारी अपने रजिस्ट्रीकृत कार्यालय के स्थान में परिवर्तन कर सकेगी, ऐसे परिवर्तन की सूचना रजिस्ट्रार के पास ऐसे प्ररूप और ऐसी रीति में और ऐसी शर्तों के अधीन रहते हुए जो विहित की जाए, फाइल कर सकेगी और ऐसा परिवर्तन इस प्रकार सूचना फाइल करने पर ही प्रभावी होगा ।

(4) यदि सीमित दायित्व भागीदारी इस धारा के किन्हीं उपबंधों का उल्लंघन करती है तो सीमित दायित्व भागीदारी और उसका प्रत्येक भागीदार जुर्माने से, जो दो हजार रुपए से कम का नहीं होगा, किंतु जो पच्चीस हजार रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा ।

14. रजिस्ट्रीकरण का प्रभाव – रजिस्ट्रीकरण पर, सीमित दायित्व भागीदारी अपने नाम से –

(क) वाद लाने और उसके विरुद्ध वाद लाए जाने ;

(ख) संपत्ति का, चाहे स्थावर हो या जंगम, मूर्त हो या अमूर्त, अर्जन करने, स्वामित्व रखने, धारण करने, विकास या व्ययन करने ;

(ग) यदि उसने एक मुद्रा रखने का विनिश्चय किया है तो सामान्य मुद्रा रखने ; और

(घ) ऐसे अन्य कार्यों और बातों को करने और कराने, जिन्हें निगम निकाय विधिमान्य रूप से कर या करा सकता है,

के लिए समर्थ होगी ।

15. नाम – (1) प्रत्येक सीमित दायित्व भागीदारी के नाम में या तो "सीमित दायित्व भागीदारी" शब्द या "सी. दा. भा." संक्षेपाक्षर, उसके नाम के अंतिम अक्षरों के रूप में होंगे ।

(2) कोई सीमित दायित्व भागीदारी ऐसे नाम से रजिस्ट्रीकृत नहीं की जाएगी जो केंद्रीय सरकार की राय में –

(क) अवांछनीय है ; या

(ख) किसी अन्य भागीदारी फर्म या सीमित दायित्व भागीदारी या निगम निकाय या रजिस्ट्रीकृत व्यापार चिह्न या ऐसे किसी व्यापार चिह्न के समरूप है या उससे बहुत कुछ मिलता-जुलता है, जो व्यापार चिह्न अधिनियम, 1999 (1999 का 47) के अधीन किसी अन्य व्यक्ति के रजिस्ट्रीकरण के लिए भी आवेदन की विषयवस्तु है ।

16. नाम का आरक्षण – (1) कोई व्यक्ति ऐसे प्ररूप और ऐसी रीति में और ऐसी फीस के साथ, जो विहित की जाएं, –

(क) प्रस्तावित सीमित दायित्व भागीदारी के नाम के रूप में ; या

(ख) उस नाम के रूप में जिसमें सीमित दायित्व भागीदारी अपने नाम का परिवर्तन करने का प्रस्ताव करती है,

आवेदन में उपवर्णित नाम के आरक्षण के लिए रजिस्ट्रार को आवेदन कर सकेगा ।

(2) उपधारा (1) के अधीन आवेदन की प्राप्ति पर और विहित फीस के संदाय पर, रजिस्ट्रार, इस विषय में केंद्रीय सरकार द्वारा विहित नियमों के अधीन रहते हुए, यदि उसका यह समाधान हो जाता है कि आरक्षित किया जाने वाला नाम वह नहीं है जिसे धारा 15 की उपधारा (2) में निर्दिष्ट किसी आधार पर खारिज किया जाए, रजिस्ट्रार

द्वारा सूचना की तारीख से तीन मास की अवधि के लिए नाम आरक्षित कर सकेगा ।

17. सीमित दायित्व भागीदारी के नाम का परिवर्तन – (1) धारा 15 और धारा 16 में किसी बात के होते हुए भी, जहां केंद्रीय सरकार का यह समाधान हो जाता है कि सीमित दायित्व भागीदारी किसी ऐसे नाम से रजिस्ट्रीकृत की गई है (चाहे अनवधानता से या अन्यथा और चाहे मूल रूप से या नाम में परिवर्तन द्वारा) जो –

(क) धारा 15 की उपधारा (2) में निर्दिष्ट नाम है ; या

(ख) किसी अन्य सीमित दायित्व भागीदारी या निगम निकाय या अन्य नाम के समरूप है या उससे इतना मिलता-जुलता है, जिससे भूल होने की संभावना है,

वहां केंद्रीय सरकार, ऐसी सीमित दायित्व भागीदारी को अपने नाम में परिवर्तन करने का निदेश दे सकेगी और सीमित दायित्व भागीदारी उक्त निदेश का, निदेश की तारीख के पश्चात् तीन मास के भीतर या ऐसी दीर्घतर अवधि के भीतर, जो केंद्रीय सरकार अनुज्ञात करे, पालन करेगी ।

(2) कोई ऐसी सीमित दायित्व भागीदारी जो, उपधारा (1) के अधीन दिए गए किसी निदेश का पालन करने में असफल रहती है, जुर्माने से जो दस हजार रुपए से कम का नहीं होगा किंतु जो पांच लाख रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगी और ऐसी सीमित दायित्व भागीदारी का अभिहित भागीदार जुर्माने से जो दस हजार रुपए से कम का नहीं होगा किंतु एक लाख रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा ।

18. कतिपय परिस्थितियों में नाम के परिवर्तन के निदेश के लिए आवेदन – (1) कोई अस्तित्व जिसका नाम पहले से ही किसी ऐसी सीमित दायित्व भागीदारी के, जिसे बाद में निगमित किया गया है, नाम के समरूप है, ऐसी रीति में जो विहित की जाए, धारा 17 में निर्दिष्ट आधार पर किसी सीमित दायित्व भागीदारी को अपना नाम परिवर्तन करने के लिए निदेश देने के लिए रजिस्ट्रार को आवेदन कर सकेगा ।

(2) रजिस्ट्रार, धारा 17 की उपधारा (1) के खंड (ख) में निर्दिष्ट आधार पर किसी सीमित दायित्व भागीदारी को कोई निदेश देने के लिए उपधारा (1) के अधीन किसी आवेदन पर तभी विचार करेगा जब रजिस्ट्रार को उस नाम से सीमित दायित्व भागीदारी के रजिस्ट्रीकरण की तारीख से चौबीस मास के भीतर आवेदन प्राप्त हुआ हो ।

19. रजिस्ट्रीकृत नाम का परिवर्तन – कोई सीमित दायित्व भागीदारी रजिस्ट्रार के पास रजिस्ट्रीकृत अपने नाम में ऐसे परिवर्तन की सूचना ऐसे प्ररूप और रीति में तथा ऐसी फीस के संदाय पर जो विहित की जाए, उसके पास फाइल करके परिवर्तन कर सकेगी ।

20. "सीमित दायित्व भागीदारी" या "सी. दा. भा." शब्दों के अनुचित प्रयोग के लिए शास्ति – यदि किसी व्यक्ति या किन्हीं व्यक्तियों द्वारा किसी ऐसे नाम या अभिनाम के अधीन कारबार चलाया जाता है जिसके अंत में "सीमित दायित्व भागीदारी" या "सी. दा. भा." शब्द या उनका कोई संक्षिप्त रूप या नकल शब्द हैं तो वह व्यक्ति या उनमें से प्रत्येक व्यक्ति जब तक सीमित दायित्व भागीदारी के रूप में सम्यक् रूप से निगमित नहीं किया गया है, जुर्माने से, जो पचास हजार रुपए से कम का नहीं होगा किंतु जो पांच लाख रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा ।

21. नाम और सीमित दायित्व का प्रकाशन – (1) प्रत्येक सीमित दायित्व भागीदारी यह सुनिश्चित करेगी कि उसके बीजकों, शासकीय पत्राचार और प्रकाशनों पर निम्नलिखित अंकित हो, अर्थात् :–

(क) सीमित दायित्व भागीदारी का नाम, उसके रजिस्ट्रीकृत कार्यालय का पता और रजिस्ट्रीकरण संख्या ; और

(ख) यह कथन कि यह सीमित दायित्व के साथ रजिस्ट्रीकृत है ।

(2) कोई सीमित दायित्व भागीदारी, जो उपधारा (1) के उपबंधों का उल्लंघन करती है, जुर्माने से, जो दो हजार रुपए से कम का नहीं होगा, किंतु जो पच्चीस हजार रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगी ।

अध्याय 4

भागीदार और उनके संबंध

22. भागीदार बनने के लिए पात्रता – सीमित दायित्व भागीदारी के निगमन पर, वे व्यक्ति जिन्होंने निगमन दस्तावेज पर अपने नाम हस्ताक्षरित किए हैं, उसके भागीदार होंगे और कोई अन्य व्यक्ति सीमित दायित्व भागीदारी करार द्वारा और उसके अनुसार सीमित दायित्व भागीदारी का भागीदार बन सकेगा ।

23. भागीदारों के संबंध – (1) इस अधिनियम में यथा उपबंधित के सिवाय सीमित दायित्व भागीदारी के भागीदारों के पारस्परिक अधिकार और कर्तव्य तथा सीमित दायित्व भागीदारी और उसके भागीदारों के पारस्परिक अधिकार और कर्तव्य भागीदारों के बीच या सीमित दायित्व भागीदारी और उसके भागीदारों के बीच सीमित दायित्व भागीदारी करार द्वारा शासित होंगे ।

(2) सीमित दायित्व भागीदारी करार और उसमें किए गए किन्हीं परिवर्तनों को यदि कोई हों, ऐसे प्ररूप और रीति में तथा ऐसी फीस के साथ, जो विहित की जाएं, रजिस्ट्रार के पास फाइल किया जाएगा ।

(3) उन व्यक्तियों के बीच, जो निगमन दस्तावेज पर अपना नाम हस्ताक्षरित करते हैं, सीमित दायित्व भागीदारी के निगमन से पूर्व लिखित में किया गया कोई करार सीमित दायित्व भागीदारी पर बाध्यताएं अधिरोपित कर सकेगा, परंतु यह तब जब ऐसे करार का सीमित दायित्व भागीदारी के निगमन के पश्चात् सभी भागीदारों द्वारा अनुसमर्थन कर दिया गया हो ।

(4) किसी विषय से संबंधित करार के अभाव में, भागीदारों के पारस्परिक अधिकारों और कर्तव्यों तथा सीमित दायित्व भागीदारी और भागीदारों के पारस्परिक अधिकारों और कर्तव्यों को उस विषय से संबंधित उपबंधों द्वारा जो पहली अनुसूची में उपवर्णित हैं, अवधारित किया जाएगा ।

24. भागीदारी हित का समाप्त हो जाना – (1) कोई व्यक्ति,

भागीदार न रहने के संबंध में अन्य भागीदारों के साथ किसी करार के अनुसार या अन्य भागीदारों के साथ करार के अभाव में, भागीदारी त्यागने के अपने आशय की अन्य भागीदारों को तीस दिन से अन्यून की लिखित में सूचना देकर सीमित दायित्व भागीदारी का भागीदार नहीं रह सकेगा ।

(2) कोई व्यक्ति, –

(क) अपनी मृत्यु या सीमित दायित्व भागीदारी के विघटन पर ; या

(ख) यदि उसे किसी सक्षम न्यायालय द्वारा विकृतचित्त घोषित कर दिया गया है ; या

(ग) यदि उसने दिवालिया के रूप में न्यायनिर्णीत होने के लिए आवेदन किया है या उसे दिवालिया के रूप में घोषित किए जाने पर,

किसी सीमित दायित्व भागीदारी का भागीदार नहीं रहेगा ।

(3) जहां, कोई व्यक्ति सीमित दायित्व भागीदारी का भागीदार नहीं रहा है (जिसे इसमें इसके पश्चात् "पूर्व भागीदार" कहा गया है) वहां पूर्व भागीदार को, (सीमित दायित्व भागीदारी के साथ संव्यवहार करने वाले किसी व्यक्ति के संबंध में) सीमित दायित्व भागीदारी का तब तक भागीदार माना जाएगा, जब तक –

(क) उस व्यक्ति को यह सूचना नहीं दे दी गई हो कि पूर्व भागीदार सीमित दायित्व भागीदारी का भागीदार नहीं रहा है ; या

(ख) रजिस्ट्रार को यह सूचना नहीं दे दी गई हो कि पूर्व भागीदार सीमित दायित्व भागीदारी का भागीदार नहीं रहा है ।

(4) सीमित दायित्व भागीदारी में किसी भागीदार के न रहने से ही भागीदार की, सीमित दायित्व भागीदारी या अन्य भागीदार के प्रति या किसी अन्य व्यक्ति के प्रति बाध्यता, जो उसके भागीदार रहने के दौरान उपगत हुई हो, निर्मोचित नहीं होती है ।

(5) जहां सीमित दायित्व भागीदारी का कोई भागीदार, भागीदार नहीं रहता है, वहां जब तक सीमित दायित्व भागीदारी करार में अन्यथा उपबंधित न हो, पूर्व भागीदार या पूर्व भागीदार की मृत्यु या दिवालिएपन के परिणामस्वरूप उसके हिस्से का हकदार कोई व्यक्ति सीमित दायित्व भागीदारी से, पूर्व भागीदार के भागीदार न रहने की तारीख को अवधारित सीमित दायित्व भागीदारी को संचित हानियों की कटौती करने के पश्चात् निम्नलिखित प्राप्त करने का हकदार होगा –

(क) सीमित दायित्व भागीदारी में पूर्व भागीदार के वास्तव में किए गए पूंजी अभिदाय के बराबर रकम ;

(ख) सीमित दायित्व भागीदारी के संचित लाभों में हिस्सा लेने का उसका अधिकार ।

(6) पूर्व भागीदार या पूर्व भागीदार की मृत्यु या दिवालिएपन के परिणामस्वरूप उसके हिस्से के हकदार किसी व्यक्ति को सीमित दायित्व भागीदारी के प्रबंध में हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार नहीं होगा ।

25. भागीदारों के परिवर्तन का रजिस्ट्रीकरण – (1) प्रत्येक भागीदार सीमित दायित्व भागीदारी को अपने नाम या पते में परिवर्तन की सूचना, ऐसे परिवर्तन के पंद्रह दिन की अवधि के भीतर देगा ।

(2) सीमित दायित्व भागीदारी, –

(क) जहां कोई व्यक्ति भागीदार बनता है या भागीदार नहीं रहता है, वहां उसके भागीदार बनने या न रहने की तारीख से तीस दिन के भीतर रजिस्ट्रार के पास सूचना फाइल करेगी ; और

(ख) जहां भागीदार के नाम या पते में कोई परिवर्तन है, वहां ऐसे परिवर्तन के तीस दिन के भीतर रजिस्ट्रार के पास सूचना फाइल करेगी ।

(3) उपधारा (2) के अधीन रजिस्ट्रार के पास फाइल की गई सूचना –

(क) ऐसे प्ररूप में और ऐसी फीस के साथ होगी, जो विहित की जाए ;

(ख) सीमित दायित्व भागीदारी के अभिहित भागीदार द्वारा हस्ताक्षरित की जाएगी और ऐसी रीति में अधिप्रमाणित की जाएगी जो विहित की जाए ; और

(ग) यदि वह आने वाले भागीदार के संबंध में है तो उसमें उस भागीदार द्वारा यह कथन होगा कि वह भागीदार बनने की सहमति देता है, जो उसके द्वारा हस्ताक्षरित और ऐसी रीति में जो विहित की जाए, अधिप्रमाणित होगा ।

(4) यदि सीमित दायित्व भागीदारी उपधारा (2) के उपबंधों का उल्लंघन करती है तो सीमित दायित्व भागीदारी और सीमित दायित्व भागीदारी का प्रत्येक अभिहित भागीदार जुर्माने से, जो दो हजार रुपए से कम का नहीं होगा किंतु जो पच्चीस हजार रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा ।

(5) यदि कोई भागीदार उपधारा (1) के उपबंधों का उल्लंघन करता है तो, ऐसा भागीदार जुर्माने से, जो दो हजार रुपए से कम का नहीं होगा किंतु जो पच्चीस हजार रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा ।

(6) कोई व्यक्ति, जो सीमित दायित्व भागीदारी का भागीदार नहीं रहा है, उपधारा (3) में निर्दिष्ट सूचना रजिस्ट्रार के पास स्वयं फाइल कर सकेगा, यदि उसके पास यह विश्वास करने का युक्तियुक्त कारण है कि सीमित दायित्व भागीदारी रजिस्ट्रार के पास सूचना फाइल नहीं कर सकेगी और भागीदार द्वारा फाइल की गई किसी सूचना की दशा में रजिस्ट्रार, सीमित दायित्व भागीदारी से इस आशय की पुष्टि प्राप्त करेगा जब तक कि सीमित दायित्व भागीदारी ने भी ऐसी सूचना फाइल नहीं कर दी हो :

परंतु जहां सीमित दायित्व भागीदारी द्वारा पंद्रह दिन के भीतर कोई पुष्टि नहीं की गई है वहां रजिस्ट्रार इस धारा के अधीन भागीदार न रहने वाले व्यक्ति द्वारा दी गई सूचना को रजिस्टर करेगा ।

अध्याय 5

सीमित दायित्व भागीदारी और भागीदारों के दायित्वों का विस्तार और परिसीमा

26. अभिकर्ता के रूप में भागीदार – किसी सीमित दायित्व भागीदारी का प्रत्येक भागीदार, सीमित दायित्व भागीदारी के कारबार के प्रयोजन के लिए, सीमित दायित्व भागीदारी का अभिकर्ता है न कि अन्य भागीदारों का ।

27. सीमित दायित्व भागीदारी के दायित्व की सीमा – (1) सीमित दायित्व भागीदारी, किसी भागीदार द्वारा किसी व्यक्ति के साथ संव्यवहार करने में की गई किसी बात के लिए आबद्ध नहीं है यदि –

(क) भागीदार को वास्तव में सीमित दायित्व भागीदारी के लिए किसी विशिष्ट कार्य को करने का कोई प्राधिकार नहीं है ; और

(ख) वह व्यक्ति यह जानता है कि उसको कोई प्राधिकार नहीं है या वह यह नहीं जानता है या उसे यह विश्वास है कि वह सीमित दायित्व भागीदारी का भागीदार है ।

(2) सीमित दायित्व भागीदारी दायी है, यदि सीमित दायित्व भागीदारी का कोई भागीदार सीमित दायित्व भागीदारी के कारबार के दौरान उसकी ओर से या उसके प्राधिकार से किसी सदोष कार्य या लोप के परिणामस्वरूप किसी व्यक्ति के प्रति दायी है ।

(3) सीमित दायित्व भागीदारी की कोई बाध्यता, चाहे वह संविदा से उद्भूत हुई हो या अन्यथा, मुख्य रूप से सीमित दायित्व भागीदारी की बाध्यता होगी ।

(4) सीमित दायित्व भागीदारी के दायित्वों की पूर्ति सीमित दायित्व भागीदारी की संपत्ति से की जाएगी ।

28. भागीदार के दायित्व की सीमा – (1) कोई भागीदार धारा 27 की उपधारा (3) में निर्दिष्ट किसी बाध्यता के लिए केवल सीमित दायित्व भागीदारी का भागीदार होने के कारण प्रत्यक्षतः या अप्रत्यक्षतः व्यक्तिगत रूप से दायी नहीं है ।

(2) धारा 27 की उपधारा (3) और इस धारा की उपधारा (1) के उपबंध किसी भागीदार के सदोष कार्य या लोप के लिए उसके व्यक्तिगत दायित्व को प्रभावित नहीं करेंगे, किंतु कोई भागीदार सीमित दायित्व भागीदारी के किसी अन्य भागीदार के सदोष कार्य या लोप के लिए व्यक्तिगत रूप से दायी नहीं होगा ।

29. व्यपदेशन – (1) जो कोई मौखिक या लिखित शब्दों द्वारा या आचरण द्वारा यह व्यपदेशन करता है या जानकर यह व्यपदेशन किया जाने देता है कि वह सीमित दायित्व भागीदारी में भागीदार है, वह किसी ऐसे व्यक्ति के प्रति दायी है जिसने किसी ऐसे व्यपदेशन के भरोसे उस सीमित दायित्व भागीदारी को उधार दिया है चाहे वह व्यक्ति जिसने अपने भागीदार होने का व्यपदेशन किया है या जिसके भागीदार होने का व्यपदेशन किया गया है यह ज्ञान रखता हो या नहीं कि वह व्यपदेशन ऐसे उधार देने वाले व्यक्ति तक पहुंचा है :

परंतु जहां कोई उधार किसी सीमित दायित्व भागीदारी ने ऐसे व्यपदेशन के परिणामस्वरूप प्राप्त किया है वहां सीमित दायित्व भागीदारी ऐसे व्यक्ति के दायित्व पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, जिसने इस प्रकार भागीदार होने के बारे में स्वयं व्यपदेशन किया है या जिसका व्यपदेशन किया था उसके द्वारा प्राप्त उधार की सीमा तक या उस पर व्युत्पन्न किसी वित्तीय फायदे की सीमा तक दायी होगा ।

(2) जहां भागीदार की मृत्यु के पश्चात् कारबार उसी सीमित दायित्व भागीदारी के नाम से चालू रखा जाता है वहां उस नाम का या मृतक भागीदार के नाम का भागरूप उपयोग किए जाते रहना स्वयं में उस भागीदार के विधिक प्रतिनिधि को या उसकी संपदा को सीमित दायित्व, भागीदारी के किसी कार्य के लिए जो उसकी मृत्यु के पश्चात् किया गया हो, दायी नहीं बनाएगा ।

30. कपट की दशा में असीमित दायित्व – (1) किसी सीमित दायित्व भागीदारी या उसके किसी भागीदार द्वारा सीमित दायित्व भागीदारी या किसी अन्य व्यक्ति के लेनदारों के साथ कपटपूर्ण आशय या किसी कपटपूर्ण प्रयोजन के लिए किए गए किसी कार्य की दशा में,

सीमित दायित्व भागीदारी और उन भागीदारों का दायित्व, जिन्होंने लेनदारों के साथ कपटपूर्ण आशय से या किसी कपटपूर्ण प्रयोजन के लिए कार्य किया है, सीमित दायित्व भागीदारी के सभी या किन्हीं ऋणों या अन्य दायित्वों के लिए असीमित होंगे :

परंतु यदि ऐसा कोई कार्य किसी भागीदार द्वारा किया गया है तो सीमित दायित्व भागीदारी तब तक उसी सीमा तक दायी होगी जिस तक भागीदार दायी है जब तक सीमित दायित्व भागीदारी द्वारा यह साबित नहीं कर दिया जाता है कि ऐसा कार्य सीमित दायित्व भागीदारी की जानकारी या प्राधिकार के बिना किया गया था ।

(2) जहां कोई कारबार ऐसे आशय से या ऐसे प्रयोजन के लिए किया जाता है जो उपधारा (1) में उल्लिखित है वहां प्रत्येक व्यक्ति जो पूर्वोक्त रीति में कारबार करने के लिए जानबूझकर पक्षकार था, कारावास से, जिसकी अवधि दो वर्ष तक की हो सकेगी और जुर्माने से, जो पचास हजार रुपए से कम का नहीं होगा किंतु जो पांच लाख रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा ।

(3) जहां किसी सीमित दायित्व भागीदारी या ऐसी सीमित दायित्व भागीदारी के किसी भागीदार या अभिहित भागीदार या किसी कर्मचारी ने सीमित दायित्व भागीदारी के कार्य कपटपूर्ण रीति से किए हैं, वहां ऐसी किन्हीं दांडिक कार्यवाहियों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, जो तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन उद्भूत हों, सीमित दायित्व भागीदारी और ऐसा कोई भागीदार या अभिहित भागीदार या कर्मचारी किसी व्यक्ति को, जिसको ऐसे आचरण के कारण कोई हानि या नुकसानी हुई है, प्रतिकर का संदाय करने के लिए दायी होगा :

परंतु ऐसी सीमित दायित्व भागीदारी तब दायी नहीं होगी, यदि ऐसे किसी भागीदार या अभिहित भागीदार या कर्मचारी ने सीमित दायित्व भागीदारी की जानकारी के बिना कपटपूर्वक कार्य किया है ।

31. निर्णायक कार्य – (1) न्यायालय या अधिकरण, किसी सीमित दायित्व भागीदारी के किसी भागीदार या कर्मचारी के विरुद्ध उद्ग्रहणीय किसी शास्ति को कम कर सकेगा या उसका अधित्यजन कर सकेगा,

यदि उसका यह समाधान हो जाता है कि :-

(क) सीमित दायित्व भागीदारी के ऐसे भागीदार या कर्मचारी ने ऐसी सीमित दायित्व भागीदारी के अन्वेषण के दौरान उपयोगी सूचना उपलब्ध कराई है ; या

(ख) जब किसी भागीदार या कर्मचारी द्वारा दी गई सूचना के आधार पर (चाहे अन्वेषण के दौरान हो या नहीं) सीमित दायित्व भागीदारी, या सीमित दायित्व भागीदारी के किसी भागीदार या कर्मचारी को इस अधिनियम या किसी अन्य अधिनियम के अधीन सिद्धदोष ठहराया जाता है ।

(2) किसी सीमित दायित्व भागीदारी के किसी भागीदार या किसी कर्मचारी को केवल इस कारण सेवोन्मुक्त, पदावनत, निलंबित, धमकाया, उत्पीड़ित न किया जाए या उसके साथ उसकी सीमित दायित्व भागीदारी या नियोजन के निबंधनों और शर्तों के विरुद्ध किसी अन्य रीति में विभेद न किया जाए कि उसने उपधारा (1) के अनुसरण में सूचना प्रदान की है या सूचना उपलब्ध कराई है ।

अध्याय 6

अभिदाय

32. अभिदाय का स्वरूप - (1) किसी भागीदार के अभिदाय में मूर्त, जंगम या स्थावर या अमूर्त संपत्ति या सीमित दायित्व भागीदारी में अन्य फायदे सम्मिलित हो सकेंगे, जिसके अंतर्गत धनराशि, वचनपत्र, नकद या संपत्ति के अभिदाय के लिए अन्य करार और की गई या की जाने वाली सेवाओं के लिए संविदाएं भी हैं ।

(2) प्रत्येक भागीदार के अभिदाय के अधीन धनीय मूल्य का लेखा रखा जाएगा और सीमित दायित्व भागीदारी के लेखाओं में ऐसी रीति में जो विहित की जाए, प्रकट किया जाएगा ।

33. अभिदाय करने की बाध्यता - (1) किसी सीमित दायित्व भागीदारी में धन या अन्य संपत्ति या अन्य फायदे का अभिदाय करने या उसके लिए कोई सेवा करने की किसी भागीदार की बाध्यता सीमित

दायित्व भागीदारी के करार के अनुसार होगी ।

(2) किसी सीमित दायित्व भागीदारी का कोई लेनदार, जो उस करार में वर्णित किसी बाध्यता के आधार पर भागीदारों के बीच किसी समझौते की सूचना के बिना ऋण देता है या अन्यथा कार्य करता है, ऐसे भागीदार के विरुद्ध मूल बाध्यता को प्रवृत्त कर सकेगा ।

अध्याय 7

वित्तीय प्रकटन

34. लेखा बहियों, अन्य अभिलेखों का रखा जाना और उनकी संपरीक्षा, आदि – (1) सीमित दायित्व भागीदारी, अपनी विद्यमानता के प्रत्येक वर्ष के कामकाज के संबंध में, नकदी आधार पर या प्रोद्भवन आधार पर ऐसी समुचित लेखा बहियां, जो विहित की जाएं, और लेखा की दोहरी प्रविष्टि प्रणाली के अनुसार रखेगी और उन्हें ऐसी अवधि के लिए, जो विहित की जाए, अपने रजिस्ट्रीकृत कार्यालय में रखेगी ।

(2) प्रत्येक सीमित दायित्व भागीदारी, प्रत्येक वित्तीय वर्ष के अंत से छह मास की अवधि के भीतर, उक्त वित्तीय वर्ष के अंतिम दिन तक का उक्त वित्तीय वर्ष के लिए लेखा और शोधन क्षमता का विवरण ऐसे प्ररूप में जो विहित किया जाए तैयार करेगी और ऐसा विवरण सीमित दायित्व भागीदारी के अभिहित भागीदारों द्वारा हस्ताक्षरित किया जाएगा ।

(3) प्रत्येक सीमित दायित्व भागीदारी उपधारा (2) के अनुसरण में तैयार किए गए लेखा और शोधन क्षमता का विवरण प्रत्येक वर्ष विहित समय के भीतर ऐसे प्ररूप और रीति में और ऐसी फीस सहित, जो विहित की जाएं, रजिस्ट्रार को फाइल करेगी ।

(4) सीमित दायित्व भागीदारी के लेखाओं की संपरीक्षा ऐसे नियमों के अनुसार, जो विहित किए जाएं, की जाएगी :

परंतु केंद्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, सीमित दायित्व भागीदारी के किसी वर्ग या वर्गों को इस उपधारा की अपेक्षाओं से छूट प्रदान कर सकेगी ।

(5) ऐसी कोई सीमित दायित्व भागीदारी, जो इस धारा के उपबंधों का अनुपालन करने में असफल रहती है, जुर्माने से, जो पच्चीस हजार रुपए से कम का नहीं होगा, किंतु जो पांच लाख रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगी और ऐसी सीमित दायित्व भागीदारी का प्रत्येक अभिहित भागीदार जुर्माने से, जो दस हजार रुपए से कम का नहीं होगा किंतु जो एक लाख रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा ।

35. वार्षिक विवरणी - (1) प्रत्येक सीमित दायित्व भागीदारी, अपने वित्तीय वर्ष के समाप्त होने के साठ दिन के भीतर रजिस्ट्रार के पास ऐसे प्ररूप और रीति में, और ऐसी फीस सहित, जो विहित की जाए, सम्यक् रूप से अधिप्रमाणित एक वार्षिक विवरणी फाइल करेगी ।

(2) ऐसी कोई सीमित दायित्व भागीदारी, जो इस धारा के उपबंधों के अनुपालन में असफल रहती है, जुर्माने से, जो पच्चीस हजार रुपए से कम का नहीं होगा, किंतु जो पांच लाख रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगी ।

(3) यदि सीमित दायित्व भागीदारी इस धारा के उपबंधों का उल्लंघन करती है, तो ऐसी सीमित दायित्व भागीदारी का अभिहित भागीदार, जुर्माने से, जो दस हजार रुपए से कम का नहीं होगा किंतु जो एक लाख रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा ।

36. रजिस्ट्रार द्वारा रखे गए दस्तावेजों का निरीक्षण - प्रत्येक सीमित दायित्व भागीदारी द्वारा रजिस्ट्रार को फाइल किए गए निगमन दस्तावेज, भागीदारों के नाम और उसमें किए गए परिवर्तन, यदि कोई हों, लेखा और शोधन क्षमता विवरण तथा वार्षिक विवरणी किसी व्यक्ति द्वारा ऐसी रीति में और ऐसी फीस के संदाय पर जो विहित की जाए, निरीक्षण के लिए उपलब्ध होंगी ।

37. मिथ्या कथन के लिए शास्ति - यदि इस अधिनियम के किसी उपबंध द्वारा अपेक्षित या उसके प्रयोजनों के लिए किसी विवरणी, विवरण या अन्य दस्तावेज में कोई व्यक्ति ऐसा कथन करता है, -

(क) जो किसी सारवान् विशिष्टि में मिथ्या है और उसे उसके

मिथ्या होने का ज्ञान है ; या

(ख) जो किसी सारवान् तथ्य का सारवान् होने की जानकारी होते हुए लोप करता है,

तो वह, इस अधिनियम में अभिव्यक्त रूप से जैसा अन्यथा उपबंधित है उसके सिवाय, कारावास से, जिसकी अवधि दो वर्ष तक की हो सकेगी, दंडनीय होगा और जुर्माने का भी, जो पांच लाख रुपए तक का हो सकेगा किंतु जो एक लाख रुपए से कम का नहीं होगा, दायी होगा ।

38. सूचना प्राप्त करने की रजिस्ट्रार की शक्ति – (1) ऐसी सूचना प्राप्त करने के उद्देश्य से, जो इस अधिनियम के उपबंधों को क्रियान्वित करने के प्रयोजनों के लिए रजिस्ट्रार आवश्यक समझे, रजिस्ट्रार सीमित दायित्व भागीदारी के वर्तमान से पूर्व भागीदार या अभिहित या कर्मचारी सहित किसी व्यक्ति से युक्तियुक्त अवधि के भीतर किसी प्रश्न का उत्तर देने या कोई घोषणा करने या कोई ब्यौरे या विशिष्टियां प्रदाय करने की लिखित में अपेक्षा कर सकेगा ।

(2) यदि उपधारा (1) में निर्दिष्ट कोई व्यक्ति रजिस्ट्रार द्वारा मांगे गए ऐसे प्रश्न का उत्तर नहीं देता है या ऐसी घोषणा नहीं करता है या ऐसे ब्यौरों या विशिष्टियों का युक्तियुक्त समय या रजिस्ट्रार द्वारा दिए गए समय के भीतर प्रदाय नहीं करता है, या जब रजिस्ट्रार का ऐसे व्यक्ति द्वारा दिए गए उत्तर या घोषणा या उपलब्ध कराए गए ब्यौरे या विशिष्टियों से समाधान नहीं होता है तो रजिस्ट्रार को उस व्यक्ति को उसके समक्ष या किसी निरीक्षक या किसी अन्य लोक अधिकारी के समक्ष, जिसे रजिस्ट्रार अभिहित करे, यथास्थिति, ऐसे प्रश्न का उत्तर देने या घोषणा करने या ऐसे ब्यौरों का प्रदाय करने के लिए उपस्थित होने के लिए समन करने की शक्ति होगी ।

(3) कोई व्यक्ति, जो किसी विधिमान्य कारण के बिना, इस धारा के अधीन किसी समन या रजिस्ट्रार की अध्यपेक्षा का अनुपालन करने में असफल रहता है, जुर्माने से, जो दो हजार रुपए से कम का नहीं होगा, किंतु जो पच्चीस हजार रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा ।

39. अपराधों का शमन – केंद्रीय सरकार इस अधिनियम के अधीन ऐसे किसी अपराध का, जो केवल जुर्माने से दंडनीय है, ऐसे व्यक्ति से, जिसके बारे में युक्तियुक्त रूप से संदेह है कि उसने अपराध किया है ऐसी राशि का, जो अपराध के लिए विहित अधिकतम जुर्माने की रकम तक की हो सकेगी, संग्रहण करके, शमन कर सकेगी ।

40. पुराने अभिलेखों का नष्ट किया जाना – रजिस्ट्रार, भौतिक रूप में इलैक्ट्रानिक रूप में उसके पास फाइल किए गए या रजिस्ट्रीकृत किसी दस्तावेज को ऐसे नियमों के, जो विहित किए जाएं, अनुसार नष्ट कर सकेगा ।

41. विवरणी आदि देने के कर्तव्य का प्रवर्तन – (1) यदि कोई सीमित दायित्व भागीदारी, –

(क) इस अधिनियम या किसी अन्य विधि के किसी उपबंध का, जो किसी रीति में रजिस्ट्रार के पास कोई विवरणी, लेखा या अन्य दस्तावेज फाइल करने या किसी विषय की उसको सूचना देने की अपेक्षा करता है, अनुपालन करने में व्यतिक्रम करती है ; या

(ख) किसी दस्तावेज को संशोधित करने या पूरा करने और पुनः प्रस्तुत करने या नए सिरे से कोई दस्तावेज प्रस्तुत करने के रजिस्ट्रार के किसी अनुरोध का अनुपालन करने में व्यतिक्रम करती है,

और सीमित दायित्व भागीदारी पर उससे ऐसा करने की अपेक्षा करने वाली सूचना की तामील के पश्चात् चौदह दिन के भीतर व्यतिक्रम को दूर करने में असफल रहती है, तो अधिकरण, रजिस्ट्रार द्वारा आवेदन पर, उस सीमित दायित्व भागीदारी या उसके अभिहित भागीदारों या उसके भागीदारों को यह निदेश करते हुए आदेश कर सकेगा कि वे ऐसे समय के भीतर, जो आदेश में विनिर्दिष्ट है, व्यतिक्रम को दूर करें ।

(2) ऐसे किसी आदेश में यह उपबंध हो सकेगा कि आवेदन के सभी खर्चे और उसके आनुषंगिक व्यय उस सीमित दायित्व भागीदारी द्वारा वहन किए जाएंगे ।

(3) इस धारा की कोई बात, इस धारा में निर्दिष्ट किसी व्यतिक्रम

के संबंध में उस सीमित दायित्व भागीदारी पर शास्ति अधिरोपित करने वाले इस अधिनियम या किसी अन्य विधि के किसी अन्य उपबंध के प्रवर्तन को सीमित नहीं करेगी ।

अध्याय 8

भागीदारी अधिकारों का समनुदेशन और अंतरण

42. भागीदार का अंतरणीय हित – (1) सीमित दायित्व भागीदारी करार के अनुसार सीमित दायित्व भागीदारी के लाभ और हानियों में हिस्सा बंटाने और वितरण प्राप्त करने के भागीदार के अधिकार पूर्णतः या भागतः अंतरणीय हैं ।

(2) उपधारा (1) के अनुसरण में किसी भागीदार द्वारा किसी अधिकार के अंतरण से ही सीमित दायित्व भागीदारी के भागीदार का असहयोजन या विघटन और परिसमापन नहीं हो जाता है ।

(3) इस धारा के अनुसरण में अधिकारों के अंतरण से ही अंतरिती या समनुदेशिती सीमित दायित्व भागीदारी के प्रबंध में भाग लेने या उसके क्रियाकलापों को संचालित करने का या सीमित दायित्व भागीदारी के संव्यवहारों से संबंधित सूचना तक पहुंच प्राप्त करने का हकदार नहीं बन जाता है ।

अध्याय 9

अन्वेषण

43. सीमित दायित्व भागीदारी के कामकाज का अन्वेषण – (1) केंद्रीय सरकार, सीमित दायित्व भागीदारी के कामकाज का अन्वेषण करने और उस पर ऐसी रीति में, जो वह निदेश दे, रिपोर्ट देने के लिए निरीक्षक के रूप में एक या अधिक सक्षम व्यक्तियों को नियुक्त करेगी, यदि –

(क) अधिकरण, या तो स्वःप्रेरणा से या सीमित दायित्व भागीदारी के भागीदारों की कुल संख्या के एक बटा पांच से अन्यून भागीदारों से प्राप्त किसी आवेदन पर, आदेश द्वारा यह घोषणा

करता है कि सीमित दायित्व भागीदारी के कामकाज का अन्वेषण किया जाना चाहिए ; या

(ख) कोई न्यायालय, आदेश द्वारा यह घोषणा करता है कि किसी सीमित दायित्व भागीदारी के कामकाज का अन्वेषण किया जाना चाहिए ।

(2) केंद्रीय सरकार किसी सीमित दायित्व भागीदारी के कामकाज का अन्वेषण करने और उस पर ऐसी रीति में जो वह निदेश दे, रिपोर्ट देने के लिए, निरीक्षक के रूप में एक या अधिक सक्षम व्यक्तियों को नियुक्त कर सकेगी ।

(3) उपधारा (2) के अनुसरण में निरीक्षक की नियुक्ति निम्नलिखित दशा में की जा सकेगी, –

(क) यदि सीमित दायित्व भागीदारी के भागीदारों की कुल संख्या के एक बटा पांच से अन्यून भागीदार समर्थक साक्ष्य और ऐसी प्रतिभूति रकम के साथ, जो विहित की जाएं, आवेदन करते हैं ; या

(ख) यदि सीमित दायित्व भागीदारी ऐसा आवेदन करती है कि सीमित दायित्व भागीदारी के कामकाज का अन्वेषण किया जाना चाहिए ; या

(ग) यदि केंद्रीय सरकार की राय में, यह सुझाव देने वाली परिस्थितियां हैं कि –

(i) सीमित दायित्व भागीदारी का कारबार उसके लेनदारों, भागीदारों या किसी अन्य व्यक्ति को कपट वंचित करने के आशय से या अन्यथा किसी कपटपूर्ण या विधिविरुद्ध प्रयोजन के लिए या उसके किन्हीं या किसी भागीदार के प्रतिकूल किसी अन्यायपूर्ण या अनुचित रीति में किया जा रहा है या किया गया है या सीमित दायित्व भागीदारी किसी कपटपूर्ण या विधिविरुद्ध प्रयोजन के लिए बनाई गई थी ; या

(ii) सीमित दायित्व भागीदारी के कामकाज इस अधिनियम के उपबंधों के अनुसार नहीं किए जा रहे हैं ; या

(iii) रजिस्ट्रार या किसी अन्य अन्वेषण या विनियामक अभिकरण की रिपोर्ट प्राप्त होने पर, पर्याप्त कारण हैं कि सीमित दायित्व भागीदारी के कामकाज का अन्वेषण किया जाना चाहिए ।

44. अन्वेषण के लिए भागीदारों द्वारा आवेदन – धारा 43 की उपधारा (1) के खंड (क) के अधीन सीमित दायित्व भागीदारी के भागीदारों द्वारा आवेदन के समर्थन में ऐसा साक्ष्य दिया जाएगा जो अधिकरण यह दर्शित करने के प्रयोजन के लिए अपेक्षा करे कि आवेदकों के पास अन्वेषण की अपेक्षा करने के लिए ठोस कारण है, और केंद्रीय सरकार, निरीक्षक को नियुक्त करने से पूर्व, आवेदकों से अन्वेषण के खर्चों के संदाय के लिए ऐसी राशि की, जो विहित की जाए, प्रतिभूति देने की अपेक्षा कर सकेगी ।

45. फर्म, निगम निकाय या संगम को निरीक्षक के रूप में नियुक्त न किया जाना – किसी फर्म, निगम निकाय या अन्य संगम को निरीक्षक के रूप में नियुक्त नहीं किया जाएगा ।

46. संबंधित अस्तित्वों आदि के कामकाज का अन्वेषण करने की निरीक्षकों की शक्ति – (1) यदि सीमित दायित्व भागीदारी के कामकाज का अन्वेषण करने के लिए केंद्रीय सरकार द्वारा नियुक्त निरीक्षक अपने अन्वेषण के प्रयोजनों के लिए किसी ऐसे अस्तित्व के कामकाज का अन्वेषण करना भी आवश्यक समझता है, जो सीमित दायित्व भागीदारी या सीमित दायित्व भागीदारी के किसी वर्तमान या पूर्व भागीदार या अभिहित भागीदार से पूर्व में सहयोजित रहा है या वर्तमान में सहयोजित है तो निरीक्षक को ऐसा करने की शक्ति होगी और अन्य अस्तित्व या भागीदार या अभिहित भागीदार के कामकाज की, जहां तक वह यह समझता है कि उसके अन्वेषण के परिणाम सीमित दायित्व भागीदारी के कामकाज के अन्वेषण से सुसंगत हैं, रिपोर्ट करेगा ।

(2) उपधारा (1) में निर्दिष्ट किसी अस्तित्व या भागीदार या अभिहित भागीदार की दशा में, निरीक्षक, केंद्रीय सरकार का पूर्व अनुमोदन प्राप्त किए बिना उसके कामकाज का अन्वेषण करने और उस

पर रिपोर्ट देने की अपनी शक्ति का प्रयोग नहीं करेगा :

परंतु इस उपधारा के अधीन अनुमोदन प्रदान करने से पूर्व, केंद्रीय सरकार, अस्तित्व या भागीदार या अभिहित भागीदार को यह हेतुक दर्शित करने के लिए कि ऐसा अनुमोदन क्यों नहीं प्रदान किया जाना चाहिए, युक्तियुक्त अवसर देगी ।

47. दस्तावेजों और साक्ष्य का प्रस्तुत किया जाना – (1) सीमित दायित्व भागीदारी के अभिहित भागीदार और भागीदारों का यह कर्तव्य होगा कि –

(क) वे, यथास्थिति, सीमित दायित्व भागीदारी या अन्य अस्तित्व के या उससे संबंधित सभी बहियों और कागजपत्रों को, जो उनकी अभिरक्षा में या शक्ति के अधीन हैं, केंद्रीय सरकार के पूर्व अनुमोदन से निरीक्षक या इस निमित्त उसके द्वारा प्राधिकृत किसी व्यक्ति के समक्ष प्रस्तुत करें ; और

(ख) अन्वेषण के संबंध में ऐसी सभी सहायता निरीक्षक को दें, जिसे देने में वे युक्तियुक्त रूप से समर्थ हैं ।

(2) निरीक्षक, केंद्रीय सरकार के पूर्व अनुमोदन से, उपधारा (1) में निर्दिष्ट अस्तित्व से भिन्न किसी अस्तित्व से, उस सरकार के पूर्व अनुमोदन से उसके या इस निमित्त उसके द्वारा प्राधिकृत किसी व्यक्ति को ऐसी सूचना देने या उसके समक्ष ऐसी बहियों और कागजपत्रों को प्रस्तुत करने की अपेक्षा कर सकेगा, जो वह आवश्यक समझे, यदि ऐसी सूचना देना या ऐसी बहियों या कागजपत्रों को प्रस्तुत करना उसके अन्वेषण के प्रयोजनों के लिए सुसंगत या आवश्यक है ।

(3) निरीक्षक, उपधारा (1) या उपधारा (2) के अधीन प्रस्तुत किन्हीं बहियों और कागजपत्रों को तीस दिन के लिए अपनी अभिरक्षा में रख सकेगा और तत्पश्चात् उन्हें सीमित दायित्व भागीदारी, अन्य अस्तित्व या व्यष्टि को, जिसके द्वारा या जिसकी ओर से बहियां और कागजपत्र प्रस्तुत किए गए हैं, लौटा देगा :

परंतु निरीक्षक बहियों और कागजपत्रों को, यदि उनकी पुनः

आवश्यकता पड़े, मंगा सकेगा :

परंतु यह और कि यदि उपधारा (2) के अधीन प्रस्तुत बहियों और कागजपत्रों की अधिप्रमाणित प्रतियां निरीक्षक को प्रस्तुत की जाती हैं, तो वह संबंधित अस्तित्व या व्यक्ति को बहियां और कागजपत्र लौटा देगा ।

(4) कोई निरीक्षक शपथ पर निम्नलिखित की जांच कर सकेगा –

(क) उपधारा (1) में निर्दिष्ट व्यक्तियों में से कोई व्यक्ति ;

(ख) केंद्रीय सरकार के पूर्व अनुमोदन से, यथास्थिति, सीमित दायित्व भागीदारी या किसी अन्य अस्तित्व के कामकाज से संबंधित कोई अन्य व्यक्ति ; और

(ग) तद्नुसार शपथ दिला सकेगा और उस प्रयोजन के लिए उन व्यक्तियों में से किसी व्यक्ति से, अपने समक्ष व्यक्तिगत रूप से उपस्थित होने की अपेक्षा कर सकेगा ।

(5) यदि कोई व्यक्ति युक्तियुक्त कारण के बिना –

(क) केंद्रीय सरकार के पूर्व अनुमोदन से निरीक्षक या इस निमित्त उसके द्वारा प्राधिकृत किसी अन्य व्यक्ति के समक्ष कोई ऐसी बही या कागजपत्र प्रस्तुत करने में, जिसे प्रस्तुत करना उपधारा (1) या उपधारा (2) के अधीन उसका कर्तव्य है ; या

(ख) ऐसी कोई जानकारी देने में, जिसका दिया जाना उपधारा (2) के अधीन उसका कर्तव्य है ;

(ग) निरीक्षक के समक्ष तब व्यक्तिगत रूप से उपस्थित होने में, जब उपधारा (4) के अधीन ऐसा करने की अपेक्षा की जाए या किसी प्रश्न का उत्तर देने में, जो उस उपधारा के अनुसरण में निरीक्षक द्वारा पूछा जाए ; या

(घ) किसी जांच के टिप्पणों पर हस्ताक्षर करने में,

असफल रहता है या उससे इनकार करता है, तो वह जुर्माने से, जो दो हजार रुपए से कम का नहीं होगा किंतु जो पच्चीस हजार रुपए तक का हो सकेगा और अतिरिक्त जुर्माने से, जो पहले दिन के पश्चात्, जिसके

पश्चात् व्यतिक्रम जारी रहता है, प्रत्येक दिन के लिए पचास रुपए से कम का नहीं होगा किंतु जो पांच सौ रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा ।

(6) उपधारा (4) के अधीन किसी जांच के टिप्पण लेखबद्ध किए जाएंगे और उस व्यक्ति द्वारा हस्ताक्षरित किए जाएंगे, जिसकी शपथ पर परीक्षा की गई थी और ऐसे टिप्पणों की एक प्रति उस व्यक्ति को दी जाएगी, जिसकी इस प्रकार शपथ पर परीक्षा की गई है तथा उसके पश्चात् उसे निरीक्षक द्वारा साक्ष्य के रूप में प्रयोग किया जाएगा ।

48. निरीक्षक द्वारा दस्तावेजों का अभिग्रहण – (1) जहां, अन्वेषण के दौरान, निरीक्षक के पास यह विश्वास करने का युक्तियुक्त आधार है कि सीमित दायित्व भागीदारी या अन्य अस्तित्व या ऐसी सीमित दायित्व भागीदारी के भागीदार या अभिहित भागीदार की या उससे संबंधित बहियों और कागजपत्रों को नष्ट, विरूपित, उनमें फेरफार, मिथ्याकृत किया जा सकता है या उन्हें छिपाया जा सकता है, तो निरीक्षक, यथास्थिति, उस प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट या महानगर मजिस्ट्रेट को, जिसकी अधिकारिता है, ऐसी बहियों और कागजपत्रों को अभिग्रहण करने के आदेश के लिए आवेदन कर सकेगा ।

(2) मजिस्ट्रेट, आवेदन पर विचार करने और निरीक्षक की सुनवाई करने के पश्चात्, यदि आवश्यक हो, आदेश द्वारा निरीक्षक को –

(क) उस स्थान या स्थानों में, जहां ऐसी बहियां और कागजपत्र रखे गए हैं, ऐसी सहायता सहित, जो अपेक्षित हो, प्रवेश करने ;

(ख) आदेश में विनिर्दिष्ट रीति में उस स्थान या उन स्थानों की तलाशी लेने ;

(ग) उन बहियों और कागजपत्रों का, जिन्हें निरीक्षक अपने अन्वेषण के प्रयोजनों के लिए आवश्यक समझे, अभिग्रहण करने,

के लिए प्राधिकृत कर सकेगा ।

(3) निरीक्षक, इस धारा के अधीन अभिगृहीत बहियों और

कागजपत्रों को अन्वेषण के निष्कर्ष के अपश्चात् की ऐसी अवधि के लिए, जो वह आवश्यक समझे, अपनी अभिरक्षा में रखेगा और तत्पश्चात् उन्हें संबंधित अस्तित्व या व्यक्ति को, जिसकी अभिरक्षा या शक्ति से वे अभिगृहीत किए गए थे, लौटा देगा और ऐसे लौटाए जाने की सूचना मजिस्ट्रेट को देगा :

परंतु बहियां और कागजपत्र छह मास से अधिक की लगातार अवधि के लिए अभिगृहीत नहीं रखे जाएंगे :

परंतु यह और कि निरीक्षक, यथापूर्वोक्त ऐसी बहियों और कागजपत्रों को लौटाने से पूर्व, उन पर या उनके किसी भाग पर पहचान चिह्न लगा सकेगा ।

(4) इस धारा में यथा अन्यथा उपबंधित के सिवाय, इस धारा के अधीन की गई प्रत्येक तलाशी या अभिग्रहण, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) के अधीन की गई तलाशियों या अभिग्रहणों से संबंधित उस संहिता के उपबंधों के अनुसार किया जाएगा ।

49. निरीक्षक की रिपोर्ट – (1) निरीक्षक, और यदि केंद्रीय सरकार द्वारा ऐसा निदेश दिया जाए, उस सरकार को अंतरिम रिपोर्ट देंगे और अन्वेषण के निष्कर्ष पर केंद्रीय सरकार को अंतिम रिपोर्ट देंगे और ऐसी रिपोर्ट लिखित में या मुद्रित रूप में होगी, जैसा केंद्रीय सरकार निदेश दे ।

(2) केंद्रीय सरकार, –

(क) निरीक्षकों द्वारा दी गई किसी रिपोर्ट (अंतरिम रिपोर्ट से भिन्न) की एक प्रति सीमित दायित्व भागीदारी को, उसके रजिस्ट्रीकृत कार्यालय पर और रिपोर्ट में कार्रवाई किए गए या उससे संबंधित किसी अन्य अस्तित्व या व्यक्ति को भी भेजेगी ;

(ख) यदि, वह ठीक समझे, तो उसकी एक प्रति रिपोर्ट से संबंधित या उससे प्रभावित किसी व्यक्ति या अस्तित्व को, अनुरोध पर और विहित फीस के संदाय पर दे सकेगी ।

50. अभियोजन – यदि, धारा 49 के अधीन रिपोर्ट से, केंद्रीय सरकार को यह प्रतीत होता है कि सीमित दायित्व भागीदारी के संबंध में

या किसी अन्य अस्तित्व के संबंध में, जिसके कामकाज का अन्वेषण किया गया है, कोई व्यक्ति किसी ऐसे अपराध के लिए दोषी रहा है, जिसके लिए वह दायी है, तो केंद्रीय सरकार, उस अपराध के लिए ऐसे व्यक्ति का अभियोजन कर सकेगी ; और, यथास्थिति, सीमित दायित्व भागीदारी या अन्य अस्तित्व के सभी भागीदारों, अभिहित भागीदारों और अन्य कर्मचारियों तथा अभिकर्ताओं के अभियोजन के संबंध में, केंद्रीय सरकार को ऐसी सभी सहायता देने का कर्तव्य होगा, जिसे देने के लिए वे युक्तियुक्त रूप से समर्थ हैं ।

51. सीमित दायित्व भागीदारी के परिसमापन के लिए आवेदन – यदि ऐसी सीमित दायित्व भागीदारी इस अधिनियम या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के अधीन परिसमापन किए जाने के लिए दायी है और धारा 49 के अधीन किसी ऐसी रिपोर्ट से केंद्रीय सरकार को यह प्रतीत होता है कि किन्हीं ऐसी अन्य परिस्थितियों के कारण जो धारा 43 की उपधारा (3) के खंड (ग) के उपखंड (i) या उपखंड (ii) में निर्दिष्ट हैं, ऐसा करना समीचीन है, तो केंद्रीय सरकार जब तक कि सीमित दायित्व भागीदारी का अधिकरण द्वारा पहले से परिसमापन नहीं कर दिया जाता है, केंद्रीय सरकार द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत किसी व्यक्ति द्वारा, इस आधार पर कि इसका परिसमापन किया जाना न्यायसंगत तथा साम्यापूर्ण है, सीमित दायित्व भागीदारी के परिसमापन के लिए अधिकरण के समक्ष एक याचिका प्रस्तुत कराएगी ।

52. नुकसानी या संपत्ति की वसूली के लिए कार्यवाहियां – यदि धारा 49 के अधीन किसी रिपोर्ट से केंद्रीय सरकार को यह प्रतीत होता है कि लोकहित में सीमित दायित्व भागीदारी या किसी अन्य अस्तित्व द्वारा, जिसके कार्यों का अन्वेषण किया गया है, –

(क) ऐसी सीमित दायित्व भागीदारी या ऐसे अन्य अस्तित्व के संवर्धन या विरचना या प्रबंधन के संबंध में कोई कपट, अपकरण या अन्य कदाचार की बाबत नुकसानियों की वसूली के लिए ; या

(ख) ऐसी सीमित दायित्व भागीदारी या ऐसे अन्य अस्तित्व की किसी संपत्ति की, जिसका दुरुपयोजन किया गया है या जिसे

सदोष प्रतिधारित किया गया है, वसूली के लिए, कार्यवाहियां की जानी चाहिएं, तो केंद्रीय सरकार, उस प्रयोजन के लिए स्वयं कार्यवाही कर सकेगी ।

53. अन्वेषण के खर्चे – (1) इस अधिनियम के अधीन केंद्रीय सरकार द्वारा नियुक्त निरीक्षक द्वारा अन्वेषण के और उसके आनुषंगिक खर्चों को प्रथम बार केंद्रीय सरकार द्वारा चुकाया जाएगा ; किंतु निम्नलिखित व्यक्ति नीचे वर्णित सीमा तक केंद्रीय सरकार को ऐसे खर्चों की बाबत प्रतिपूर्ति करने के लिए दायी होंगे, अर्थात् :–

(क) ऐसे किसी व्यक्ति को, जो अभियोजन पर सिद्धदोष ठहराया गया है या जिसे धारा 52 के आधार पर की गई कार्यवाहियों में किसी संपत्ति की नुकसानी के लिए संदाय करने या बहाली का आदेश दिया गया है उन्हीं कार्यवाहियों में, उस सीमा तक उक्त खर्चों का संदाय करने के लिए आदेश दिया जा सकेगा, जो, यथास्थिति, ऐसे व्यक्ति को सिद्धदोष ठहराने वाले या ऐसी नुकसानियों का संदाय करने का आदेश करने वाले या ऐसी संपत्ति की बहाली करने वाले न्यायालय द्वारा विनिर्दिष्ट किया जाए ;

(ख) कोई अस्तित्व जिसके नाम में यथापूर्वोक्त कार्यवाहियां की जाती हैं, कार्यवाहियों के परिणामस्वरूप उसके द्वारा वसूल की गई किसी धनराशि या संपत्ति की रकम या मूल्य की सीमा तक दायी होगा ;

(ग) जब तक अन्वेषण के परिणामस्वरूप धारा 50 के अनुसरण में कोई अभियोजन संस्थित नहीं किया जाता, तब तक –

(i) निरीक्षक की रिपोर्ट से संबंधित कोई अस्तित्व, भागीदार या अभिहित भागीदार या कोई अन्य व्यक्ति केंद्रीय सरकार को संपूर्ण व्ययों की बाबत प्रतिपूर्ति करने का तब तक और उस सीमा तक दायी होगा जब तक केंद्रीय सरकार अन्यथा निदेश न दे ; और

(ii) जहां धारा 43 की उपधारा (1) के खंड (क) के

उपबंधों के अनुसरण में निरीक्षक की नियुक्ति की गई थी, वहां अन्वेषण के लिए आवेदक, उस सीमा तक, यदि कोई हो, जो केंद्रीय सरकार निर्दिष्ट करे, दायी होंगे ।

(2) ऐसी कोई रकम, जिसके लिए सीमित दायित्व भागीदारी या अन्य अस्तित्व उपधारा (1) के खंड (ख) के आधार पर दायी है, उस खंड में वर्णित धनराशियों या संपत्ति पर पहला प्रभार होगी ।

(3) उन व्ययों की रकम, जिनकी बाबत कोई सीमित दायित्व भागीदारी, अन्य अस्तित्व, कोई भागीदार या अभिहित भागीदार या कोई अन्य व्यक्ति उपधारा (1) के खंड (ग) के उपखंड (i) के अधीन केंद्रीय सरकार को प्रतिपूर्ति करने के लिए दायी है, भू-राजस्व बकाया के रूप में वसूलनीय होगी ।

(4) इस धारा के प्रयोजनों के लिए, केंद्रीय सरकार द्वारा उपगत या धारा 52 के आधार पर की गई कार्यवाहियों के संबंध में उपगत कोई लागत या व्यय, कार्यवाहियों को चलाने के लिए अन्वेषण के व्यय समझे जाएंगे ।

54. निरीक्षक की रिपोर्ट का साक्ष्य होना – इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन नियुक्त किसी निरीक्षक या किन्हीं निरीक्षकों की रिपोर्ट, यदि कोई हो, की ऐसी रीति में जो विहित की जाए, अधिप्रमाणित प्रति, रिपोर्ट में अंतर्विष्ट किसी विषय के संबंध में साक्ष्य के रूप में किसी विधिक कार्यवाही में ग्राह्य होगी ।

क्रमशः ..... (आगामी अंक देखें)

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित और विक्रयार्थ उपलब्ध पाठ्य पुस्तकों की सूची

क्रम सं.	पुस्तक का नाम, लेखक का नाम एवं प्रकाशन वर्ष (संस्करण)	पृष्ठ सं.	पुस्तक की मूल मुद्रित कीमत (रुपयों में)	विशेष छूट के पश्चात् पुस्तक की कीमत (रुपयों में)
1.	अन्तर्राष्ट्रीय विधि के प्रमुख निर्णय – डा. एस. सी. खरे – 1996	273	115	29.00
2.	भारतीय स्वातंत्र्य संग्राम (कालजयी निर्णय) – विधि साहित्य प्रकाशन – 2000	209	225	57.00
3.	विधि शास्त्र – डा. शिवदत्त शर्मा – 2004	501	580	290.00
4.	मानव अधिकार – डा. शिवदत्त शर्मा – 2006	340	120	60.00
5.	निर्णय लेखन – न्या. भगवती प्रसाद बेरी – 2019	190	175	–

अन्य महत्वपूर्ण प्रकाशन

1. विधि शब्दावली	सातवां संस्करण, 2015	कीमत रु. 375/-
2. निर्वाचन विधि निर्देशिका (भाग-1 तथा भाग-2)	नवीनतम संस्करण, 2019	कीमत रु. 1,900/-
3. भारत का संविधान (सिंधी भाषा में)	1998	कीमत रु. 45/-
4. बहुभाषी संविधान शब्दावली	1986	कीमत रु. 12/-

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

Website : www.lawmin.nic.in
Email : am.vsp-molj@gov.in

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 17552/69

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं – **उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका** का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के चयनित क्रमशः सिविल और दांडिक निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका को उपादेय और ज्ञानवर्द्धक बनाने के लिए प्रिवी कौंसिल के निर्णयों को भी समाविष्ट किया जा रहा है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत क्रमशः ₹ 2,100/-, ₹ 1,300/- और ₹ 1,300/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें । साथ ही यह भी अवगत कराया जाता है कि केन्द्रीय अधिनियमों, विधि शब्दावली, विधि पत्रिकाओं और अन्य विधि प्रकाशनों को आन लाइन **https://bharatkosh.gov.in/product/ product** पर प्राप्त किया जा सकता है ।

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

भारतीय विधि संस्थान भवन,

भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105

विक्रेता : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 । दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in